MANISHI 1971-72 G.K.U.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

111066

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

111066

मनीषी

दयानन्द कॉलेज अजमेर पत्रिका

1971-72

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

A Dayanand College Ajmer
Magazine

दयानन्द कॉलेज पत्रिका

संपादक :
डॉ. लक्ष्मीकांत शर्मा (प्रधान)
प्रा. महाराज कृष्ण भारवाह (अंग्रेजी)
प्रा. रमेशचन्द्र शास्त्री (संस्कृत)
डॉ. रामशरणदास गुप्त (हिन्दी)

वार्षिक अंक : ३८

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

1971-72

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सज्जा : 'कलायोग' अजमेर

मुद्रक एवं ब्लॉक निर्माता : वैदिक यन्त्रालय, अजमेर

पत्रिका में दिए गए विचारों और तथ्यों का उत्तरदायित्व
लेखक का है; उनके लिए कॉलेज अधिकारी उत्तरदायी नहीं हैं.

रजिस्ट्रेशन नं. 7333/63

THE DAYANAND COLLEGE MAGAZINE

The following is published in compliance with Rule 8 of the Registration of Newspapers (central) Rules, 1956.

FORM IV

Place of Publication	Ajmer.
Period of Publication	Yearly.
Printer's Name	S. P. Sharma.
Nationality	Indian.
Address	Vedic Yantralaya, Ajmer.
Publisher's Name	Dr. L. K. Sharma.
Nationality	Indian.
Address	Dayanand College, Ajmer.
Editor's Name	Dr. L. K. Sharma
Nationality	Indian.
Address	Dayanand College, Ajmer.

Name and addresses of individuals who own the Journal and partners or shareholders holding more than one percent of the total capital.

DAYANAND COLLEGE, AJMER.

I Dr. L. K. Sharma hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

Sd/-
L. K. Sharma
Publisher.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी–विभाग

अनुक्रमणिका

बगला देश : तीन प्रतिक्रियाएं : राम जैसवाल : १
पृथ्वीराज कृत 'वेलि' का अनुभूति सौष्ठव :
रामशरणदास गुप्त : ४
स्मृति की दीपशिखा : चमेली मिश्र : ११
साहित्यानुशीलन में शैली-तत्व का उपयोग एवं महत्त्व :
लक्ष्मीकांत शर्मा : १४
उद्‌बोधन : लालाराम गुप्त : २१
शिकायतनामा : प्रहलाद राय सोमानी : २२
सूर्य की आत्म-हत्या के लिए : अशोक सक्सेना : २६
कविता-कामिनी : बुद्धिप्रकाश आर्य : २७
प्रवाही संपत्ति–खनिज तेल : पुरुषोत्तम परांजपे : २९
साहित्यिक आलोचना : उपेन्द्र शर्मा : ३२
निष्ठुर स्वप्न : हरचन्द्र जे. मंगलानी : ३५
अभिनंदन : रमेशचन्द्र शास्त्री : ३६
भारतीय अर्थ व्यवस्था में कृषि का महत्त्व : सत्यनारायण शर्मा : ३७
प्राचार्य वाव्ले—एक संचालक के रूप में : रामपालसिंह वर्मा :३९
दो व्यंग्य : केशव लाख्यानी : ४०
'नदी के द्वीप' में प्रतीक-योजना : कुसुम शर्मा : ४१
खामोशी : अनिल कुमार शर्मा : ४७
मेरे अपने : सुरेश शर्मा : ४८
राजस्थान का आर्थिक विकास : दाऊदयाल शर्मा : ४९
राजस्थान में दयानन्द मिशन : हरीश मोहन सक्सेना : ५३
दो व्यंग्य : आनंद सागर मेहता : ५५
पश्चासीन : प्रमोद कुमार शर्मा : ५६
वर्षा-आगमन संबंधी प्रचलित लोकोक्तियां : नारायणसिंह चौहान : ५८
तीन कोण : आनंद सागर मेहता : ६०
भारतीय क्रांतिकारी आंदोलन के अग्रदूत स्वामी दयानंद सरस्वती : हुकमचन्द स्वर्णकार : ६१
नयी जिन्दगी : बालकिशन वैष्णव : ६४
चलती तस्वीरों की बनती तकदीर : विज्ञान प्रकाश यादव : ६८
दो कविताएं : नरेन्द्र प्रेमी 'राजन' : ७२
वे दोनों : दौलत 'मधुकर' : ७३
तीन कविताएं : रामधन सौनेय : ७६
आंतरिक विस्फोटक इंजन में ईंधन प्रणाली : ओम् प्रकाश गांधी : ७७
कार्य-विवरण : परिषद्-मन्त्री : ८१
प्राध्यापक-मण्डल : ८३

प्राचार्य महोदय की ओर से : (i)
कर्मनिष्ठ श्री दत्तात्रेय वाव्ले : (ii)
संपादकीय : (iv)
और बीड़ी बुझ गई : सदाविजय आर्य : (xi)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वार्षिक चित्रावली

हमारे नवीन प्राचार्य : श्री कृष्णराव वाव्ले
श्री दत्तात्रेय वाव्ले : एक कर्मठ व्यक्तित्व
भावी-गौरव, प्रतिभाशाली छात्र
छात्र संघ : दो समारोह
छात्र संघ : कार्यकारिणी
कॉलेज तैराकी दल
पुरस्कार वितरण समारोह
प्रगति के नए चरण

अंग्रेजी–विभाग

in way of an editorial : m. k. marwah ; (i)
the element of solitude in wordsworths' poetry : m. s. rikhy : 1
guru gobind singh : a national hero : amarvir singh : 3
battle of sidi rezegh : srikant : 5
every man is the architect of his own luck : kailash sharma : 7
colour and structures of organic molecule : madhu s. mathur : 8
social work approach to public health : raghunath reddy : 10
matter and antimatter : a. p. bais : 11
on telling lies : upendra sharma : 21
the glory of India : sohan singh chouhan : 27
book worm : anand sagar mehta : 29
news from the campus : m. k. marwah : 30

सस्कृत–विभाग

भारत-प्रशस्ति : रमेशचन्द्र शास्त्री : १
छात्र-जीवनं राष्ट्रस्य आधारः : सन्त लच्छराम-रामस्नेही 'मधुप' : ३
संस्कृत-भाषा भारतीय-गौरवस्य प्रतीकम् अस्ति : मोजीलाल मीना : ४
महाकवि श्री हर्ष : पी आर. एच. मनोज : ५
कालोऽस्ति नायं शयनस्य मान्याः : आकाश-वाण्याः संकलितम् : ७
रस-मञ्जरी : सरिता भारद्वाज : ८
भारती कालिदासस्य : किशनलाल : ९

कलाकृतियाँ : लीनोकट : कार्टून

प्रमोद कुलश्रेष्ठ (प्रभात) एवं स्विन्दरसिंह (युद्ध)
रामबाबू माथुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनीषी

111066

॥ ओ३म् ॥

प्राचार्य महोदय की ओर से

"यह संस्था ऋषि दयानन्द के नाम पर स्थापित है अतः हम सब का कर्त्तव्य है कि उनके आदर्शों अर्थात् भारतीय संस्कृति और राष्ट्रीयता के प्रति प्रबल आस्था रखते हुए क्रियाशील रहें.

विद्यार्थी जीवन, एक महत्त्वपूर्ण कालांश है, यदि इस अवधि में अपेक्षित अध्ययन व श्रम कर लिया जाए तो जीवन का आधार दृढ़ व सशक्त बन जाता है और विद्यार्थी का भविष्य स्वतः निर्मित हो जाता है. हमारे कॉलेज के विद्यार्थी इस बात के महत्त्व को समझकर पूर्ववत् ही अध्ययनरत रहकर अपने लक्ष्य को निश्चित कालावधि में प्राप्त कर जीवन में सफलता प्राप्त करें यही कामना है.

विद्यार्थी समुदाय की सर्वांगीण प्रगति में, मैं एवं मेरे साथी समस्त अध्यापकगण सदा ही अपेक्षित सहयोग व पथ प्रदर्शन करते रहेंगे, छात्र और अध्यापक, दोनों मिलकर मानवीय आधारों पर राष्ट्र के नवनिर्माण में योग दे सकते हैं तदर्थ छात्रों के लिए अध्यापकों का स्नेह तथा छात्रों की ओर से अध्यापकों के प्रति आदर भाव होना अत्यंत आवश्यक है.

मुझे आशा है कि कॉलेज के अध्यापक एवं छात्र लक्ष्य की प्राप्ति में निरन्तर प्रयत्न करते रहेंगे.

मेरी ओर से अपने कर्त्तव्य को पूरा करने का यथा शक्ति प्रयत्न रहेगा."

— ई. टी. वाघेला.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर्मनिष्ठ

श्री दत्तात्रेय वाब्ले

□ □

अभिनन्दनीय

कृतित्व

हे कर्ममय जीवन के प्रतीक !

ये रमणीय पुष्प-गुच्छ, लता-गुल्म, हरितदूर्वादल, हरसिंगार की गगन भेदी वृक्ष-पंक्ति, घन-चिक्कन शीतल छाया, प्रखर केक्टस, उर्वर शस्य-क्षेत्र, पोषक पशु, तरंगायित तरण-ताल, समृद्ध पुस्तकालय, विस्तृत प्रांगण, व्यवस्थित छात्रावास, सुष्ठु अध्यापक-निवास, प्रस्तर निर्मित भव्य भवन, उसमें अध्ययन करता चचल छात्र-समूह, कार्यरत सेवक एवं अध्यापक-गण और इन सब में कंपन उत्पन्न करती रेलगाड़ी मानो स्वगति द्वारा आपके कर्ममय गतिशील जीवन की गाथा प्रतिदिन कहती जाती है ।

हे शिक्षक—हितैषी एवं प्रशासक !

रह-रह कर बज उठने वाली विद्युत् घंटियां, नियत कालांतर के पश्चात् निनादित होता सघन घंट-नाद, पुस्तकालय में स्थित असंख्य पुस्तकें, प्रांगण में विचरते विद्यार्थी, कक्षाओं में अध्यापन-रत प्राध्यापकों का सरस्वती-प्रवाह तथा तेजी से बढ़ते आय-व्यय के आंकड़े, लिपिकों की फाइलें तथा टक टक करते टंकण यंत्र मानो आपकी प्रशासनिक क्षमता, दूरदर्शिता, निर्भीकता, कुशलता और सफल अध्यापन की गाथा टंकित कर रहे हैं ।

हे धीरोदात्त कुशल नायक !

तारागढ़ के उच्च शिखरों को हिलाती-आती प्रबल झंझावात, घनघोर गर्जन कर तांडव करती चपला, प्यासी धरती पर प्लावन लाते जलद मानो आपके संघर्षमय जीवन की कठोर कथा कहते हैं, साइकिल स्टैंड पर चुपचाप खड़ीं सहस्राधिक साइकिलें मानो कर्मवीर पं. जियालाल जी के स्वप्नों को साकार करने वाले धीर व्यक्ति की संघर्षज क्षमता की कहानी कहती हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हे स्मरणीय आचार्य—प्रवर !

कलात्मक सौंदर्य से युक्त, कॉलेज का रिक्त सभा-भवन और उसमें रखीं शताधिक आसनिकाएँ मानो आपके अवकाश-ग्रहण से उत्पन्न उस रिक्तता का, जिसकी पूर्ति संभवत: दीर्घ अंतराल तक संभव न होगी, करुण गीत रचने में ध्यानस्थ हैं।

हे कीर्ति—लब्ध सुव्यक्तित्व !

इन विशाल भव्य भवनों का प्रत्येक प्रस्तर मानो आपकी सामाजिक गतिविधियों का, कुशल वक्तृत्वता, चिंतन-प्रसूत विचारधारा, प्रगतिशीलता, प्रभावशाली लेखन एवं स्पष्ट राजनीतिक दर्शन का इतिहास अपने में छिपाए खड़ा है. अत: आपके कर्म-संकुल जीवन का एक-एक कर्म हमें आपके सामाजिक अभिनन्दन की प्रेरणा दे रहा है. उपराष्ट्रपति की अध्यक्षता में प्राप्त अपूर्व अभिनन्दन के उपरांत भी हम प्राध्यापक आपके प्रति हार्दिक सम्मान प्रगट करते हैं तथा आशा करते हैं कि आपका अनुभवी मार्ग प्रदर्शन हमें प्राप्त होता रहेगा. जिससे यह संस्था निरंतर प्रगति पथ पर अग्रसर रहेगी, साथ ही निवेदन है कि आप अजमेर में विश्वविद्यालय- स्थापना की योजना को साकार कर, अजमेर-शिक्षा-क्षेत्र को नव्य चेतना की पराभूमि पर प्रतिष्ठित करें।

ये हरसिंगार के (शब्द रूप) पुष्प हमारे हृदय की भावनाओं को सदा व्यक्त करते रहेंगे।

दयानन्द कॉलेज, अजमेर के प्राध्यापक वृंद की समस्त शुभाशंसाओंसह अभिनन्दन !

[४ अप्रेल १९७२ को भेंट किया गया]

□□□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादकीय

१. एक नये राष्ट्र का जन्म :

भारतीय उपमहाद्वीप में एक नये राष्ट्र का अभ्युदय हुआ है : बांगला देश अथवा सोनार बांगला ! अब तक इस नये राष्ट्र को, संसार के अधिकांश राष्ट्रों के द्वारा मान्यता प्राप्त हो गई है, हो रही है, और जो बचे-खुचे राष्ट्र हैं, उन्हें भी अन्ततः इस राष्ट्र को मान्यता देनी होगी। उगते हुए सूर्य को सभी नमस्कार करते हैं, उसके अस्तित्व को अस्वीकारना, अपने अस्तित्व को खतरे में डालना है। विश्व के इतिहास में इस राष्ट्र का जन्म, कुछ नये तथ्यों की उद्घोषणा करता है : (१) किसी राष्ट्र की संस्कृति को और उसकी स्वायत्तता को बन्दूक की नोक से कुचला नहीं जा सकता, वे एक-न-एक दिन अपने आपको साकार करेंगी ही ! (२) विनाश की ताकतों की तुलना में सृजन की शक्तियाँ अधिक बलवान होती हैं। अल्प समय में ही क्षत-विक्षत बंगला देश का एक नये राष्ट्र के रूप में उठ खड़ा होना, इसका जीता-जागता प्रमाण है। (३) बंगला-देश के संग्राम से उसके निकटतम पड़ौसी भारत में भी, आत्म-विश्वास एवं आत्मनिर्भरता का बोध हुआ है।

१९७२ के वर्ष को आत्म निर्भरता का वर्ष कहा जा रहा है, हम इस भावना को कहाँ तक साकार कर पाते हैं, इसी पर हमारा भविष्य निर्भर करता है। राजनीति के नारे लगाना आसान है, पर उन पर आचरण करना, कठिनतम अग्नि-परीक्षा में से निकलना है। आने वाले वर्ष बतायेंगे कि इस अग्नि परीक्षा में हम कहाँ तक सफल हुये ! बहरहाल, यही कहा जा सकता है कि आसार अच्छे दिखायी दे रहे हैं और जिस रूप में प्रधान मंत्री के हाथों को, स्पष्ट बहुमत देकर, भारतीय जनता ने मजबूत किया है, उससे इस भावना का जगना स्वाभाविक है कि निकट भविष्य में ही हम अपनी बहुत-सी बुनियादी समस्याओं को हल कर सकेंगे।

२. राष्ट्र के बढ़ते हुये चरण :

अपने ही साधनों पर निर्भर रहते हुए, हम आगे बढ़ सकेंगे, इससे हमारे राष्ट्र के चिन्तन और क्रियान्वयन में एक नये अध्याय का श्रीगणेश होगा। "सत्तारूढ़ दल का भविष्य इस बात पर निर्भर करता है कि वह राष्ट्र की मूलभूत समस्याओं को कितनी जल्दी और प्रभावी रूप से हल कर पाता है।" गरीबी के हटाने और समाजवाद के लाने में जिन आवश्यक कदमों को उठाया जाना चाहिए, उनकी शुरुआत हो गई है। प्रिवीपर्स का उन्मूलन, उत्पादन के साधनों का सामाजीकरण अथवा राष्ट्रीयकरण, शहरी सम्पत्ति की अधिकतम सीमा का निर्धारण, आदि-आदि कुछ ऐसे कदम हैं, जिनसे राष्ट्र की आर्थिक भित्ति को मजबूत करने में भरपूर सहयोग मिलेगा। इन समस्त योजनाओं के क्रियान्वयन के लिए हमें स्वच्छ प्रशासन की आवश्यकता है। वर्तमान ढांचे को देखते हुए, हमें सन्देह है कि हम अपने लक्ष्यों को प्राप्त कर सकेंगे। देश में आज एक नयी हवा चल रही है, इससे आशा बंधती है कि हम अपनी मूलभूत समस्याओं को समयबद्ध योजनाओं के द्वारा क्रियान्वित कर सकेंगे। हमारा भविष्य इसी बात पर निर्भर करता है कि हम अपनी कथनी और करनी में कितनी एकता लाते हैं और कितने दृढ़ आत्म-विश्वास एवं निष्ठा के साथ प्रगति के पथ पर निरन्तर अग्रसर होते हैं। "राजनीति में नये चेहरों का आगमन एवं युवा-शक्ति का स्वीकरण, हममें नये विश्वास को जगाता है।

३. नवीन सत्र : कुछ परिवर्तित रूप :

१९७१-७२ का सत्र कई दृष्टियों से अभूतपूर्व है। युद्ध की आंच के कारण हमारे अनेक कार्यक्रम अस्त-व्यस्त हो गये, फिर भी पाकिस्तान की तरह हम अपनी सामान्य क्रिया-प्रणाली को भुला नहीं बैठे और जिस भी रूप में बन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पड़ा, जैसे भी सम्भव हो सका, हमने अपने लक्ष्यों को पूर्ण करने की यथा-सम्भव चेष्टा की। हमारे शिक्षणालयों में पढ़ाई एक दिन के लिए भी बन्द नहीं हुई, हमारे कारखाने रात-दिन धुआं उगलते रहे और देश के उत्पादन को, न केवल पूर्ववत ही रखा, बल्कि अपनी सामर्थ्य से अधिक उत्पादन कर, हमने अपने राष्ट्र की आवश्यकताओं की परिपूर्ति, दक्षता के साथ सम्पन्न की, यह निश्चय ही एक गौरव की बात है। युद्ध-काल की इसी अनिवार्यता को और दृढ़ मनोबल को हम यदि आगे भी कायम रख सके, तो निश्चय ही नयी पीढ़ी का भविष्य उज्ज्वल है और हम यह कह सकने की स्थिति में होंगे कि अब भारत एक वयस्क राष्ट्र है, जो अपने दायित्व को समझता है और अपने लक्ष्यों को पूर्ण निष्ठा के साथ क्रियान्वित करने में किसी से पीछे नहीं है।

गत वर्ष कॉलेज की रजत जयन्ती मनाई गई और तत्कालीन प्राचार्य महोदय को उनकी निरुपम सेवाओं के उपलक्ष्य में अभिनन्दन-ग्रंथ भेंट किया गया। अपने पच्चीस साल के सुदृढ़ प्रशासन-काल में प्राचार्य दत्तात्रेय वाब्ले ने, महाविद्यालय को एक सुदृढ़-शिला प्रदान की है। अतः अब महाविद्यालय ने अपने सुनिश्चित व्यक्तित्व का विकास कर लिया है और आगे भी वह इसी पथ पर बढ़ता रहेगा। वर्तमान प्राचार्य श्री कृष्णराव वाब्ले अपने ज्येष्ठ भ्राता के पथ पर अग्रसर हो रहे हैं, इससे यही विश्वास जगता है कि कालेज की रीति-नीति में कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ है और वह पहले ही की तरह अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए नये उत्साह के साथ संलग्न है। समय के परिवर्तन के साथ, क्रिया-प्रणाली में भी कुछ परिवर्तन आया है और अब अधिक सहजता के साथ महाविद्यालय अपने प्रगति-पथ पर गतिमान है। भूतपूर्व प्राचार्य के तेजोदीप्त व्यक्तित्व ने महाविद्यालय के जीवन पर एक अमिट छाप छोड़ दी है। इसीलिए भावी इतिहासकार, विगत पच्चीस वर्ष के कॉलेज-जीवन को 'दत्तात्रेय-युग' के रूप में अभिहित करेगा।

४. दत्तात्रेय-युग की उपलब्धियाँ :

इस युग में कॉलेज ने सर्वांगीण प्रगति की और इन्टर कक्षाओं से आरम्भ होकर स्नातकोत्तर कक्षाओं तक उसका विकास हुआ। वर्तमान में छह विभिन्न संकायों में, कालेज एक लघु विश्व-विद्यालय के अनुरूप विकास कर रहा है। कला, वाणिज्य, विज्ञान, कृषि, शिक्षा एव विधि संकाय——महाविद्यालय के वैविध्यपूर्ण विराट व्यक्तित्व के अभिन्न अंग हैं। सहायता प्राप्त महाविद्यालय के लिए यह 'दत्तात्रेय-युग' की महानतम उपब्धियाँ हैं। दस विषयों में स्नातकोत्तर कक्षाओं का होना और अनेक विद्यार्थियों का विश्वविद्यालय-परीक्षाओं में गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त करना, इस तथ्य का प्रमाण है कि यह यह शिक्षण-संस्था अपने लक्ष्य के प्रति अत्यन्त जागरूक है। यहाँ के प्राध्यापक एवं विद्यार्थी, अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए अहर्निश सचेष्ट हैं। जो सुविधायें एवं परिवेशगत अनुशासन की परम्परायें यहाँ प्राप्त रही हैं, उन्हीं का परिणाम है कि यहाँ के विद्यार्थी गौरवपूर्ण कीर्तिमानों की स्थापना कर सके हैं।

५. प्रगति का बहु आयामी व्यक्तित्व :

प्रगति का कोई अन्त नहीं होता, वह तो निस्सीम होती है; अतः वर्तमान प्राचार्य, प्राध्यापक-वृन्द एवं विद्यार्थियों के लिए बहुत कुछ करना, अब भी शेष है। अपने अतीत से प्रेरणा लेते हुए, वर्तमान में निरन्तर क्रियारत रहते हुए, हम अपने भविष्य को सुरक्षित रख सकेंगे, इसमें दो मत नहीं हो सकते। अध्ययन के साथ-साथ पाठ्यक्रमेतर प्रवृत्तियों में भी हमें बहुत कुछ प्राप्त करना है। विचार-गोष्ठियाँ, वाद-विवाद एवं सांस्कृतिक क्रिया-कलाप के रूप में बहुत-कुछ करना शेष है। "इन्ही के माध्यम से दयानन्द महाविद्यालय के उत्पादन (विद्यार्थी वर्ग) पर एक ऐसा ठप्पा लग सकेगा, जिसे अलग से पहचाना जा सके और जो सर्वतो भावेन वैविध्यपूर्ण एवं विराट हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिक्षा की दृष्टि से अजमेर की उच्च शिक्षण-संस्थाओं ने जो विकास किया है, उसकी अन्तिम परिणति विश्व-विद्यालय के रूप में ही हो सकती है। अजमेर के नव-निर्वाचित विधायकों ने वर्तमान विधान-सभा सत्रारम्भ में, एक स्वर से अजमेर में विश्वविद्यालय की मांग की है। विद्यार्थी भी पिछले कई वर्षों से, इस मसले को लेकर, आन्दोलन करते रहे हैं। ऐसी स्थिति में राज्य सरकार और विश्वविद्यालय-अनुदान-आयोग के लिए यह उचित ही होगा कि वह शीघ्र ही अजमेर में विश्वविद्यालय-स्थापना की उद्घोषणा करे। राजस्थान विश्वविद्यालय के बढ़ते हुए भार एवं शिथिल क्रिया-प्रणाली को त्वरित रूप प्रदान करने के लिए, अजमेर में आगामी शिक्षा-सत्र से एक आवासी-विश्वविद्यालय की स्थापना करने के लिए सक्रिय कदम उठाये जाने चाहिए। यदि ऐसा न हुआ तो विद्यार्थियों का उफनता हुआ असन्तोष न जाने क्या रूप धारण करले, कहा नहीं जा सकता।

६. अंग्रेजी-हिन्दी विभागाध्यक्षों द्वारा अवकाश-ग्रहण :

विगत सत्र में अंग्रेजी और हिन्दी विभागाध्यक्षों का अवकाश ग्रहण करना एक उल्लेखनीय बात है, 'सर्व श्री रविशंकर वर्मा एवं माधव प्रसाद शर्मा ने अपने उपयोगी कार्य काल के उपरान्त, कॉलेज की सक्रिय सेवाओं से अवकाश ग्रहण किया। इन दोनों महानुभावों का व्यक्तित्व विकास से अभिन्न रूप से सम्बन्धित है। वर्मा जी अनेक वर्षों तक कालेज-पत्रिका का योग्यता पूर्वक सम्पादन करते रहे और उन्होंने कुछ ऐसी स्वस्थ परम्पराओं की नींव डाली, जिसका पूर्ण विकास देखकर आज हमें प्रसन्नता होती है। इसी प्रकार हिन्दी-विभागाध्यक्ष श्री माधवप्रसाद शर्मा भी अपने विनोदी व्यक्तित्व के द्वारा, अनेक वर्षों तक कॉलेज की सेवा में चार चाँद लगाते रहे। उन्हें इस बात का सौभाग्य भी प्राप्त है कि उनके कार्य-काल में हिन्दी-विभाग अपने पूर्णतम विकास को प्राप्त कर सका। दुःख की बात यही रही कि अवकाश-ग्रहण के उपरांत वे अधिक दिन जीवित न रह सके और आकस्मिक रूप से हृदयगति रुक जाने के करण जयपुर में उनका देहावसान हो गया। मनीषी-पत्रिका का सम्बन्ध इन दोनों महानुभावों के साथ अत्यंत अंतरंग रहा है। अतः हम श्री वर्मा के उपयोगी जीवन की कामना करते हैं और श्री शर्मा के असामयिक निधन पर, मनीषी-परिवार की शोकांजलि अर्पित करते हैं। ईश्वर दिवंगत आत्मा को शान्ति प्रदान करे, यही हम सबकी कामना है।

७. अर्थशास्त्र में स्नातकोत्तर कक्षायें :

अर्थशास्त्र में स्नातकोत्तर कक्षाएँ खुल जाने से, अब केवल अंग्रेजी ही एक ऐसा विषय रहा है, जिसमें एम. ए. कक्षायें नहीं हैं। कला संकाय के सभी विषयों में स्नातकोत्तर कक्षाओं का होना, कालेज की गौरव-वृद्धि का सूचक है। अर्थशास्त्र जैसे लोकप्रिय विषय में लगभग सौ-सवा-सौ विद्यार्थी प्रवेशेच्छुक थे, किन्तु पचास विद्यार्थियों को ही प्रवेश दिया जा सका। यह इस विषय की बढ़ती हुई मांग का द्योतक है। अर्थशास्त्र एक ऐसा विषय है, जो कला, विज्ञान एवं वाणिज्य के सीमान्तों का स्पर्श करता है। समाज-विज्ञान का अभिन्न अंग होने के कारण यह कला-संकाय के अन्तर्गत आता है, वैज्ञानिक प्रक्रिया और तथ्यपरक होने के कारण, इसे विज्ञान की परिधि में भी प्रवेश मिला हुआ है, किन्तु इसका फल वाणिज्य-संकाय को प्राप्त होता है, अतः फलितार्थ दृष्टि से यह वाणिज्य की सीमा में भी प्रवेश कर लेता है। अर्थशास्त्र के स्नातकोत्तर परीक्षोत्तीर्ण विद्यार्थियों के लिए बैंक, व्यावसायिक प्रतिष्ठान और शिक्षण-संस्थाओं में पर्याप्त अवकाश है। अतः ऐसे विषय का श्रीगणेश होना अत्यन्त समयोचित है।

यदि अंग्रेजी में भी स्नातकोत्तर कक्षाओं का श्रीगणेश हो जाय, तो कला-संकाय अपनी पूर्णता को प्राप्त कर सकेगा। कॉलेज के अधिकारी, इस दिशा में सक्रिय भी हैं, इससे यह आशा बँधती है कि शीघ्र ही अंग्रेजी में भी एम. ए. कक्षाओं का शुभारंभ हो जायेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८. सारस्वत एवं पाठ्यक्रमेतर उपलब्धियां : विशिष्ट छात्र-छात्राएं :

सारस्वत क्षेत्र में समाज शास्त्र, भूगोल, चित्रकला एवं वाणिज्य की स्नातकोत्तर कक्षाओं के कुछ छात्र-छात्राओं ने नये कीर्तिमान स्थापित किये हैं : समाज शास्त्र में श्री किरपालसिंह नरूला, भूगोल में श्री मिलापचन्द पोरवाल, प्रथम स्थान के अधिकारी बने। ये दोनों ही सज्जन उच्च शिक्षा-सेवा में निरत हैं और हमारी बधाई के पात्र हैं। चित्रकला में द्वितीय और तृतीय स्थान के अधिकारी बने : श्री रामजी लालचन्दानी और कुमारी आशा गुप्ता। वाणिज्य की स्नातकोत्तर कक्षाओं मे 'व्यवसाय प्रशासन-खण्ड' में श्री ज्ञानचन्दजी जैन द्वितीय स्थान पर और श्री रामेश्वरलाल गुप्ता पंचम स्थान पर अधिष्ठित हुए। इसी प्रकार कृषि कक्षाओं में श्री पारसमल जैन ने सर्वोच्च स्थान प्राप्त किया। अशोक कुमार, कार्तिकेय कुमार माथुर, विष्णुचन्द नवल और ब्रह्मानन्द व्यास क्रमशः तृतीय, चतुर्थ, पंचम् एवं षष्ठ स्थानों के अधिकारी बने। अर्थ शास्त्र की स्नातकोत्तर कक्षा के श्री राधेश्याम पारीक, राजर्षि कॉलिज, अलवर द्वारा आयोजित, राज्य स्तरीय निबन्ध-प्रतियोगिता में प्रथम रहे हैं। इस प्रकार, उन्होंने अपने साथ ही, अपने कॉलिज को भी गौरवान्वित किया है। इन सब विद्यार्थियों का हम अभिनन्दन करते हैं और उनके उज्ज्वल भविष्य की कामना करते हैं।

इस वर्ष बहुत-बड़ी संख्या में स्नातकोत्तर कक्षाओं के विद्यार्थियों ने लघुशोध-प्रबन्ध प्रस्तुत किये हैं, जो विषय-प्रतिपादन, गुणकता, वैज्ञानिक अनुसंधान-प्रक्रिया, साज-सज्जा एवं प्रस्तुतीकरण की दृष्टि से अनुपमेय हैं। ये निश्चय ही कॉलिज के लिए कीर्ति अर्जित करेंगे। वाणिज्य, समाज शास्त्र, भूगोल और हिन्दी के स्नातकोत्तर विभागों में इस दृष्टि से महत्वपूर्ण कार्य सम्पन्न हुआ है। आशा की जानी चाहिए कि उपर्युक्त विषयों में भूगोल-विभाग की ही तरह पी० एच० डी० स्तर के अनुसन्धान-कार्य का शीघ्र ही श्रीगणेश हो, क्योंकि अन्ततः हमारे सम्पूर्ण उच्च शिक्षण का अन्तिम लक्ष्य शोध-कार्य ही है। राज्य और राष्ट्र की उन्नति का मूलाधार, अनुसंधान-प्रवृत्तियों का पल्लवन ही, कहा जा सकता है।

शोध मंच :

(i) इस वर्ष कॉलिज के विभिन्न स्नातकोत्तर कक्षाओं के छात्रों ने जो लघु-प्रबंध, विश्वविद्यालय की परीक्षा के लिए प्रस्तुत किए हैं उनका संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार है—

कक्षा	लघुप्रबंध संख्या
एम. ए. हिन्दी (उत्तरार्द्ध)	७
एम. ए. समाज शास्त्र ,,	१
एम. ए. भूगोल ,,	२०
एम. कॉम. (उत्तरार्द्ध)	२७

(ii) इस वर्ष भूगोल विभाग के अध्यक्ष डा० म० ना० निगम के निर्देशन में निम्न दो छात्रों को पी-एच. डी. की उपाधि प्राप्त हुई। १. श्री के. सुरेन्द्र रेड्डी २. श्री राजकुमार त्यागी

(iii) इस वर्ष कॉलिज के निम्न प्राध्यापकों द्वारा लिखित एक या अधिक पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं—

श्री घी० ला० जोशी	डा० ज० प्र० गुप्ता	श्री श्रीगोपाल शर्मा
,, राधा वल्लभ उपाध्याय	श्री र० वि० साखलकर	
,, रमेशचन्द्र शास्त्री	,, सदाविजय आर्य	

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(iv) कॉलेज के निम्न प्राध्यापकों के शोध-पत्र, लेख या रचनाएँ विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में इस वर्ष प्रकाशित हुई हैं—

डा० महेश नारायण निगम	श्रीराम जैसवाल	श्री ओम्प्रकाश अग्रवाल
डा० लक्ष्मीकान्त शर्मा	श्री सदाविजय आर्य	
डा० रामशरण दास गुप्त	श्री उपेन्द्र शर्मा	

इस सत्र में परम्परागत रूप में सामाजिक सप्ताह की गतिविधियों को नियोजित नहीं किया जा सका, क्योंकि युद्ध की आँच ने, हमारे समस्त कार्यक्रम को ही अस्त-व्यस्त कर दिया था। फिर भी सामयिकता की दृष्टि से प्रो० सतीश वर्मा द्वारा लिखित भाव-नाट्य 'सोनार बांगला' सफलता पूर्वक अभिनीत हुआ और उसने इस युग की क्रूर वास्तविकता से दर्शकों को परिचित करवाया। बंगला देश के मुख्य परिवेश को मंच पर रूपांकित करने में उद्यान-विभाग की सेवाएँ और निर्देशक प्रो० ए० के० गुप्ता की कल्पनाशीलता एवं निर्देशन-क्षमता काम आई। यह नाटक स्थानीय नाट्य-प्रतियोगिता में भी प्रथम निर्णीत हुआ और निर्देशक को भी श्रेष्ठ निर्देशन का गौरव प्राप्त हुआ, अनेकशः बधाइयाँ !

९. व्यायाम शाला और नव-द्विचक्रिका-आवास (साईकिल शेड) :

इस सत्र में व्यायामशाला का निर्माण होना, कॉलेज की निरन्तर विकास करती हुई निर्माण-शृंखला का एक अभिन्न अंग है। गत वर्ष महाविद्यालय की रजत-जयन्ती के अवसर पर, विश्वविद्यालय-अनुदान आयोग्य ने एक लाख रुपये की उदारतापूर्ण अनुदान राशि की घोषणा कर, इस अभाव को भी पूर्ण कर दिया है। स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क की परिकल्पना, इसका मूलाधार है। कोई भी शिक्षण संस्था केवल बौद्धिक विकास को अपना लक्ष्य नहीं बना सकती, इसे पूर्णता देने के लिए शारीरिक विकास की सुविधायें जुटाना भी अत्यन्त आवश्यक है। कॉलेज में विस्तृत क्रीड़ांगन एवं सुरम्य तरण-ताल तो था ही, अब व्यायामशाला के बन जाने से एक बड़े भारी अभाव की पूर्ति हो गई है। यह व्यायामशाला, कॉलेज के केन्द्रीय द्वार के ठीक सामने, सड़क के उस पार, १,१०,८२८.०० रु. की लागत से बनी है। इसका उपयोग अगले सत्र से हो सकेगा। इसमें एक केन्द्रिय सभागार है, जो क्षेत्रफल की दृष्टि से इस प्रकार है: ४५' × ७०' × ३५' इसके अतिरिक्त ५-६ अन्य कक्ष भी हैं, जिनमें अलग-अलग व्यायामों की व्यवस्था होगी। पूर्ण होने पर यह भवन भी, महाविद्यालय के अन्य भवनों की गौरव-शृंखला में एक नूतन अभिवृद्धि करेगा।

व्यायामशाला से जिन सुविधाओं की प्राप्ति होगी, उससे महाविद्यालय के छात्र, शारीरिक दृष्टि से भी स्वामी दयानन्द सरस्वती के सुयोग्य उत्तराधिकारी बन सकेंगे, ऐसी सहज ही कल्पना की जा सकती है। स्वामीजी का व्यक्तित्व, शारीरिक आत्मिक एवं बौद्धिक क्षमता का चरम-निदर्शन था, उनके नाम के साथ सम्बद्ध कॉलेज, यदि अपने विद्यार्थियों को ये सभी सुविधायें प्रदान करता है, तो यह युगानुकूल ही है। यूनान के स्पार्टा नगर के सभी नागरिक, बलिष्ठता की दृष्टि से निरूपम होते थे। अजमेर में भी क्रीड़ा एवं व्यायाम की सभी सुविधायें सुलभ हैं। अतः उसका स्पार्टा नगर के समकक्ष होना, एक स्वस्थ आकांक्षा ही कहा जा सकता है। यहाँ का स्वास्थ्यवर्द्धक जलवायु भी इसी के अनुकूल है।

नव-द्विचक्रिका-आवास में ८०० साइकिलों के खड़े किये जाने की व्यवस्था है। यह इसी सत्र में ५२००० रु० की लागत से पूर्ण हुआ है और इसका क्षेत्रफल ५२५० वर्ग फुट है। यह नये प्राचार्य की नव-निर्माण-योजनाओं का गौरवपूर्ण सत्रारम्भ है। इसका भव्य और आकर्षक निर्माण, इस बात का द्योतक है कि कॉलेज के अधिकारी, किसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी दृष्टि से कोई कमी नहीं रहने देना चाहते और विभिन्न अनुदान-संगठनों के द्वारा, जो भी सुविधायें प्राप्त हो सकती हैं, उनका लाभ उठाने में, अत्यन्त जागरूक हैं। बहुत कम महाविद्यालयों में ऐसी सुविधाएँ प्राप्त होंगी, यहाँ तक कि अनेक राजकीय महाविद्यालय भी इस दृष्टि से पिछड़े हुए हैं।

कॉलेज का नगर से दूर स्थित होना, अधिकांश विद्यार्थियों को साइकिल की सेवा का उपयोग करने की प्रेरणा देना है। ऐसी स्थिति में द्वि-चक्रिका-आवास का निर्माण, उनकी साइकिलों को न केवल सुरक्षा ही प्रदान करता है, अपितु उन्हें उपयुक्त परिवेश प्रदान कर, उनकी क्षमता को किसी भी रूप में कम नहीं होने देता।

१०. विशिष्ट अतिथि :

इस वर्ष युद्ध काल की अनिवार्यता के कारण हमारे अनेक कार्यक्रम अस्त-व्यस्त हो गये, किन्तु जब भी संभव हुआ और जैसे ही सुविधा मिली, हमने उन अवसरों का पूरा-पूरा लाभ उठाया है। छात्र-संघ के उद्घाटन के अवसर पर हमें प्रो० भीमसेन के सुविचारित वक्तव्य को सुनने का अवसर मिला। उन्होंने अपने विशाल शिक्षण-अनुभव से हमारे विद्यार्थियों को लाभान्वित किया। कृषि-परिषद् के उद्घाटन के अवसर पर हमें तत्कालीन वनमन्त्री और अब शिक्षा-मन्त्री श्री राव नारायणसिंह मसूदा के विचारों को सुनने का अवसर मिला। वनमन्त्री महोदय ने कृषि की व्यावहारिक समस्याओं से विद्यार्थियों को अवगत कराया और उन्हें भारत की कृषि-सम्पदा में वृद्धि करने की प्रेरणा दी। इसी प्रकार महर्षि अरविन्द की पुण्य तिथि पर हमें पांडिचेरी आश्रम के डॉ० माहेश्वरी के दार्शनिक विचारों को सुनने का अवसर प्राप्त हुआ। आपने बताया कि योग-साधना के लिए गृहस्थ-धर्म का परित्याग अनिवार्य नहीं है। गृहस्थ-धर्म का निर्वाह करते हुए भी हम अपनी ऊर्ध्व चेतना का विकास कर सकते हैं। विज्ञान-परिषद् के उद्घाटन के समय हमें स्थानीय राजकीय महाविद्यालय के प्राचार्य एवं वाणिज्य-परिषद् के समापन समारोह पर हमें राजस्थान प्रशासनिक सेवा के वरिष्ठ पदाधिकारी एवं लोक सेवा आयोग के वरिष्ठ सदस्य श्री विष्णुदत्त शर्मा के सारगर्भित एवं प्रेरणादायी विचार सुनने का अवसर मिला। आपने वाणिज्य स्नातकों एवं अधिस्नातकों का उद्बोधन करते हुए बताया कि उन्हें इस क्षेत्र में आगे आना चाहिए और अपनी परिश्रमशीलता, सद्व्यवहार एवं कल्पनाशीलता से राष्ट्र के वाणिज्य-व्यवसाय को समृद्ध करना चाहिए।

कृषि-परिषद् के उद्घाटनोत्सव पर स्थानीय राजकीय महाविद्यालय के प्राचार्य डॉ. पी. एन. माथुर ने कृषि-स्नातकों को देश की कृषि-समस्याओं से अवगत कराते हुए, उत्प्रेरणा दी कि वे सरकारी नौकरियों का मुँह न जोड़कर, कृषि-क्रान्ति में सक्रिय भूमिका अदा करें। 'शस्य श्यामला वसुन्धरा' को साकार करते हुए वे देश के ग्रामों की काया पलट दें और ग्रामीण जीवन-स्तर को ऊँचा उठाने में खून-पसीना एक कर दें। कृषि-शिक्षा तभी सार्थक हो सकती है, जब हमारे नवयुवक ग्रामीण परिवेश में काम करने से न कतरायें। आपने कृषि के विद्यार्थियों को हरित क्रान्ति में तन-मन-धन से जुट जाने की प्रेरणा दी।

हिन्दी-परिषद् के समापन-समारोह पर हमें प्रबुद्ध-समीक्षक एवं नव-इतिहासकार डॉ० गणपति चन्द्रगुप्त के प्रेरणादायी विचारों को सुनने का अवसर प्राप्त हुआ। आपने प्रातःकालीन विचार-गोष्ठी में इस सिद्धान्त का पुनराख्यान किया और उसे अद्यतन बनाने की प्रेरणा दी। सत्रान्त-समारोह में आपने हिन्दी भाषा एवं साहित्य की परम्परा को स्पष्ट करते हुए, उसके सामने जो भी संकट एवं समस्यायें आ रही हैं, उनके निदान का संकेत किया। महाविद्यालय के वार्षिक समारोह के अवसर पर राजस्व-मण्डल के अध्यक्ष और वरिष्ठ प्रशासनिक अधिकारी श्री जी. बी. के. हूजा को सुनने का अवसर मिला। उनकी सहज विनोदमयी वाणी ने, हमारे चिन्तन के नये क्षितिजों का उद्घाटन किया और जो चुनौतियाँ, हमारे सामने आ रही हैं, उनका मुकाबला साहसपूर्वक करने की प्रेरणा दी। श्रीमती हूजा ने विभिन्न पुरस्कारों का वितरण कर विद्यार्थियों को प्रोत्साहित किया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

११. दिवंगत साहित्यकार :

इस वर्ष हमें उच्चकोटि के अनेक साहित्यकारों के निधन के कारण, माँ भारती को अश्रुयुक्त रूप में देखना पड़ा। राजस्थान के हिन्दी साहित्यकार, प्रख्यात पत्रकार एवं आकाशवाणी के प्रोड्यूसर श्री मोहन सिंह सेंगर, मध्य प्रदेश के तपःपूत हिन्दी साहित्यकार श्री पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी और पंजाबी प्रख्यात उपन्यासकार नानक-सिंह की साहित्य-सेवाओं से वंचित होना पड़ा। श्री सेंगर कलकत्ता से प्रकाशित होने वाले प्रख्यात हिन्दी मासिक 'नयासमाज' के वर्षों तक सम्पादक रहे। उस काल में उन्होंने जो विशेषांक प्रकाशित किये, वे उनकी सूझ-बूझ और उद्भट पत्रकारीय प्रतिभा के ही परिचायक हैं। यह स्मरणीय है कि उन्हीं की प्रेरणा से डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी जैसे समीक्षक, 'बाणभट्ट की आत्मकथा' जैसे ऐतिहासिक एवं ललित उपन्यास को लिख सके। 'नया समाज' में ही यह उपन्यास सर्व प्रथम धारावाहिक रूप में प्रकाशित हुआ था। सेंगरजी की सम्पादकीय टिप्पणियां अत्यंत संतुलित एवं विवेक पूर्ण हुआ करती थीं। उन्होंने अनेक श्रेष्ठ कहानियां एवं निबन्ध भी लिखे हैं। पिछले कुछ वर्षों से आप आकाशवाणी, दिल्ली में प्रोड्यूसर के उत्तरदायी पद पर सेवारत थे।

बख्शीजी को हम सुदृढ़ समीक्षक एवं प्रबुद्ध चेता के रूप में जानते हैं। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के 'सरस्वती' पत्रिका से अवकाश लेने पर, आप ही उसके सुयोग्य सम्पादक प्रमाणित हुए। उनके सम्पादन-काल में, सरस्वती ने अपनी गौरवपूर्ण परम्परा को अक्षुण्ण रखा। आपने अनेक ललित निबन्ध एवं संतुलित समीक्षाएँ लिखकर हिन्दी साहित्य की श्रीवृद्धि की। बख्शीजी पहले समीक्षक थे, जिन्होंने विश्व-साहित्य के गवाक्षों को, हिन्दी पाठक के लिए उन्मुक्त किया। अपने अन्तिम समय तक वे कुछ-न-कुछ लिखते रहे और अपनी लेखनी के बल पर ही साहित्य-वाचस्पति एवं डॉक्टरेट जैसी मानद उपाधियों से विभूषित हुए।

पंजाब के प्रख्यात उपन्यासकार श्री नानकसिंह, हिन्दी उपन्यासकार प्रेमचन्द के समानधर्मा रहे हैं। उनकी रचनाओं में पंजाब का जीवन परिवेश एवं रंगीन संस्कृति, हिलोरे ले रही हैं। पंजाब की नब्ज़ को, इस उपन्यास-कार ने भली भांति परखा था और अपनी रचनाओं में उसी को रूपांकित कर अमरता प्राप्त की थी। उनके प्रसिद्ध उपन्यास 'पवित्र पापी' पर फिल्म भी बन चुकी है और वह बहुत ही लोक प्रिय सिद्ध हुई है। इन साहित्यकारों का निधन माँ भारती की अपूरणीय क्षति है। वे जिस गौरव पूर्ण परम्परा को अपने पीछे छोड़ गये है, उसका निर्वाह करना, भारत के प्रत्येक साहित्यकार का पुनीत कर्तव्य है।

१२ अवकाश-प्राप्त सेवक रामसिंह :

श्री रामसिंह का जीवन 'दे आल्सो सर्व, हू स्टैन्ड एण्ड वेट' (मिल्टन) का जीवित-जाग्रत उदाहरण है। इन्होंने अक्षरशः इस उक्ति को अपने जीवन में ढाला और बड़ी निष्ठा के साथ अपने कार्य-काल को पूरा किया। रामसिंह का भरा-पूरा जीवन है और वे आर्थिक दृष्टि से सक्षम व्यक्ति हैं। वे निष्ठापूर्ण सेवा की गौरवमयी परम्परा छोड़ गये हैं। हम उनके स्वस्थ दीर्घ जीवन की कामना करते हैं।

१३. कृतज्ञता-ज्ञापन :

प्रो. बुद्धि प्रकाश आर्य ने बड़ी निष्ठा से 'मनीषी' के संपादन में निस्पृह भाव से सहयोग दिया है, हम उनके आभारी हैं। जिन रचनाकारों ने अपनी अमूल्य रचनाओं से पत्रिका की श्रीवृद्धि की है, उन्हें क्या कहें, वे तो अपने हैं और पत्रिका के हैं। पत्रिका, उन्हीं के बूते पर चलती है। जिन रचनाओं को हम 'मनीषी' की परिधि में ला नहीं सके, उनके लिए हमारी सीमाएँ उत्तरदायी हैं। वे लिखते रहें, और अच्छा लिखते रहें, यही हमारी कामना है।

—ल. का. शर्मा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

.....और बीड़ी बुझ गई !

[स्वर्गीय पं० माधव प्रसाद शर्मा की स्मृति में]

सदाविजय आर्य

एक झुकी-झुकी-सी आकृति जो तांगे से नीचे उतरा करती थी और किसी युवा प्राध्यापक के कंधे का सहारा लेकर कार्यालय में पहुँच जाया करती थी; पलंग और रजाई के बीच, बीड़ी का धुआँ छोड़ती, रामकरण को आवाज लगाती वह आकृति थकान दूर करते हुए खो जाती थी, पता नहीं कहाँ दूर पहुँच जाती थी; जहाँ बेटे थे न बेटियाँ, न मित्र थे न कलीग, कोई नहीं थे और यदि थे तो पं० जी के साथ मात्र माधव प्रसाद शर्मा थे और था बीड़ी का धुआँ ।

और एक दिन वस्तुतः पं० जी बहुत दूर चले गए; जहाँ न बेटे हैं न बेटियाँ, न मित्र हैं न कलीग, कोई नहीं हैं और यदि हैं तो केवल पं० जी । लेकिन वे एक धुएँ का गुब्बार, पीछे छोड़ गए हैं। लगता है इसी बीड़ी के धुएँ में वे आकृतिविहीन होकर एकाकार हो गए हैं । अब बीड़ी के टुकड़े विभाग-कक्ष में गिरे देखने को नहीं मिलते; लगता है वे ठीक ही कहा करते थे कि ज़िंदगी एक बीड़ी है, जब तक जलती है पी लो, अन्यथा जीवन एक खाली बोतल से बढ़ कर कुछ नहीं रह जाता । मैं सोचता हूं कि अब तो खाली बोतलें रह गई हैं, क्योंकि बीड़ी कहीं नहीं है । अब कोई नहीं कहता कि विजय आज चाय नहीं आएगी ! और मैं विभाग कक्ष में बैठा-बैठा धुएँ से घिर जाता हूँ लगता है अब तो केवल घुटन शेष रह गई है जीवन तो समाप्त हो गया ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक दिन एक वयस्क बुद्धि संपन्न कलीग ने कहा—अब पं० जी के दिन बीत गये अब बातें बदल गई हैं। मैंने उनसे कुछ नहीं कहा; लेकिन मैं मुस्कुरा दिया था मानो कह रहा था कि यदि पं० जी के दिन बीत गये तो समझ लीजिए कि जीवन्तता बीत गई, पं० जी की बातें बदल गई। तो मानो मानवता के दिन लद गए—बोलने वाले पं० जी को कभी नही पा सके थे और न कभी पा सकेंगे।

जब कभी अचानक पं० जी का स्मरण हो आता है तो लगता है कि एक–बूढ़ा था जिसके पास घड़ी दो घड़ी बैठ कर कुछ पाया जा सकता था। पाने वालों ने उनसे स्नेह भी, पाया, दुत्कार भी; भावुकता भी, कठोरता भी पैसा भी और चाय भी; इसके अतिरिक्त अंग्रेजी और हिन्दी साहित्य पर समान अधिकार रखने वाले पं० जी की अद्‌भुत स्मरण शक्ति श्लाघ्य थी। अब ये सब बातें विस्मृति के धुएँ में उड़ती जा रही हैं क्योंकि अब हममें ऐसा निरभिमानी किंतु स्वाभिमानी बूढ़ा नहीं रहा।

कभी सोचता हूँ कि उनकी घड़ी लाकर विभाग के कक्ष में टांग दूँ, कभी सोचता हूँ उनकी टोपी लाकर टेबल पर रख दूँ, कभी सोचता हूँ एक बीड़ी का बंडल लाकर सामने रख लूँ लेकिन फिर भी उन कांपते हाथों की मजबूत पकड़, कंधे अनुभव नहीं करेंगे; सो चुप रह जाता हूँ; खिड़की से बाहर देखने लगता हूँ कि क्या कहीं कोई धुएँ का गुबार तो नहीं उड आया है! निराश हो जाता हूँ; कहीं धुआँ नहीं है लेकिन घुटन कितनी बढ़ गईहै! स्नेह का स्निग्ध वातावरण जैसे अब अविश्वास और शंकाओं के स्वार्थ की आग से जलने लगा है; काश! ऐसे में वह बीड़ी सुलगाने वाला बूढ़ा होता तो हम भी उत्साह का कश लेकर, स्नेह की बोतल का घूंट पीकर बैरे से कहते—बाबू एक कप, बिना शकर की चाय लाना, जरा जल्दी।

□□□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी-विभाग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बांगला देश : तीन प्रतिक्रियाएँ

☐ प्रा० राम जैसवाल

नीले आकाश में बसेरा लेने को
जाते चहकते पक्षी
झुलस कर गिर पड़े,
उनके पंख जल गये थे,
अवश
भारी-भारी बूटों के नीचे कुचल गये.
और नीचे
दूर तक लम्बी-चौड़ी सड़क पर
धुली स्कूल की ड्रेस पहने
बच्चों के शवों से रक्त बह रहा था
और उस रक्त में डूबे भारी-भारी
जूतों के निशान-सड़क पर
एक क़तार में छपे हुये थे
वहां तक, जहां पहुंच कर
वह गाँव जल रहा था
....और खेतों की बाड़ पर
जले-अधजले शव पड़े थे.
देहरी पर पड़ा है बुझा हुआ दिया
एक, अजन्मा कोई आंगन में
छितर गया....
और गृहिणी !....
कभी-कभी चेत हो आता है,
ऊपर से उतर गई आँधी और आग,
रक्त से सने हाथ और पुते हुये चेहरे !
....
किसका शाप है यह आदमी को
कि वह अपने ही वंशजों को गुलाम बनायेगा
मारेगा,
भोगेगा,
मुझे–
सारी ज़मीन सारे आसमान से
रक्त बरसता दिखाई पड़ रहा है,
और आदमी ! चांद पर क्या करने गया है ?
....
अंधा और बहरा हो गया है आदमी, सुन्न,
संवेदनाहीन.
तब ?
क्लबों में कैबरे और प्रणय
किस संवेग-आवेग के प्रतीक हैं !
.... हम मन से अपाहिज
और सुन्न हो गये हैं ! ☐

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२)

तुम्हारी अकाल मृत्यु हो गई है,
याह्या !
ये, आकाश में उड़ते हुये गिद्ध,
तुम्हारे चेहरे पर जमा हुआ
तुम्हारे ही जवानों का रक्त,
तुम्हारे ही सैनिकों द्वारा
भोगी गई तुम्हारी बहू-बेटियों
के निर्वस्त्र शव
और उनसे उठती तुम्हारी चेतना
की सड़ने की गन्ध-दुर्गन्ध
और पाकिस्तान के निर्दोष
सैनिक, विधवाओं का प्रलाप
हवा में सिसकता उनका रुदन,
तुम,
सुन नहीं पा रहे हो
तुम्हारे कानों के आसपास
फुसफुसाते तुम्हारे इन
व्यापारी मित्रों के स्वर
जिन्होंने तुम्हें देश की उन्नति के
साधने के स्थान पर, अस्त्र दिये,
बारूद दी,
क्योंकि वे जानते थे कि वह तुम्हारे ही
हाथों में फटनी है !
तुम्हें झूमने के लिए अफ़ीम दो
कि होश खो बैठो,
(और, होश आने पर फिर भीख माँगो),
अपने राजनीतिक पुरखों को तरह
तुम्हें यह कैसे भूल गया कि
तुम्हारा जिस्म उसी मिट्टी का है
वहीं का है तुम्हारा खून,
जिसके खून से तुम अपना
इतिहास लिखाना चाहते थे,
तुम्हारे उन्हीं मूर्ख राजनीतिक पुरखों
का मन बहलाने को नाम,
मान लिया था, 'पाकिस्तान'
वर्ना है यह वही हिन्दुस्तान,
अपने इन नकली कपड़ों को पहने
कब तक नाम बदले रहोगे ?
....
धरती, उर्वरा रक्त और आग से
नहीं होती,
उसे पसीना और श्रम चाहिये
तुम्हारे दोस्तों की दी हुयी
बारूद से घायल तुम्हारा जिस्म
और यह लहू-सनी पोशाक
और अफीम से निस्पन्द पड़ी
तुम्हारी चेतना,
मिट्टी इसे अपनी गोद में नहीं
सुलायेगी...
ये आसमान में उड़ते हुये गिद्ध
तुम्हारी अकाल मृत्यु की सूचना दे रहे हैं !

□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(३)

फिर
डूब गये
चर्च, मन्दिर और मस्जिदों
के शिखर
रक्त की नदी में
और
चीलों तथा गिद्धों के हाथ
लग गये
विकृत नंगे-अधनंगे शव !
धरा ने उगल दिये
अपनी कोख में दफ़नाये....
दबाये कंकाल.
और धुँएँ ने सूरज को
निगलने का उपक्रम किया है.
किसने दिया था
सबसे पहले शस्त्र और
घृणा को जन्म
कि उस अभिशापित पर
किसी का शाप-था
वरदान नहीं फलता अब.

अंधेरा घना होता है
और
वियतनाम,
पाकिस्तान,
हिरोशिमा,
या बांगला देश
अथवा अन्य कोई संज्ञा से
उठता किसी उजड़ी कोख
या पुंछे हुये सिंदूर का स्वर
सिसकता है !
....
कौन देख पाता है तब
लहराती हुयी पताकाओं
के शीश झुक जाते हैं
और कोई तारा फिर
आकाश के सीने पर
लकीर करता टूट जाता है !

क्या यही शुभश्री है (इति श्री है)
—अतिसभ्य युग की ?

□□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पृथ्वीराज कृत 'वेलि' का अनुभूति-सौष्ठव

☐ डॉ० रामशरणदास गुप्त

आलम्बन वर्णन :

वेलि एक शृंगार रस प्रधान काव्य है,[1] जिसके आलम्बन हैं द्वारकाधीश कृष्ण तथा भीष्मक नरेश की पुत्री रुक्मिणी । शृंगार का स्थायी भाव रति है और रति भाव का प्रमुख कारण है सौंदर्य । अस्तु शृंगार की रचनाओं में कवियों की वाणी आलम्बन के सौंदर्य का विधान करती आई है । कवि पृथ्वीराज ने अपने वेलि काव्य में रुक्मिणी के सौंदर्य की एक भव्य झांकी प्रस्तुत की है । रुक्मिणी बाल्यकाल से ही असाधारण सुषमा से मंडित है । उसकी शोभा मानसरोवर में क्रीड़ा करते हुए हंस अथवा सुमेरु पर्वत पर दो पक्षियों सहित विद्यमान कनक लता के समान है ।[2] अपनी सखियों के साथ राजा के अजिर में क्रीड़ा करती हुई वह आकाश में सुशोभित चन्द्रमा के समान ज्ञात होती है :

"सँगि सखी सीलि कुलि वैसि समाणी,
पेखि कली पदमणी परि ।
राजति राज-कुंवरि राय-अंगणि,
उडियण वीरज अंबहरि ।।"[3]

बाल्यावस्था की समाप्ति के साथ ही यौवन का आविर्भाव होता है । बाल्य एवं यौवन की संधि के अवसर पर उसका मुख अरुणिमा युक्त हो जाता है और कुच युगल विकसित हो जाते हैं :—

"पहिलउँ मुखि राग प्रगट थिउ,
प्राची अरुण कि अरुणोदय अम्बर ।
पेखे किरि जागिया पयोहर,
संझा-वंदण रिखेसर ।।[4]

वयःसंधि के वर्णन के पश्चात् कवि ने नायिका के यौवन का वर्णन किया है । यहाँ उसने उसके समग्र शरीर, केश, मुख, नेत्र, पलक, भौंह, नासिका, दाँत, कुच, कुचश्याम-लता, हस्त, हस्त-अंगुलियों, नाभि, कटि, त्रिबली, नितम्ब, जाँघ, पिण्डली, पद एवं पद-नख आदि अंगों के सौंदर्य का निरूपण विविध उपमानों की सहायता से आठ छंदों[5] में किया है । कवि ने इस वर्णन में जिन उपमानों[6] का प्रयोग किया है उनमें से अधिकांश का प्रयोग कवि नायिका के नख-शिख वर्णन के अन्तर्गत परम्परागत रूप से करते आये हैं । वेलिकार ने परम्परा से ग्रहीत इन उपमानों का प्रयोग सर्वथा मौलिक ढंग से करके एक नूतन सौंदर्य का साक्षात्कार किया है और वह इस प्रकार नायिका की छबि का एक मार्मिक चित्र अंकित करने में सफल हुआ है । सूफी कवि मुल्लादाऊद, जायसी एवं मंझन आदि ने जहाँ नायिका के प्रत्येक अंग के सौंदर्य का उद्घाटन एक-एक या दो-दो छंदों में करके उनके खण्ड-सौन्दर्य का विधान किया है, वहाँ पृथ्वीराज ने एक ही छन्द में एकाधिक अंगों के सौन्दर्य का वर्णन किया है । इस प्रकार उसने नायिका के अंग-प्रत्यंग के सौन्दर्य का एक ओर तो खण्ड-चित्र अंकित किया है, दूसरी ओर एकाधिक अंगों के एक ही साथ वर्णन द्वारा उनके सामूहिक सौन्दर्य का संश्लिष्ट निरूपण भी । प्रत्येक छन्द नायिका के सौन्दर्य का बिम्ब उपस्थित करता है जिसके फलस्वरूप कवि के काव्य में रसोद्रेक की सहज एवं स्वाभाविक क्षमता आ गई है । यह वर्णन केवल वस्तुगत वर्णन मात्र नहीं अपितु अत्यन्त अनुभूतिपूर्ण है ।

यौवन के आगमन के साथ ही रुक्मिणी का अंग-प्रत्यंग एक विशिष्ट आभा से प्रदीप्त हो उठा है । नेत्र

१. क्रिसन-रुक्मणी री वेलि, छंद ८, संपादक नरोत्तम स्वामी २. वही छंद १२ । ३. छंद १४ । ४. छंद १६ । ५ छंद २० से २७ ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कमल-दल के समान विकसित हो जाते हैं और उनमें चंचलता का संचार हो जाता है, कण्ठ काकली के स्वर की मधुरिमा से पूरित हो जाता है, शरीर गन्ध-युक्त, कुच उन्नत एवं मन में नवीन-नवीन भाव-लहरियाँ संचार करने लगती हैं :

"दल फूलि विमल वण, नयण कमल-
दल, कोकिल कण्ठ सुहाइ सर :
पाँपणि-पंख सँवारि नवी परि,
भ्रूंहारे भ्रमिया भ्रमर ॥
मलयाचल सुतनु मलय मन मउरे,
कली कि काम अँकूर कुच ।"[1]

नायिका के मुख की सुषमा, केश राशि की श्यामलता, नेत्रों की विशालता एवम् निर्मलता, नासिका की आभा, मन के उल्लास तथा हास्य की छटा का कवि ने प्रस्तुत रूपक के वन्धान द्वारा एक सम्पूर्ण चित्र खींच दिया है :

"आणंद सु-जु उदउ, उहास हास,
अति राजति रद रिख-पंति रुख ।
नयण कमोदणि, दीप नासिका,
मेन केस, राकेस मुख ॥"[2]

इस प्रकार कवि ने यौवन काल के वर्णन में उपमानों की सहायता से नायिका के अंगों के आकार, रूप एवं गुणों का अनुभूति पूर्ण वर्णन किया है जिससे उसके मुख की लालिमा, गोराई और गोलाई, केशों की श्यामलता, सघनता तथा लम्बाई, नेत्रों की विशालता एवं निर्मलता, नासिका की दीप्ति, दांतों की शुभ्रता, कुचों की पुष्टता, उन्नतता एवं सुडौलता, नाभि की गम्भीरता, कटि की क्षीणता, बाँहों एवं जांघों की कोमलता, तथा सचिक्कणता, पैरों की अरुणिमा, नखों की आभा और समग्र शरीर की गन्धमयता तथा कोमलता आदि का चित्र पाठक की कल्पना में सहज साकार हो जाता है। नारी के इन विभिन्न अंगों की शोभा उनपर धारण किये जाने वाले कुण्डल आदि आभूषणों तथा उनपर लगाये जाने वाले काजल आदि प्रसाधनों से और भी अधिक हो जाती है। इन्हीं बाह्य-उपकरणों को हमारे शास्त्रों में षोड्श-शृंगार कहा गया है। आलम्बन के सौन्दर्य के निरूपण में कवियों ने इन शृंगारों का वर्णन भी किया है। वेलि के रचयिता ने भी रमा की अवतार रुक्मिणी की इस साज-सज्जा में विलीन होकर उसके रूप को रूपायित किया है। कवि का यह वर्णन रूप-वर्णन की पुनरावृत्ति मात्र नहीं अपितु इसके द्वारा भी वह सौन्दर्य का प्रभाव-कारी निरूपण करने में समर्थ हुआ है।[3] यहाँ पर इस वर्णन के कतिपय उदाहरण द्रष्टव्य हैं :

"जूंसहरी भ्रूंह, नयण म्रिगजूता,
विसहर-रासि की अलक-वक ।
वाली करि वाँकिया विराजइ,
चन्द रथी ताटंक चक्र ॥
इम कुंभ अँधारी, कुच सु कंचुकी,
कवच सम्भु काम कि कलह ।
मनु हरि-आगमि मण्डप मण्डे,
बँधण दीध कि बारिगह ॥"[4]

उद्दीपन वर्णन तथा बाह्य दृश्य चित्रण

उद्दीपन वर्णन के अन्तर्गत कविशृंगार रसोद्दीप्ति हेतु प्रकृति के रम्य दृश्यों की अवतारणा करते हैं। संध्या, प्रातः एवं षड्ऋतु वर्णन आदि इसी के अंग हैं। कवि पृथ्वीराज ने अपने काव्य में प्रकृति के इन दृश्यों की यथा समय संयोजना की है। वे प्रकृति के सुन्दर चितेरे हैं और उनके प्रकृति-वर्णन में उसके प्रति हृदय का सहज अनुराग छलका पड़ता है। कवि लोग नायिका के रूप-सौन्दर्य का निरूपण करते हुए प्रकृति के विभिन्न उपादानों का उपमान रूप में उपयोग करते आये हैं। वेलिकार ने भी इनका उपयोग नायिका के अंगों की सुषमा के अंकन में किया है। इस प्रकार वह एक ओर तो रुक्मिणी की छवि के अंकन में सफल हुआ है तथा दूसरी ओर प्रकृति के चित्रण में। नायिका की बाल्यावस्था के चित्रों में ऐसा लगता है कि प्रकृति स्वयं रुक्मिणी में साकार हो गई है :

---

१. छन्द २० तथा २१। २. छन्द २२।
३. छन्द ८१ से ९७। ४. छन्द ८९, ९०।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"संगि सखी सीलि कुलि वैसि समाणी,
पेखि कली पदमणी परि ।
राजति राज-कुंवरि राय-अंगणि,
उडियण वीरज अवहरि ।।"[1]

वयः संधि में रुक्मिणी का मुख यौवन की अरुणिमा से प्रदीप्त हो उठता है। उसके कुच उन्नत हो जाते हैं। उसकी इस छवि को रूपायित करने के साथ ही कवि ने प्रकृति का प्रभातकालीन दृश्य भी साकार कर दिया है :

"पहिलउँ मुखि राग प्रगट थिउ,
प्राची अरुण कि अरुणोदय अंबर।
पेखे किरि जागिया पयोहर,
सँझा-वँदण रिखेसर ।।"[2]

अब लीजिये उसके यौवनकाल के वर्णन से सम्बन्धित एक चित्र जिसके द्वारा कवि ने वसन्त ऋतु में पुष्पों के विकीर्ण होने, कमल-दलों के फूलने और भ्रमरों के उड़ने का दृश्य प्रस्तुत कर दिया है :

"दल फूलि विमल वन नयण कमल दल,
कोकिल कंठ सुहाइ सर।
पाँपणि-पंख सँवारि नवी परि,
भ्रूंहारे भ्रमिया भ्रमर ।।"[3]

कवि पृथ्वीराज के प्रकृति चित्रण की सबसे बड़ी विशेषता है प्रकृति का आलम्बन रूप में वर्णन। मध्य-युगीन समग्र हिन्दी साहित्य प्रकृति के अलंकारिक, उद्दीपक, वस्तु परिगणन आदि रूपों से भरा पड़ा है; प्रकृति के ब्यौरेवार एवं संश्लिष्ट चित्रण इस प्रकार से करना कि उनका रूप पाठक के मानस में बिम्बित हो सके, प्रकृति का आलम्बन रूप में चित्रण कहलाता है। कहना न होगा कि वेलिकार ने अपने काव्य में प्रकृति के ऐसे ही चित्रों की अवतारणा की है। उनके द्वारा उसके सूक्ष्म निरीक्षण की क्षमता, प्रकृति के प्रति उत्कट् अनुराग और उसकी मौलिक कल्पना-शक्ति सहज ही व्यंजित होती है। प्रस्तुत उदाहरण में कवि ने एक ही पंक्ति द्वारा संध्या के समस्त वातावरण को सजीव कर दिया है :

"गइ रवि-किरण, ग्रिहे थइ गहमह,
रह-रह कोइ वहि रहे रह।"[4]

इसी प्रकार प्रभात का चित्रण भी कवि ने अत्यन्त लाघवता के साथ कर दिया है। जो वस्तुएँ रात्रिभर मुक्त रहीं, प्रभात के आने पर वे बन्धनमय हो गईं और जो बन्धनमय रहीं, वे बन्धन-मुक्त हो गई :

"संजोगणि-चीर, रई, कैरव-स्त्री,
घर हट-ताल, भमर, गउ-धोख ।
दिणयरि ऊगि अेतलाँ दीधउ,
मोखियाँ बन्ध, बधियाँ मोख ।।"[5]

संध्या एवं प्रभातकालीन वर्णनों के साथ कवि ने ग्रीष्म, वर्षा, शरद्, हेमन्त, शिशिर एवं वसंत आदि षड्ऋतुओं का वर्णन भी किया है जिससे कवि की सूक्ष्म पर्यवेक्षणशक्ति तथा प्रकृति के प्रति उसके हृदय के सहज अनुराग का बोध होता है। वर्षा ऋतु में काले-काले वर्तुलाकार मेघ अपने किनारों पर हवा द्वारा उड़ाये गये स्थित सफेद मेघों के साथ धड़-धड़ करके मूसलाधार वर्षा कर रहे हैं :

"काली करि काँठलि, ऊजलि कोरण,
घारे स्रावण घरहरिया।
गलि चालिया दसो दिसि जल-ग्रभ,
थंभि न, विरहिणी-नइण थिया ।।"[6]

प्रकृति वर्णन के साथ कवि ने बाह्य-दृश्य चित्रण के अन्तर्गत कुण्डिनपुर[7] और द्वारकापुरी[8] की सुषमा का वर्णन किया है। शिशुपाल के आगमन पर कुण्डिनपुर नगर में विविध उत्सव मनाये जाने लगे। नगर में मण्डप बनाये गये, द्वारों पर स्वर्ण-कलश बाँधे गये,[9] प्रत्येक घर की दीवार स्फटिक की ईंटों से चिनी गई और इंगुर के गारे से लीपी गई। उनकी छतों में चन्दन के पट लगे तथा किवाड़ भी चन्दन की बनीं। खम्भे मूंगों के बनाये गये तथा उनका नीचे का भाग पन्नों से सज्जित किया गया।[10] बारात को आता देखकर नगर में हर्षोल्लास की लहर दौड़ गई, तरह-तरह के मांगलिक कृत्य होने लगे और अवसर के अनुरूप मधुर गीत गाये जाने लगे :

१. छन्द १४। २. छन्द १६। ३. छन्द २०।
४. छन्द ४६। ५. छन्द १८२। ६. छंद १९२।
७. छंद ३८-४२। ८. छंद ४८से५०; १३९-१४४।
९. छंद ३८। १०. छंद ३९।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"गावइ करि मंगल चढ़ि-चढ़ि गउखइ,
मनइ सूर सिसुपाल मुख ।
पदमणि अनि फूलइ परि पदमणि,
रुकमणि कामोदणिय रुख ।।"[1]

कृष्ण रुक्मिणी को विवाह कर द्वारिका को चले। नगर वासियों ने उनका भव्य स्वागत किया। नारी और नरों का समूह अत्यन्त उमंग के साथ उमड़ पड़ा मानो द्वारका-पुरी अपने दोनों बाहुओं से कृष्ण का आलिंगन करने को उमड़ पड़ी हो।[2] कृष्ण जिस मार्ग से गमन कर रहे हैं, वह अनेक द्वारों से सुशोभित है तथा उस पर सुन्दर गुलाल फैला हुआ है।[3] नारियाँ ऊँचे-ऊँचे महलों पर चढ़कर मांगलिक गीत गाने लगीं और कृष्ण, बलभद्र तथा सैन्य समूह पर पुष्प-वृष्टि होने लगी :

"धवलहरे धवल दियइ जस-धवलित,
घण नागर देखे सधण ।
स-कुसल सबल सदल सिरि सामल,
पुहप-वून्द लागी पड़ण ।।"[4]

विप्रलम्भ शृंगार :

भोज के अनुसार "जहां रति नामक भाव प्रकर्ष को प्राप्त करे, लेकिन अभीष्ट को न पा सके, वहां विप्रलम्भ शृंगार कहा जाता है।[5] भानुदत्त ने भी विप्रलम्भ शृंगार की परिभाषा इसी से मिलती हुई देते हुए कहा है, युवा और युवती की परस्पर मुदित पंचेन्द्रियों के पारस्परिक सम्बन्ध का अभाव अथवा अभीष्ट की अप्राप्ति विप्रलम्भ है।"[6] आचार्यों ने इसके पूर्वराग या पूर्वानुराग, मान, प्रवास एवं करुण विप्रलम्भ चार भेद किये हैं। इनमें से वेलि में केवल पूर्वानुराग को ही स्थान मिला है। नायक-नायिका के पूर्वानुराग का वर्णन कवि गुणश्रवण, प्रत्यक्ष दर्शन, चित्र-दर्शन एवं स्वप्न दर्शन द्वारा करते आये हैं। वेलि में प्रेम का उदय गुणश्रवण द्वारा होता है। रुक्मिणी ने विभिन्न शास्त्रों का अध्ययन करने पर कृष्ण को सर्वगुण सम्पन्न पाया। अस्तु उसमें कृष्ण के प्रति सहज अनुराग उत्पन्न होता है और यह निरन्तर प्रवर्द्धित हुआ मजिष्ठा राग की कोटि में पहुंच जाता है। उधर कृष्ण भी रुक्मिणी के रूप एवं गुणों की प्रशंसा सुनकर ही उसकी ओर आकर्षित होते हैं और उनमें भी उसके प्रति प्रेम का उदय होता है। अन्ततः ब्राह्मण ने रुक्मिणी का पत्र देकर उस प्रेम को चरम-बिन्दु पर पहुंचा दिया। रुक्मिणी के प्रेम-पत्र को पाकर कृष्ण का कंठ अवरुद्ध हो जाता है, शरीर रोमांचित हो जाता है और उनके नेत्रों से अश्रु प्रवाहित होने लगते हैं :

"आणंद-लखण रोमंचित आंसू,
वांचत गदगद कंठ न वसाइ।
कागल करि दीधउ करुणाकरि,
तिणि तिणि-हि-ज ब्राह्मण तणइ ।।[7]

विप्रलम्भ शृंगार के अन्तर्गत आचार्यों ने अभिलाषा, चिन्ता, स्मृति, गुणकथन, उद्वेग, प्रलाप, उन्माद व्याधि, जड़ता एवं मरण आदि दस कामदशाओं का उल्लेख किया है। वेलिकार का विप्रलम्भ वर्णन संयत है। अतः वेलि में केवल प्रथम चार दशाओं का चित्रण ही हुआ है। रुक्मिणी वेद तथा वेदांगों का अध्ययन करती है। वह उन सब में अनन्तशायी कृष्ण की अपरिमित व्याप्ति पाती है। अतः उनके प्रति उसके मन में प्रेम उत्पन्न हो जाता है और उन्हें वर रूप में प्राप्त करने की उत्कट लालसा जाग्रत हो जाती है। उन्हें प्राप्त करने हेतु वह शिव तथा पार्वती की वन्दना करने लगती है :

"सांभलि अनुराग थयउ मनि,
स्यामा वर प्रापति वंछती वर।
हरि-गुण भणि ऊपनी जिका हरि,
हरि तिण वंदइ गवरि-हर ।।[8]

लेकिन एक दिन उसकी लालसा के विरुद्ध शिशुपाल अपने दल-बल सहित कुण्डिनपुर में बारात लेकर आ पहुंचा। वह हतप्रभ हो गई। यद्यपि नगर के निवासी सभी उल्लास में मग्न हैं, नारियाँ शिशुपाल को अवलोक कर पद्मिनी की भाँति प्रफुल्लित हैं, किन्तु रुक्मिणी उदास है।[9] अब प्रिय के गुणों के स्मरण

१. छंद ४२ २. छन्द १४१।
३. छन्द १४३। ४. छन्द १४४।
५. भोज, सरस्वती कंठाभरण, ५.४५।
६. भानुदत्त, रसतरंगिणी, ६।
७. छंद ५७। ८. छंद ६। ९. छंद४२।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तथा उसे प्राप्त करने के उपाय की खोज के अतिरिक्त उसके लिए क्या सहारा था ? अतः वह कृष्ण के गुणों का स्मरण करती हुई, उनके लिए पत्र लिखती है [1] और उनसे मिलने के उपायों की खोज में विलीन हो जाती है।[2] अन्ततः एक यज्ञोपवीत धारी ब्राह्मण को बुलाकर अपना पत्र कृष्ण के पास भेजती है। [3] संदेश दे आने के पश्चात् जब वह उसे अकेला लौटते हुए देखती है, तो उसका चित्त चिंता से परिपूर्ण हो जाता है। उसका मन शंका के कारण पीपल के पत्ते के समान चंचल हो उठा। वह एक ओर तो कृष्ण का संदेश पूछे बिना नहीं रह पा रही है, दूसरी ओर संकोच के कारण कुछ पूछ भी नहीं पा रही है। ब्राह्मण ज्यों-ज्यों निकट आता जाता है, वह त्यों-त्यों उसकी मुख मुद्रा को अवलोकती जाती है :

"चल-पत्र-पत्र थिउ दुज देखे चित,
सकति न रहइ, न पूछि सकंति।
अउ आवइ जिम जिम आसन्नउ,
तिम-तिम मुख धारणा तकंति।।"[4]

संयोग शृंगार :

आचार्य धनंजय के अनुसार "जहाँ अनुकूल विलासी (नायक-नायिका) एक दूसरे के दर्शन, स्पर्शन आदि का सेवन करते हैं, वह आनद से युक्त संभोग शृंगार कहलाता है।"[5] आचार्य विश्वनाथ के अनुसार "जहाँ एक दूसरे के प्रेम में अनुरक्त नायक और नायिका दर्शन, स्पर्शन आदि का सेवन करते हैं, वह संभोग शृंगार कहलाता है।[6] इस प्रकार संयोग या संभोग शृंगार में नायक-नायिका के पारस्परिक प्रेम, मिलन, छेड़छाड़ एवं क्रीड़ा आदि विविध दशाओं का चित्रण रहता है। वेलि एक संयोग शृंगार प्रधान काव्य है जिसमें कवि ने नायक-नायिका के संयोग का व्यापक वर्णन किया है। रुक्मिणी और कृष्ण के विवाह-संस्कार के पश्चात् ही रति संस्कार का वर्णन हुआ है। इसके लिए कवि ने प्रथम नायक-नायिका की मिलन की आतुरता, उत्सुकता एवं विह्वलता आदि के चित्रण के लिए सखियों के हास-परिहास की योजना की है। रुक्मिणी की चतुर सखियाँ एक कमरे में रति-क्रीड़ा की साज-सज्जा का आयोजन कर रुक्मिणी को कृष्ण से अलग कर देती हैं और कृष्ण को शयन-कक्ष में बैठा देती हैं।[7] संध्या का समय हो गया है। प्रकृति में किसी का संयोग हो रहा है तो किसी का वियोग। ऐसे समम में रुक्मिणी भी रति की लालसा से आपूरित हो रही है :

"संकुड़ित समसमा संध्या समयइ,
रति वंछित रुक्मणि रमणि।
पथिक-वधू-द्रिठि पंख पंखियाँ
कमल-पत्र सूरिज किरणि।।"[8]

इधर कृष्ण भी प्रिया का मुख अवलोकने के लिए अत्यन्त आतुर हैं। उनको पल-पल व्यतीत करना भारी पड़ रहा है।

वे प्रतीक्षा में शय्या और द्वार के बीच व्यग्रतापूर्वक घूम रहे हैं। कभी वे रुक्किणी की पद-चाप सुनने के लिए द्वार से कान लगाते हैं तो कभी शय्या पर लौट जाते हैं :

"ऊभी सहु सखिअे प्रसंसिता अति,
क्तिारथी प्री मिलण क्रित।
अटत सेज-द्वारे विचि, आहुटि,
स्रुति दे, हरि धरि समास्रित।।"[9]

किंचित् प्रतीक्षा के पश्चात् ही सखियाँ सौरभ विकीर्ण करती हुई, यौवन-मद छलकाती हुई एवं लज्जा की शृंखलाओं में जकड़ी हुई रुक्मिणी को शयन-कक्ष में ले आती हैं।[10] रुक्मिणी ज्यों ही कक्ष की देहली में प्रवेश करती है, त्यों ही कृष्ण उल्लास के सागर में मग्न हो जाते हैं। उन्हें रोमांच हो आता है और विह्वलता एवं आतुरता में वे रुक्मिणी को गोदी में उठाकर सेज पर बैठा देते हैं :

---

१. छंद ५९-६६। २. छंद ४३।
३. छंद ४४-४५। ४. छंद ७१।
५. आचार्य धनंजय, दशरूपक, ४.६९।
६. आचार्य विश्वनाथ, साहित्य दर्पण, ३.२१०।
७. छंद १५७-१५९। ८. छंद १६०।
९. छंद १६३। १०. छंद १६४-१६५।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"देहली घसति हरि जेहड़ी दीठी,
आणंद को ऊपनउ अ-माप।
तिणि आप-ही करायउ आदर,
ऊभा करि रोमाँ सूँ आप ॥

वहि मिली घड़ी, जाइ घणूं वांछता,
घण दीहाँ अतरइ घरि।
अंकमाल आपे हरि आपणि,
पधरावी त्री सेज परि ॥"[1]

कृष्ण यद्यपि तृप्त मन हैं तथापि उस रूप की राशि रुक्मिणी के रूप का पान करके भी उनके नेत्र तृप्त नहीं हो रहे हैं। वे बार-बार उसके मुख को उसी प्रकार अवलोक रहे हैं जिस प्रकार दरिद्र धन को तृषित नेत्रों से देखता है:

"अति प्रेरित-रूप आंखियाँ अ-त्रिपत,
माहव जद्यपि त्रिपत-मन।
वार-वार तिम करइ विलोकण,
घण-मुख जेही रंक धन ॥"[2]

प्रेमी युगल के हृदयगत भावों को समझकर भौंहों में हंसती हुई सखियाँ एक-एक करके शयन-गृह से चली गईं और नायक-नायिका दोनों रति-क्रीड़ा में लीन हो गये जिसमें रुक्मिणी की केश-राशि बिखर गई, मोतियों की माला छिन्न-भिन्न हो गई तथा कंचुकी के बंधन एवं करधनी खुल गई।[3] कवि ने यहाँ रति-क्रीड़ा का वर्णन सांकेतिक रूप में किया है क्योंकि उसका ध्यान सदैव नायक-नायिका की शील रक्षा पर रहा है। इसीलिए यह वर्णन सूफी कवि मुल्लादाऊद, जायसी एवं मंझन के रति-क्रीड़ा के चित्रों के समान हृदय-स्पर्शी नहीं बन सका है। हाँ, इस कमी की पूर्ति कवि ने रतिश्रान्ता रुक्मिणी के रम्य चित्रों की अवतारणा करके की है। विभिन्न संचारियों और अनुभावों से युक्त प्रस्तुत चित्र निश्चय ही इस काव्य की अमूल्य निधि हैं:

"कीघइ मधि माणिक हीरा कुंदणि,
मिलिया कारीगर मयण।
स्यामा-तणइ निलाटि सोहिया,
कुंकम- बिंदु प्रसेद-कण ॥
त्री-वदनि पीतता, चिति व्याकुलता,
हियइ धग-धगी खेद हुइ।
धरि चखि लाज, पगे नेउर धुनि,
करे निवारण कंठ कुइ ॥"[4]

अन्य रस :

वेलि का प्रधान रस शृंगार है। लेकिन कवि ने शृंगार के साथ वीर, भयानक, वीभत्स, रौद्र एवं हास्य आदि अन्य रसों की भी सुन्दर योजना की है। शृंगार के पश्चात् काव्य में दूसरा स्थान वीर रस को मिला है तथा भयानक, वीभत्स एवं रौद्र इसके सहायक बनकर आये हैं। योद्धाओं के परस्पर ललकारने, उनके ओजमयी शब्दों के कथन, शर-सधान करने, युद्ध भूमि के दृश्य-चित्रण, उसमें घोड़ों की नाकों के बजने, विविध शस्त्रों की झंकार तथा युद्ध की सक्रियता आदि के चित्रण द्वारा कवि ने वीर रस का बड़ा ही सजीव वर्णन किया है। दो सेनाओं के आमने सामने होने का कैसा सजीव चित्र कवि ने अपनी लेखनी द्वारा प्रस्तुत किया है:

"अलगी ही नैड़ी ऊखवते, देठालो हुवो दलां दुंह।
वागाँ ढेरवियाँ वाहरुए, मारकुए फेरिया मुंह ॥"[5]

इसी प्रकार ओजमयी शब्दावली में विविध शस्त्रों के चलने, वीरों के परस्पर ललकारने, वीरों के लोह-कवचों पर रक्त-कणों के लगने, भालों के चमचमाने, तलवार की धार के चमकने आदि के वर्णन द्वारा भी युद्ध-भूमि का दृश्य साकार हो उठा है:

"हथनालि हवाई कुहुक-बाण हुवि,
होइ वीर-हक गय-गहण।
सिलह-लोह ऊपरइ लोह-सर,
मेह–बूंद माहे महण ॥
कलकलिया कुंत किरण,
कलि ऊकलि वरजित विसिख विवरजित वाउ।
घड़-घड़ घड़कि धार धारूजल,
सिहर-सिहर समरवइ सिलाउ ॥"[6]

---

१. छंद १६६-१६७। २. छंद १६८। ३. छंद १७५
४. छंद १७३-१७३क। ५. छंद ११६। ६. छंद ११८-११९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आगे कवि ने "कँपिया उर काइरा अशुभ-कारियाँ गाजँति नीसाणे गड़ड़इ" पंक्ति में भयानक रस का सन्निवेश करने के पश्चात् वीभत्स रस का विशद निरूपण किया है। यहाँ कुछ छन्द उदाहरण स्वरूप द्रष्टव्य हैं :

ऊजलियाँ धाराँ ऊवड़ियउ परनाले जल रुहिर पड़इ।
चोटियाली कूदइ चउसठि चाचरि, ध्रु ढलियइ, ऊकसइ धड़।
अनंत अनइ सिसुपाल अउझड़इ, झड़ मातउ माँडिनउ झड़॥

रिण-अंगणि तेणि रुहिर रलतलिया
घणा हाथ-हूँ पड़इ घणा।
ऊँघा पत्र, बुद-बुद जल आक्रिति,
तरि चालइ जोगणी तणा॥"[1]

जिस प्रकार भयानक, वीभत्स एवं रौद्र, वीर रस के सहकारी बनकर आये है उसी प्रकार हास्य रस शृंगार का सहकारी बनकर आया है। कृष्ण और रुक्मिणी की रति कामना पर भौंहों में हँसते हुए सखियों के एक-एक करके जाने तथा रति-क्रीड़ा पर उनके हँसने आदि प्रसंगों में कवि ने हास्य रस की समुचित योजना की है। उदाहरण द्रष्टव्य हैं :

"वर नारि नेत्र निज वदन विलासा,
जाणिय अंतह करण जई।
हसि-हसि भ्रहे, हेक-हेक हुइ,
ग्रिह बाहिरि सहचरी गयी॥
सुखि लाघइ केलि स्याम स्यामा संगि,
सखिअे मन-रखिअे संघट।
चउकि-चउकि ऊपरि चित्र-साली,
हुइ रहियउ कह कहाहट॥[2]

□

१. छंद १२०-१२२। २. छंद १७०, १७६।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संस्मरण

स्मृति की दीपशिखा

⊙ श्रीमती चमेली मिश्र, एम. ए. (उ) हिन्दी

लक्ष्मी मेरे प्रशिक्षण काल की अन्तरंग सखी है। प्रथम दिन कॉलेज में प्रवेश करने पर उसने ही मुझे अपने माधुर्यपूर्ण व्यवहार से प्रभावित किया था। शीघ्र ही हमारे विचारों तथा मन का मेल हो गया। हमने अपने सुख-दुख आपस में बँटाये हैं। लक्ष्मी की सौम्यता ने मुझे इतना प्रभावित किया कि मैं उसे अपने सुख-दुःख की साथिन समझने लगी। उम्र में मुझ से तीन वर्ष बड़ी होने पर भी मैं लक्ष्मी को 'दीदी' सम्बोधित नहीं करती थी। हँसी के अजस्र प्रवाह के कारण, वह सदैव प्रसन्न-चित्त दिखलाई पड़ती। उसकी हँसी संगीत-लहरी के सदृश हृदय के तारों को झंकृत कर देती। उसका माधुर्य-पूर्ण व्यवहार ही वशीकरण का एक मात्र मन्त्र है। बस उसी मन्त्र के वशीभूत होकर मैं आज तक उसकी स्मृतियों को हृदय के एक कोने में संजोये हूँ।

'कौन ?'

"मैं हूँ लक्ष्मी।" यह सुनते ही जैसे मेरी अस्वस्थता भाग गई, शरीर में स्फूर्ति आ गई। मैं तकिये का सहारा लेकर बैठ गई। मैंने कुर्सी की ओर बैठने का संकेत किया और शुष्क आँखों से उसका स्वागत किया।

'अब कैसी है साधना ? प्रधानाचार्य तुम्हारी छुट्टी स्वीकृत करने में आनाकानी कर रहे थे। कहते थे 'कैसे विद्यार्थी हैं ! प्रशिक्षण को तो हँसी समझते हैं। यों समझते हैं, जैसे शिक्षा-विभाग ने दस महीने की सैर-सपाटे की छुट्टियां दी हैं। अब छुट्टियां नहीं मिलेंगी, परीक्षा पास है। इस तरह उन्होंने अच्छा-खासा भाषण दे डाला; तब मैंने बीच में ही टोककर कहा—'सर, वह अस्वस्थ है। उसे टॉयफायड हो गया है। दस दिन और लग जायेंगे।" तुम चिन्ता मत करो। आराम करो। स्वस्थ होने पर कालेज जाना। अगले महीने अपने 'फाइनल लैसन' भी हैं।'

'ओह ! यह तैय्यारी भी करनी है। क्या करूँ, लक्ष्मी अर्थाभाव और बीमारी ने जीवन को झकझोर दिया है। ऐसा लगता है कि ये मेरा अन्त कर देंगे। कितने अरमान थे, क्या-क्या सोचा था अपने स्वप्निल-संसार को बसाने के लिये ! पर सब चौपट हो गया। भाग्य भी तो है, केवल तदबीर ही क्या करे !

'साधना ! तुम किस सोच में पड़ गईं ! ईश्वर जो कुछ करता है अच्छा ही करता है।'

'नहीं लक्ष्मी, मैं नहीं मानती तेरी इन बातों को। मैं तो अब नास्तिक हो गई हूँ। ईश्वर कहाँ है ? नहीं तो क्या सब दुःख हम जैसों को ही देता। ऐसा हमने उस अगोचर का क्या बिगाड़ दिया है।'

'अच्छा तो मैं चलती हूँ। तुम आराम करो। अशांत मत बनो। मिस भार्गव को तुम्हारी देखभाल के लिये कह दिया है। वैसे भी तुम्हारी रूम-मेट होने के नाते वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुम्हारा ध्यान तो रखती ही है। इधर वार्डन से भी कह दिया है। यदि किसी और चीज की आवश्यकता हो, तो मुझे बता दे, मैं घर से अलग ले आऊँगी। अन्धेरा घना हो रहा है' और यह कहते-कहते लक्ष्मी मेरी दृष्टि से ओझल हो गई।

कितनी दयालु है! बाह्य रूप कुरूप है, पर अन्तर कितना निश्छल, ममतामय एवं दया से लबालब भरा हुआ। पर आजकल तो लोग बाह्य सौन्दर्य ही देखते हैं। कितने ही लड़के देखने आये, पर उसकी कुरूपता और मोटापा दीवार बन गये, उसके पाणिग्रहण में। खैर! यह भी कुछ कम न निकली। अविवाहिता रहने का दृढ़ निश्चय कर लिया और आज वह पुरुष जाति को यह दिखा देना चाहती है कि अब वह युग लद गया, जब नारी को पुरुष की दासी तथा आश्रिता समझा जाता था। आज तो वह हरेक क्षेत्र में पुरुष से कन्धे-से कन्धा मिलाकर चल रही है। वह है भी बड़ी स्वाभिमानिनी। एक विधुर ने उसका जीवन-साथी बनने की इच्छा प्रकट की थी। माँ न होने पर भी, वह उसे छः बच्चों की माँ होने का सौभाग्य देना चाहता था। लक्ष्मी को यह स्वीकार ही न हुआ। जब आधी उम्र गुजर गयी, तो शेष में क्या रह गया है। वासन्ती बहारों के सपने तो छिन्न-भिन्न हो गये। अब क्या राख को सजायेगी। सारी जिन्दगी सुलगते ही गुजर गई, अब तो जलने की प्रतीक्षा है।

पर मैं किस कारण सुख से वंचित रही। सुन्दर न सही पर कुरूप भी तो नहीं हूँ। सब कुछ मिलाकर एक आकर्षक युवती हूँ। पर मेरे सिद्धान्त मेरे सुख-संसार की दीवार बन गये। मैं किसी की कृतज्ञता नहीं चाहती। मां का सुख विधाता ने शीघ्र ही उठा लिया। पिताजी बहुत सीधे-साधे हैं। स्वयं अधिक शिक्षित नहीं हैं, पर लड़कियों की शिक्षा के समर्थक हैं। मैंने तो अपने विद्यार्थी-जीवन में पिताजी की मोटी और फटी हुई आधी धोती ओढ़ कर ही सर्दियों से संघर्ष-किया, पर वह धोती ऊनी शाल से भी ज्यादा गर्मी देती। आज तो सभी सपना हो गया। वह धोती भी अब नहीं रही। कितना निष्ठुर है विधाता तू। क्यों हमारे सभी सुख के साये छीन रहा है?

इन्हीं विचारों में निमग्न, न जाने कब मुझे निद्रादेवी ने अपने सुखद संसार में बुला लिया। प्रातः सूर्य-रश्मियाँ अपना रेशमी-स्पर्श कर-कर मुझे गुदगुदाने लगीं, पर मैंने आँखें न खोलीं। सहसा लक्ष्मी की आहट ने मुझे चौंका दिया। एक पैकेट बिस्कुट तथा कुछ फल हाथ में लिये वह श्यामवर्ण कुन्दकली-सी श्वेत दंत-पंक्ति से इस प्रकार मुस्करा रही थी, मानो अपनी सभी खुशियां वह मेरे आंचल में भर देना चाहती है। 'अब कैसी तबियत है?' 'अच्छी हूँ। कल कालेज आऊँगी।' 'नहीं साधना अभी दो-चार दिन और आराम कर लो। कालेज कहीं भागा नहीं जाता।'

'नहीं लक्ष्मी अब मैं बिल्कुल ठीक हूँ। देखती नहीं मैं अच्छी तरह चल-फिर सकती हूँ।' कहकर मैं बिस्तर से उठ बैठी।

(२)

बार-बार हाथ कान और ऊँगली पर जाता है, मुझे बुरी आदत है अगूँठी के नग को सहलाने की तथा कानों के कुण्डल कान में ही घुमाने की। अगूँठी के अभाव में, हाथ उसके चिरकाल से पहने रहने के कारण, पड़े निशान पर जा पड़ता है। चर्म से चर्म का स्पर्श होता है और मैं विचारों में खो कर शून्य में एकटक देखती रहती हूँ। पर क्या करूँ, विवशता है। लक्ष्मी न होती, तो मेरी यूनिवर्सिटी फीस का प्रबन्ध भी न होता। फीस जमा कराने की अन्तिम तारीख थी। मैं निरुपाय और निराश बैठी थी। सहसा लक्ष्मी आ गई। उसकी आहट ने मेरी तन्द्रा भंग की। 'अरे! कैसे बैठी है? कालेज नहीं चलेगी क्या?'

'हूँ। पर मैं आज कालेज नहीं जाऊँगी। तुम चली जाओ, समय हो गया है।'

'कालेज क्यों नहीं जाती? क्या हो गया तुझे। कैसे गुमसुम बैठी है। कुछ बताये तो पता चले।' मैंने रुआंसी हो कर कहा—'फीस का प्रबन्ध नहीं हुआ है।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'तुम चलो मेरे साथ, हमारे घर तक। वहाँ चलकर कुछ प्रबन्ध कर लेंगी। मेरी पड़ोसिन ब्याज पर जेवर रख कर रुपये देती है।' पर मेरे पास कोई जेवर भी तो नहीं हैं। 'खैर मैं यूँही ब्याज पर माँग कर देखूँगी।'

मैंने अपनी अगूँठी और बालियां उतारकर लक्ष्मी को दे दीं। 'लक्ष्मी किसी का एहसान ठीक नहीं। न जाने रुपये लौटाने का प्रबन्ध कब होवे। ये गहने रख कर रुपये ले लो। होंगे तब छुड़ा लूँगी, वरना डूब जायेंगे।"

लक्ष्मी की आँखों में आंसू आ गये में उसकी असमर्थता समझती थी। वह भी मेरी ही तरह मध्यवर्गीय परिवार की है। मां बचपन में ही अपनी स्नेहिल-छाया से वंचित कर गई। भाइयों का साया भी नहीं है सिर पर। पिताजी किनारे के वृक्ष हैं, न जाने कब उखड़ जायें। लक्ष्मी पर अपनी तीन छोटी बहनों के भरण–पोषण का दायित्व भी है। फिर भी वह सदा मुस्कराती रहती है। न जाने उसकी यह हँसी ही रुदन है। अतिथि-स्वागत तो जैसे उसका जन्मसिद्ध अधिकार है।

मुझे कभी-कभी हँसी आ जाती है : लक्ष्मी के नाम पर। आंख के अन्धे नाम नयन सुख, वाली कहावत चरितार्थ होती है। उसका लक्ष्मी नाम ही उसका उपहास सा करता प्रतीत होता है।

जलपान के अवकाश में सभी सहपाठिनें चाय पीतीं, नाश्ता करतीं। पर मैं लक्ष्मी के साथ ही रहती। हम भी जब जेब गर्म होती, तो चाय पी लेतीं। ग्राउंड में एक नीम का पेड़ था। हम उसी की छाया में अपना समय व्यतीत करतीं। प्रशिक्षण यूँही अभावों में समाप्त हो गया। हम दोनों द्वितीय श्रेणी में पास हो गईं, यही हमारे अभावों की पूर्ति थी।

(३)

आज सभी कुछ है, पर वह अतीत के दर्द भरे दिन नहीं। उनकी मधुर स्मृतियां ही मेरी प्रेरणा हैं। जो कुछ हूँ, उन्हीं स्मृतियों की बदौलत हूँ। मेरा क्या अस्तित्व है, मैं कुछ भी नहीं जान पाई। लगता है, लक्ष्मी ही मेरी सच्ची पथ-प्रदर्शिका है। वह ममता की मूर्ति न होती, तो न जाने मैं आज कैसी दयनीय स्थिति में होती, कुछ कह नहीं सकती!

आज लक्ष्मी मुझसे दूर है, पर हृदय से नहीं। हृदय-पटल पर उसकी छवि ऐसी अंकित हो गई है कि कितने ही आँधी-तूफान आये, उसे विनष्ट नहीं कर सकते। वह तो सदा-सदा प्रेरित करती रहेगी। जब-जब मुझे दुःख के बादल घेरेंगे, वह दूर बैठी ही उनका समाधान करती रहेगी। □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्यानुशीलन में शैली-तत्त्व का उपयोग एवं महत्त्व

☐ डॉ० लक्ष्मीकान्त शर्मा,

साहित्यानुशीलन में शैली-तात्त्विक प्रणाली का इधर नये रूप में प्रचलन हुआ है। इससे पूर्व भी, हम प्रायः भावपक्ष एवं कलापक्ष की दृष्टि से साहित्य का विवेचन करते रहे हैं।शैली-तात्त्विक अनुशीलन की प्रणाली, नवीन-इस दृष्टि से कही जा सकती है कि इसमें परम्परागत परिपाटी का परित्याग कर, एक नयी लीक को अपनाया गया है। **वस्तुतः यह आधुनिक ज्ञान-विज्ञान के नये परिप्रेक्ष्य की प्रतिध्वनि है।** भावपक्ष के विवेचन में एक ओर जहाँ काव्य के विभिन्न सम्प्रदायों से प्रेरणा ली गयी है, वहीं कलापक्ष के विवेचन में चलताऊ ढंग से अलंकारों और छन्दों का विवेचन कर इति कर दी जाती है, किन्तु **शैली-तात्त्विक अध्ययन में, शब्दचयन, वाक्य-रचना एवं मुहावरों के उपयोग के माध्यम से साहित्यकार के मानस में झांकने की चेष्टा की जाती है और यह देखा जाता है कि उसकी अभिव्यक्ति में, उसका व्यक्तित्व किन रूपों में प्रक्षेपित हुआ है।**

१. शब्द-साधना का मूल उत्स :

जब हम यह पता लगाने का प्रयत्न करते हैं कि अमुक साहित्यकार किस प्रकार शब्द-चयन करता है, तो हमारा अभिप्राय यही होता है कि **हम उसकी शब्द-साधना के मूल उत्स को पकड़ सकें।** उदाहरणतः एक साहित्यकार तत्सम शब्दों का अधिक प्रयोग करता है, तो इसका यही तात्पर्य हुआ कि वह भाषा-प्रयोग में परिष्कार एवं संस्कृतनिष्ठता का कायल है। यदि वह तद्भव एवं देशज शब्दों का अधिक प्रयोग करता है, तो इसका अभिप्रेत यह है कि वह भाषा को कबीर की तरह 'बहते नीर' के रूप में लेता है और इस बात को महत्व देता है कि भाषा का जो रूप प्रचलित हो गया है, भले ही वह अनगढ़ एवं अपरिष्कृत हो, तो भी वह लेखक के लिये अधिक ग्राह्य इसलिये है कि उससे जन-जीवन की आंचलिक छटा का आभास होता है।

२. तद्भव शब्द : जीवन की ऊष्मा से संप्लावित :

यदि कोई लोकप्रिय उपन्यासकार तद्भव एवं देशज शब्दों के प्रयोग से जन-जीवन का यथातथ्य चित्रण करता है, तो इसका मतलब यही हुआ कि वह परिष्कार एवं संस्कृतनिष्ठता को महत्व नहीं देता, बल्कि जनता में प्रचलित वाग्धारा को अधिक व्यंजनापूर्ण पाता है। **उसे तद्भव शब्दों में जीवन की ऊष्मा का अधिक अनुभव होता है।** तत्सम शब्दावली जड़-जीवन की प्रतीक है, उसमें विकास के लिये कोई गुंजाइश नहीं है। वह विभिन्न भाषाओं के प्रचलित शब्दों को भी, पंडिताऊ मनोवृत्ति के रूप में, कदर्थना का पात्र ही समझती है। इसका तात्पर्य यही हुआ कि लोक-जीवन में, उसके विभिन्न रूपान्तरों में ऐसे साहित्यकार की कोई दिलचस्पी नहीं। देशज शब्दों में एक प्रकार की स्थानीयता की गंध होती है, किन्तु वे अपने परिवेश को अत्यंत यथार्थ रूप में अभिव्यंजित करते हैं। उनमें लोक संस्कृति का प्रतिबिम्ब भी रहता है। इस प्रकार हमने देखा कि शब्द-चयन के प्रति, प्रत्येक लेखक का एक विशिष्ट एवं निजी दृष्टिकोण रहता है।

प्रेमचन्द अपनी कहानियों और उपन्यासों में आंचलिक-बोलियों को अनायास ही ले आये थे, जैनेन्द्र को गृहस्थी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के स्थान पर 'गिरस्ती' अधिक प्रिय है।[1] इसी प्रकार अनेक तद्भव उनके लेखन में अनायास ही आ जाते हैं। मैथिलीशरण गुप्त या प्रसाद संस्कृतनिष्ठता के हामी हैं।

इधर आँचलिक उपन्यासकार, विशेष रूप से रेणु, बिहारी की उपबोलियों को सप्राण रूप में अपने उपन्यासों में प्रकट कर रहे हैं। उदयशंकर भट्ट के 'सागर लहरें और मनुष्य' में 'बम्बइया बोली' के दर्शन होते हैं। उससे बहुत पहले नागार्जुन ने अपने आंचलिक उपन्यासों में बिहारी-बोलियों का चमत्कारिक रूप दिखाया था।[2] यशपाल के 'झूठा- सच' में भी हमें भाषा का 'बहता-नीर' मिलता है।

३. वाक्य-विन्यास: सरल, संयुक्त एवं मिश्रित :

वाक्य-विन्यास के प्रयोग में हम देखते हैं कि कुछ लेखक संयुक्त एवं मिश्रित वाक्यों के प्रयोग के अधिक अभ्यासी हैं, तो ऐसा लेखक-वर्ग भी मिल जायगा, जो सरल वाक्यों को अधिक महत्त्व देता है। प्रथम प्रकार के वाक्यों के उदाहरण-रूप में 'प्रसाद' को और दूसरे प्रकार के वाक्यों के उदाहरण-रूप में जैनेन्द्र को लिया जा सकता है। प्रथम उदाहरण के रूप में हम प्रसाद लिखित 'आकाश-दीप' से एक वाक्य प्रस्तुत करते है।

"सामने शैलमाला की चोटी पर, हरियाली में विस्तृत-जल प्रदेश में नील-पिंगल संध्या, प्रकृति की एक सहृदय कल्पना, विश्राम की शीतल छाया, स्वप्न-लोक का सृजन करने लगी।"[3] दूसरा उदाहरण जैनेन्द्र की सुप्रसिद्ध कहानी 'जाह्नवी' से दिया जा रहा हैं।

"रोटियाँ खत्म हो गई। कौवे उड़ चले। लड़की एक-एक कर उनको उड़कर जाता हुआ देखने लगी। पलभर में छत कोरी हो गयी।"[4]

४. वाक्य-संरचना से झांकता लेखक का व्यक्तित्व :

इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रसाद का एक वाक्य जैनेन्द्र के चार वाक्यों से भी बड़ा है। प्रसाद कहानी में भी कविता लिखते हैं, और जैनेन्द्र विशुद्ध कहनीकार होने के नाते छोटे-छोटे वाक्यों से ही अपना काम चला लेते हैं। प्रसाद मूलत: कवि हैं। उनके नाटकों, कहानियों, यहाँ तक कि निबन्धों में भी कविता का ही रूपान्तरण है। जैनेन्द्र विशुद्ध रूप में कथाकार हैं अत: वह सीधे-सरल वाक्यों में जीवन के यथातथ्य का चित्रण करते हैं। इस दृष्टि से सरदार पूर्ण सिंह, पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र', चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी' और नये लेखकों में से फणीश्वरनाथ 'रेणु' तथा निर्मल वर्मा के लेखन में बड़ा अन्तर है। यह अन्तर उनकी जीवन-दृष्टि और शैली की उनकी अवधारणा में निहित है। प्रसाद का चिन्तन संश्लिष्ट है जब कि जैनेन्द्र के चिन्तन में वाक्य की हर 'फाँक' को नांरगी की 'फाँकों' की तरह अलग किया जा सकता है। इसी प्रकार आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का एक वाक्य लीजिये :

"बैर क्रोध का अचार या मुरब्बा है।"[5] इस छोटे से वाक्य में इतना अर्थ-गर्भत्व है कि इसकी व्याख्या में आसानी से एक पृष्ठ भरा जा सकता है। जिन लेखकों के चिन्तन में सहजता होती है, वे अधिकतर सरल एवं संक्षिप्त वाक्यों का उपयोग करते हैं और जिनके चिन्तन में बुनावट जटिल होती है, वे मिश्रित या संयुक्त वाक्यों का अधिक प्रयोग करते हैं। कभी-कभी यह भी देखा जाता है कि लेखक आवश्यकतानुसार, सभी प्रकार के वाक्यों का प्रयोग करता है। एक ही लेखक सीधे-सपाट वर्णन में सरल वाक्य काम में लेता है और जहाँ उसका चिन्तन विचारों की ऊँचाई पर चढ़ने लगता हैं, वहीं वह जटिल एवं मिश्रित वाक्यों का प्रयोग करने लगता है। प्रथम प्रकार के लेखक समास-शैली का उपयोग करते हैं, तो दूसरे प्रकार के लेखक आवश्यकतानुसार व्यास एवं विक्षेप शैली का।

---

१. देखिये जैनेन्द्रकृत 'परख' और 'सुनीता' :

२. देखिये नागार्जुन कृत 'बलचनमा' और 'बाबा बटेसरनाथ'

३. जयशंकर प्रसाद: 'आकाश-दीप': हिन्दी कहानियाँ, पृ. १७५

४. जाह्नवी: हिन्दी कहानियाँ पृ. १९२

५. रामचन्द्र शुक्ल: क्रोध (चिन्तामणि: खण्ड-१),

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. मुहावरों की मनोवृत्ति :

कुछ लेखक मुहावरों एवं लोकोक्तियों का बहुत अधिक उपयोग करते हैं, तो कुछ लेखक उनका एक दम बहिष्कार करते हैं। प्रेमचन्द को मुहावरेदानी का सम्राट् कहा गया है। उनकी कहानियों और उपन्यासों में, प्रायः सभी मुहावरे, अपनी विभिन्न रूपछटाओं में प्रयुक्त हुए हैं। श्यामसुन्दरदास अपने लेखन में मुहावरों का बहुत कम उपयोग करते हैं। प्रयत्नपूर्वक ही हम उनके लेखन में से मुहावरों को निकाल सकते हैं।[१] **वस्तुतः मुहावरे, जनाभिव्यक्ति के ऐसे साँचे हैं, जिनका जनता एक विशिष्ट भावना की अभिव्यक्ति के लिये परम्परागत रूप में उपयोग करती रही है।** ये ऐसे परिनिष्ठित रूप हैं, जिनमें कोई फेरबदल नहीं की जा सकती।

६. विकासशील भाषाओं में प्रयोग-वैविध्य :

जब कोई भाषा ऐसे परिनिष्ठित रूप को प्राप्त कर लेती है, तो सामान्य जनता में भी उसके बँधे-बँधाए रूपों का अधिक प्रयोग होता है। संस्कृत और अँग्रेजी भाषा के प्रयोगों में हम ऐसे रूपों का सहज दर्शन कर सकते हैं। जो भाषाएँ अभी विकास की मंजिलें तय कर रही हैं, उनमें प्रयोग-वैविध्य के अधिक दर्शन होते हैं। भारतीय भाषाओं में हिन्दी **बंगला, मराठी, गुजराती** और तमिल-तेलुगु इतनी विकसित हो चुकी हैं कि अब उनके मुहावरों के साँचे अन्तिम रूप से निर्मित हो चुके हैं और जनता तथा साहित्यकार उन्हीं का पुष्कल मात्रा में उपयोग करते हैं। यहाँ इस तथ्य को विस्मृत नहीं करना चाहिये कि प्रत्येक भाषा 'बहता-नीर' है और उनमें विकास की अनन्त संभावनाएँ निहित रहती हैं। जब भाषा अपने परिनिष्ठित रूप को प्राप्त कर लेती है, तो उसका अभिव्यंजना-सौष्ठव सुनिश्चित हो जाता है और उसी का प्रयोग साहित्यकार अपनी रचनाओं में घड़ल्ले से करते हैं।

७. शैली-तत्व की पुरातन कसौटी :

'रीति' अथवा शैली-तत्त्व की दृष्टि से हमारे प्राचीन आचार्यों में 'वामन' ने एक बड़ी पते की बात कही है :

'विशिष्टा पद-रचना रीतिः'[२] 'विशिष्ट पद-रचना' से उनका यही तात्पर्य रहा है कि प्रत्येक साहित्यकार दूसरों से अपनी पार्थक्य जतलाने के लिये अपने व्यक्तित्व की चाशनी में पगे हुए वाक्यों अथवा वाक्यांशों की रचना करता है। इसी में उसके व्यक्तित्व की अभिव्यंजना अन्तर्निहित रहती है। लेखक का राग-द्वेष, रुचि-अरुचि, यहाँ तक कि उससी सम्पूर्ण मनःप्रवृत्तियाँ, उसके लेखन में अभिव्यंजित होती हैं। जब विलियम हैजलिट् कोई निबंध लिखता था, तो वह रोमन साम्राज्य को गाली दिये बिना नहीं रहता था, ऐसा ही उदाहरण हिन्दी लेखकों में पाण्डेयबेचन शर्मा 'उग्र'[३] का है, जो कि अपने जीवन के संध्याकाल में गाली दिये बिना कोई बात ही नहीं करते थे। ग़नीमत है कि उनकी ये गालियाँ उनके लेखन में प्रतिबिम्बित नहीं हुई : यद्यपि उनके लेखन में जो अति-यथार्थवाद है, वह इन्हीं गालियों का रूपान्तर भी कहा जा सकता है। चार्ल्स लैम्ब[४] और ए० जी० गार्डिनर[२] (अल्फा ऑफ दी प्लाऊ) में हमें जिस चरम वैयक्तिकता के दर्शन होते हैं, उसी का प्रतिबिम्ब उनके अभिव्यंजना-सौष्ठव में दिखाई देता है। हिन्दी रचनाकारों में हजारीप्रसाद द्विवेदी[६] अज्ञेय[७] और महादेवी वर्मा[८] के सशक्त गद्य में, इसी शैली-वैशिष्ट्य के दर्शन होते हैं। नीरज[९] के गीतों में इसी विशिष्ट पद-रचना की संस्कृति है, जो कि उर्दू-कवियों की चुनौती के रूप में, उनके काव्य में अभिव्यंजित हुई है। सिने-

---

१. श्यामसुन्दरदासः साहित्यालोचन, हिन्दी भाषा और साहित्य
२. डा० नगेन्द्र : रीति-काव्य की भूमिका प्र. १०५।
३. उग्र : फागुन के दिन चार के आधार पर 'चाकलेट' उग्र की कहानियाँ,
४. चार्ल्स लैम्ब : एसेज आन ईलिया
५. ए० जी० गार्डिनर : अल्फा आफ द प्लाऊ
६. हजारीप्रसाद द्विवेदी : बाणभट्ट की आत्मकथा
७. अज्ञेय : नदी के द्वीप, शेखर : एक जीवनी
८. महादेवी वर्मा : अतीत के चलचित्र, स्मृति की रेखाएँ, पथ के साथी और क्षणदा
९. नीरज (आधुनिक कविमाला)
१०. उसने कहा था (कहानी)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जगत में जो फिल्मी गीत आरंभ में बहुत प्रचलित हुए वे उर्दू-शायरों के द्वारा ही लिखे गये थे । इसी चुनौती को भरतव्यास और नीरज जैसे कवियों ने हिन्दी में स्वीकार किया और अब उनके भी गीत 'टकसाली, सिक्कों की तरह चल पड़े हैं। इसका कारण यही है कि नीरज ने 'बहते-नीर' के मर्म को समझा है और उसे अपने व्यक्तित्व की चाशनी में मिलाकर इस रूप में प्रकट किया है कि उनके गीत जनता के कंठों में गूंज रहे हैं। 'बहते नीर' के मर्म को अपने-अपने ढंग से चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी' सरदार पूर्णसिंह [1] और इधर के लेखकों में रामवृक्ष बेनीपुरी [2] तथा यशपाल [3] ने भी समझा है। यही कारण है कि उनकी रचनाएं जनता का कण्ठहार बनी हुई हैं।

८. अँग्रेजी की बैसाखियों का परित्याग :

किसी भी भाषा की शक्ति और सामर्थ्य उसके लेखकों के व्यक्तित्त्व में समाहित होती है। बहुत दिन तक हिन्दी, अंग्रेजी की बैसाखियों पर चलती रही, पर अब उसका स्वतंत्र व्यक्तित्त्व उभरा है और अनेक सशक्त गद्यकार हमारे सामने आये हैं। इस उपलब्धि के लिये हमें हिन्दी पत्रकारिता का ऋणी होना चाहिये। अनेक प्रतिभाशाली सम्पादकों ने भारतीय जीवन के बदले परिप्रेक्ष्य की सटीक एवं कलात्मक अभिव्यक्ति की है। श्रेष्ठ हिन्दी पत्रों के सम्पादकीय और समाचार-विन्यास, हिन्दी पत्रकारिता की प्रौढ़ता के परिचायक है। 'दिनमान' के माध्यम से अज्ञेय और उनके सहयोगियों [4] ने जिस पत्रकारीय भाषा को जन्म दिया था, वह अब काफी विकसित हो गई है, और अब उसके माध्यम से जीवन के विभिन्न रंगों, प्रतिच्छवियों एवं चटकीलेपन को प्रकट किया जा सकता है।

यदि आज के गद्य में व्यंग्य-विनोद ने जो बाँकी छटा विकसित करली है, उसका निर्देश न किया जाये, तो यह प्रकरण अधूरा ही रहेगा। हास्य जीवन का लवण है (ह्यूमर इज दी साल्ट ऑफ लाइफ), तो व्यग्यं-वक्रोति (सटायिर) आज की अभिव्यक्ति का प्राण है। मिर्च-मसालों से जैसे सब्जी या दाल जायकेदार बनती हैं, वैसे ही व्यंग्य-वक्रोक्तियों से भाषा-सौष्ठव में एक अजीब जायका आता है।

९. भारतीय भाषाएं और सांस्कृतिक मानस :

भारतीय भाषाओं में हमारे सांस्कृतिक मानस की अभिव्यक्ति हुई है। यह हो नहीं सकता था कि हमारी राष्ट्रीय भावनाएँ, हमारी भाषाओं में अभिव्यक्त न होतीं। भारत सदा से एक विकासशील दृष्टिकोण को लेकर चलता रहा है, यही कारण है कि इसके दृष्टिकोण में सदैव एक लचकीलापन रहा है। जो भी बाहरी जातियाँ यहां आईं, वे यहीं की होकर रह गईं। हमारी भाषाओं पर मुस्लिम एवं अंग्रेजी संस्कृति का स्पष्ट प्रभाव देखा जा सकता है, लेकिन हमने अपने निजस्व को नहीं छोड़ा है। हमारी राष्ट्रीय भाषाओं की पाचन-शक्ति इतनी तीव्र रही है कि उन्होंने विजातीय शब्दों को आत्मसात् करके, अपने ही हाड-मांस का अभिन्न अंग बना लिया है। हमारी शब्द-सम्पदा एवं मुहावरों में, फारसी, अरबी और अंग्रेजी के माध्यम से, यूरोपीय एवं अमरीकी प्रभावों को न्यूनाधिक रूप में ग्रहण किया है। परिनिष्ठित अभिव्यक्ति के लिये भारतीय भाषाएँ सदैव तत्पर रही हैं? राष्ट्रभाषा होने कारण हिन्दी की एक विशिष्ट स्थिति रही है, इसीलिये हिन्दी साहित्य पर अन्य साहित्यों की तुलना में अधिक विदेशी प्रभाव पड़े हैं। हिन्दी ने बड़ी योग्यता एवं बुद्धिमता के साथ इन प्रभावों को आत्मसात् किया है। कुछ ऐसी ही स्थिति बंगला, मराठी, गुजराती और तमिल-तेलुगु की रही है। किन्तु ये सभी भाषाएँ प्रान्तीय परिवेश तक सीमित रहने के कारण उतना विकास नहीं कर सकीं, जितना कि हिन्दी। हिन्दी पर एक ओर समृद्ध विदेशी भाषाओं का प्रभाव है, तो दूसरी ओर विकसित प्रादेशिक भाषाओं का प्रभाव भी उसमें देखा जा सकता है। इस

---

१. नयनों की गंगा, मजदूरी और प्रेम, सच्ची वीरता, आचरण की सभ्यता (सभी निबन्ध)
२. गेहूँ और गुलाब, पैरों में पंख बाँधकर (रेखाचित्र और यात्रा
३. झूठा-सच, देश द्रोही, बारह घंटे (सभी उपन्यास)
४. अज्ञेय, रघुवीर सहाय एवं सर्वेश्वर दयाल सक्सेना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकार हिन्दी अनेक राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय प्रभावों के बीच पनप रही है। अंग्रेजी तथा अनेक प्रादेशिक भाषाओं की अभिव्यक्ति को, हिन्दी ने अपने रूप में ढाला है।

१०. कोमल-कान्त-पदावली : शब्दशक्तियों की अर्थवत्ता :

जयदेव के काव्य के संदर्भ में 'कोमलकान्त पदावली' की बात कही गई है। यह वस्तुतः शृंगारिक काव्य की सीमा-रेखा है। शृंगार रस के परिपाक के लिये अत्यंत कोमल एवं सुन्दर वाक्यों की संरचना की जाती है। ये वाक्य मनःस्थिति-व्यंजक होते हैं, इनमें सूक्ष्मातिसूक्ष्म भावों को अभिव्यंजित करने की सामर्थ्य होती है। भारतीय काव्य शास्त्र में शब्दशक्तियों को एक विशिष्ट गरिमा प्राप्त है। इनके माध्यम से भाषागत भावों का सूक्ष्म विश्लेषण एवं निर्वचन किया जा सकता है।[1] लक्षणा एवं व्यंजना के भेदोपभेदों के द्वारा, हमारे यहाँ भाषा का गहन विवेचन, उपलब्ध है। लक्षणा को विशिष्ट गरिमा, छायावादी कवियों एवं लेखकों द्वारा मिली है, लाक्षणिकता के माध्यम से भाषा की अर्थवत्ता का विस्तार हुआ है और इसमें एक विशेष प्रकार की वक्रता आई है। व्यंजना के उपयोग से, सूक्ष्म आलोचना-संकेतों का, व्यंग्यपूर्ण निर्वाह संभव हुआ और भाषा ने नये क्षितिजों का संस्पर्श किया। लक्षणा एवं व्यंजना के उपयोग से विचारों के नये आयामों का उद्घाटन संभव हो सका है और लेखक अपनी मानसिक उधेड़बुन को सफलता के साथ अभिव्यक्त कर पाये हैं। ये सभी बातें, इस तथ्य की प्रकाशिका हैं कि भारतीयों को शैली-तत्त्व का, विशिष्ट पद-रचना के रूप में, गहन ज्ञान था। अब आवश्यकता, इसे नये सन्दर्भों में प्रकट करने की है।

११. विराम-चिन्हों का महत्त्व :

विराम-चिन्हों के सही उपयोग से, हमारी अभिव्यंजना में, स्पष्टता आती है और हमारे चिन्तन के क्रमिक चरण उद्घाटित होते हैं। आजकल विसर्ग-चिन्ह (कॉलन) और विस्मयादि बोधक चिन्ह (!) का बहुत प्रचलन है। विराम-चिन्हों के प्रयोग में, जो लेखक जितना सक्षम होगा, उतनी ही उसकी भाव-प्रेषणीयता में, सुविधा रहेगी। कभी-कभी विराम चिन्हों के अभाव में, भाषा, गोरखधन्धा और अबूझ पहेली बन जाती है। जो लेखक अपने विचारों को स्पष्टता के साथ प्रकट करना चाहता है, उसके लिये विराम-चिन्हों का प्रयोग, अपरिहार्य है।

१२. सन्धि-समास-बहुलाभाषा का ह्रास : हिन्दी का उदय !

इसी प्रकार सन्धि-समासों का अधिक उपयोग हमारी संस्कृतज्ञता का परिचायक है। इससे जहाँ एक ओर भाषा को परिनिष्ठित रूप की प्राप्ति होती है वहीं दुर्बोधता भी बढ़ती है। सन्धि-समास-बहुला संस्कृत भाषा विद्वानों में तो लोकप्रिय बनी रही, पर सामान्य जनता उसके बोझ को नहीं उठा सकी[2]। इसीलिये लोक भाषाओं के रूप में एक ऐसी क्रान्ति हुई, जिसने संस्कृत के ढले-ढलाये रूप को विध्वस्त कर दिया। अतः कोई भी लोकप्रिय लेखक, इस स्थिति का बहिष्कार करके ही आगे बढ़ सकता है। सन्धि-समास से मिलती-जुलती बात उपसर्ग-प्रत्ययों के बारे में भी कहीं जा सकती है। इनके प्रयोग से भी भाषा में दुरूहता आती है। अतः हिन्दी लेखक यथासंभव इनसे भी बचने का प्रयत्न कर रहे हैं। किन्तु यहाँ एक बात स्पष्ट करना, अत्यन्त आवश्यक है, और वह यह कि भाषा की परम्परा से हम अपने आपको बिल्कुल अलग भी नहीं रख सकते, किसी-न-किसी रूप में तो इससे प्रभावित होना ही होगा। इसकी कसौटी यही हो सकती कि हम इनका प्रयोग, केवल उसी रूप में करें, जो हमारी भाषा में सहज रूप में रल-मिल जायें। हिन्दी, संस्कृत की उत्तराधिकारणी तो है, पर दोनों के व्यक्तित्व और प्रकृति में काफी अन्तर भी है। अब वे दिन लद गये जब हिन्दी का पंडिताऊ रूप बनारस और इलाहाबाद में ढलता था, अब तो वह दिल्ली-कलकत्ता-

---

१. देखिये लेखक का अप्रकाशित शोध-प्रबन्ध, "जैनेन्द्र के उपन्यासों का मनोविज्ञानपरक शैली-तात्त्विक अध्ययन (शब्द-शक्तिपरक अनुसंधान एवं प्रतीक-योजना)।

२. देखिये हजारीप्रसाद द्विवेदीकृत 'बाणभट्ट की आत्मकथा'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बम्बई में अपने रूप को संवार रही है। अब उसका अखिल भारतीय व्यक्तित्व है, इस नाते उसमें प्रादेशिक भाषाओं का भी योगदान होगा। इन सबसे प्रेरणा एवं ऊर्जा प्राप्त कर, वह आगे की ओर बढ़ रही है और विश्व भाषाओं में अपने स्थान और वर्चस्व को सिद्ध करने जा रही है।

१३. अलंकारों का महत्व और परिसीमाएँ :

'अलंकरोतीति इति अलंकार :, जिस व्यक्ति ने यह उद्घोषणा की थी वह भली-भाँति जानता था कि अलकारों के द्वारा अभिव्यंजना-कौशल को, अपनी चरम सीमा पर पहुंचाया जा सकता है। अनुप्रास, यमक-श्लेष, रूपक-उपमा, स्वभावोक्ति, विरोधाभास आदि भारतीय अलंकारों तथा विशेषण-विपर्यय, मानवीकरण आदि पाश्चात्य अलंकारों के द्वारा भाषा की व्यंजकता में वृद्धि हुई है, इसे अस्वीकार नहीं किया जा सकता। परन्तु यदि आज का साहित्यकार केशव की तरह, दिमाग खुजला कर, अलंकारों का प्रयोग करने लगे, तो वह हास्यास्पद ही समझा जावेगा। अलंकारों के प्रयोग से स्वाभाविकता के प्राण नहीं घुटने चाहिये, उनका अनायास रूप में आना ही कविता-कामिनी का शृंगार है। अतिशय अलंकृति (द्व मच ऑर्नामेंटेशन) कविता-कामिनी में लदूपन ही ला सकती है और गद्य में इनका अत्यधिक प्रयोग रचनाकार के दैन्य को ही प्रकट करेगा। अलंकारों का समुचित एवं अनायास उपयोग हमारी अभिव्यक्ति में चार चाँद लगायेगा, यह निर्विवाद है। कभी-कभी कथन की सादगी भी प्रभावित करती है। सुभद्रा कुमारी चौहान[1] तथा बच्चन[2] की कविताएँ, जैनेन्द्र[3] तथा सियाराम-शरण गुप्त[4] का गद्य, इसका प्रमाण हैं। आधुनिक साहित्य में इन दोनों 'अतियों (एक्सट्रीम्स) से बचकर चलने का प्रयास किया जा रहा है। 'नदी के द्वीप'[5] के सशक्त हिन्दी गद्य की सभी ने सराहना की है। वह परिनिष्ठित हिन्दी गद्य का एक नया आयाम उद्घाटित करता है। सहज हिन्दी गद्य के प्रतिमान के रूप में जैनेन्द्र[6] के अद्यतन निबन्धों को प्रस्तुत किया जा सकता है। यद्यपि उनका वैचारिक धरातल बड़ा संश्लिष्ट है। निष्कर्ष रूप में यही कहा सकता है कि अलंकारों का सहज रूप में उपयोग ही आज के रचनाकार का लक्ष्य है।

१४. सौन्दर्य-परिकल्पनाएँ : सामान्य तत्त्व :

हमारे चेतन-मानस की अभिव्यक्ति वैचारिक साहित्य में होती है और अवचेतन तथा अचेतन मानस की कविता-कहानियों में। कहते हैं कि हमारा अवचेतन और अचेतन मानस ही मानव जीवन का वास्तविक आधार है, चेतन में तो मनुष्य का छद्म रूप ही सामने आ पाता है। दूसरे रूप में यह भी कहा जा सकता है कि मनोवेगों की अभिव्यक्ति कविता-कहानियों में होती है और वैचारिक ऊहापोह की अभिव्यक्ति निबन्ध में यद्यपि निबन्ध में भी मनोवेगों की अभिव्यक्ति के लिये गुंजाइश रहती है, ठीक उसी प्रकार, जैसे कि कविता-कहानियों में विचारों की अभिव्यक्ति के अवसर किसी-न-किसी रूप में आते हैं। मनोवेगों के माध्यम से हम अपनी सौन्दर्यमूलक परिकल्पनाओं को अभिव्यक्त करते हैं। प्रत्येक राष्ट्र का अपना पृथक् सौन्दर्यशास्त्र होता है, किन्तु कुछ ऐसी समान बातें भी हैं, जो सभी राष्ट्रों में न्यूनाधिक मात्रा में मिलती हैं। जापानी सौन्दर्य-परिकल्पना में छोटे पैर, वर्तुलाकार नासिका एवं पीतवर्ण को विशेष महत्व प्राप्त है। भारत में उतने छोटे पैरों और पीले रंग को सुन्दरता का प्रतिमान नहीं माना जा सकता, किन्तु तीखे नाक-नक्श एवं गौर-वर्ण, सभी राष्ट्रों को समान रूप से काम्य रहे हैं। संसार में आर्य सौन्दर्य, मंगोल सौन्दर्य, चीनी-जापान सौन्दर्य और रूसी-जर्मनी सौन्दर्य के अलग-अलग प्रतिमान हैं, किन्तु कई बातों में, पृथक्-पृथक् सौन्दर्य-परिकल्पनाएँ एक दूसरे के निकट आ जाती हैं। लम्बे डील-डौल

---

१. सुभद्रा कुमारी चौहान: 'मुकुल'
२. बच्चन: 'निशा-निमंत्रण' और 'एकान्त संगीत'
३. जैनेन्द्र: 'त्यागपत्र' और 'कल्याणी'
४. सियारामशरण गुप्त: 'झूठ-सच'
५. अज्ञेय: 'नदी के द्वीप'
६. जैनेन्द्र: 'समय, समस्या और सिद्धान्त'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एवं मांसल शरीर को सभी राष्ट्र समान महत्त्व प्रदान करते हैं। प्रसाद ने कामायनी में श्रद्धा को लेकर जो सौन्दर्यचित्र प्रस्तुत किया है, वह सभी जातियों एवं राष्ट्रों का प्रकाम्य हो सकता है :

"हृदय की अनुकृति बाह्य उदार
एक लम्बी काया, उन्मुक्त,
मधु पवन क्रीड़ित ज्यों शिशुसाल
सुशोभित हो सौरभ-संयुक्त।
नील परिधान बीच सुकुमार
खुल रहा मृदुल अधखुला अंग,
खिला हो ज्यों बिजली का फूल
मेघ-बन बीच गुलाबी रंग।"[1]

उपर्युक्त पंक्तियों में श्रद्धा को एक लम्बी उन्मुक्त काया के रूप में प्रस्तुत किया गया है और कहा है कि उसके हृदय में जो विशालता है, उसी का प्रतिरूप उसकी काया में प्रतिबिम्बित हो रहा है। भारतीय सौन्दर्य-परिकल्पना के अनुसार पद्मिनी स्त्रियाँ सौरभ-संयुक्त हुआ करती थीं, श्रद्धा से भी सुरभि का अनन्त-निर्झर सतत रूप में झरता है। दूसरे पद में नील और अरुणिम वर्ण के विभेद को विशेष महत्व प्रदान किया गया है। उसके उरोजों का सौन्दर्य भी इन रंगों के बीच उभरता है, जैसे श्यामल मेघ-मालाओं के बीच कोई अरुणिम वर्ण का विद्युत-प्रसून उद्भासित हो उठा हो।

कालिदास ने 'कुमार-संभव' में पार्वती का जो रूप-वर्णन किया है, वह भी भारतीय सौन्दर्य-परिकल्पनाओं को स्पष्ट करता है। वस्तुतः इस प्रकार के सौन्दर्य-वर्णन सार्वदेशिक एवं सार्वकालिक होते हैं। वे सम्पूर्ण मानव-समाज को अनुप्राणित करते हैं। डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में मानवीय एवं हार्दिक सौन्दर्य के लिये एक वाक्य लिखा है :

"इस नरलोक से किन्नरलोक तक एक ही रागात्मक हृदय व्याप्त है।"[2] यह राग सुन्दरता का ही राग है, जो कि सम्पूर्ण मानव जाति में हार्दिकता का संचार करता है। अंग्रेजी के प्रसिद्ध कवि जॉन कीट्स जब यह कहते हैं कि, "ए थिंग ऑफ ब्यूटी इज ए ज्वॉय फॉर एवर"[3] (सुन्दरता सतत् आनन्द का स्रोत है), तो वे ऐसी कोई बात नहीं कहते, जो कि किसी राष्ट्र-विशेष पर ही लागू हो। ऐसा कह कर वे सार्वभौमिक सत्य की ही अभिव्यक्ति करते हैं।

१५. शैली-तत्त्व के अध्येता का लक्ष्य :

साहित्य के धरातल पर कवियों एवं कथाकारों ने न जाने कितने सुन्दर नीड़ बनाए हैं और उनमें अपने व्यक्तित्व की सौन्दर्यमयी अभिव्यक्ति की है। इस अभिव्यक्ति में तभी सजीवता आ पाती है, जब कि वे अपने मानस की सौन्दर्य-परिकल्पना को साकार करते हैं। सृष्टि में साहित्यकार ने जो भी अद्भुत, वैचित्र्यमय एवं नवीन दृश्य देखा है उसी की अभिव्यक्ति उसकी रचना में हुई है। इस प्रकार हम देखते हैं कि अपनी कल्पना को साकार करने के लिये कोई भी सृष्टा साहित्यकार कुछ विशेष प्रकार के शब्दों का चयन करता है, वाक्य अथवा वाक्यांशों की संरचना करता है। इन्हीं के माध्यम से वह अपने व्यक्तित्व के अन्तर्निहित रूप को उन्मोचित करता है। शैली-तत्व के अध्येता का लक्ष्य यहीं होता है कि वह इन सभी सौन्दर्य-परमाणुओं का विश्लेषण एवं संश्लेषण करे और साहित्यकार के अगाध मानस-सरोवर में डुबकी लगाकर, नये सौन्दर्य-मूल्यों का प्रत्यंकन करे।

निष्कर्ष रूप में हम यही कह सकते हैं कि शैली-तत्त्व के अनुशीलन ने साहित्यकार के अभिप्रेत को हृदयंगम करने की एक ऐसी सुगम एवं वैज्ञानिक प्रक्रिया प्रदान की है, जो कि रचना के अन्तरंग एवं बहिरंग मूल्यों का उद्घाटन करती है। शैली-तत्त्व के अनुशीलन से हम किसी भी रचना की अन्तर्धारा को उसके वास्तविक रूप में मूल्यांकित कर सकते हैं, और वह रचना किन रूपों में हमारे मन को प्रभावित करती है, उसका भी विश्लेषण किया जा सकता है। जिस प्रकार मनोविश्लेषण में बाह्य रूप से आन्तरिक रूप की ओर प्रयाण होता है, उसी प्रकार शैली-तात्त्विक अध्ययन में भी वाक्य-संरचना से हम उन मूल-वृत्तियों तक पहुँच पाते हैं, जो कि साहित्यकार का उद्दिष्ट रही हैं। □

---

१. प्रसादः कामायनी, श्रद्धा सर्ग पृ. ४८ (पंजाब विद्यार्थी संस्करण)।
२. डॉ हजारीप्रसाद द्विवेदी : 'बाणभट्ट की आत्मकथा' पृ० सं० ३२७, सातवीं आवृत्ति।
३. कीट्स : 'कम्पलीट पोइटीकल वर्क्स ऑफ कीट्स'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उद्‌बोधन !

□ लालाराम गुप्ता
एम० ए० (पूर्वार्द्ध) : हिन्दी

साधना मत छोड़, साधक ! साध्य का साधन किए जा
पथ कँटीला, तिमिर गिरि-गह्वर, नदी-नद
ग्रीष्म, पावस, शिशिर हैं भय-रोग दुःख-प्रद
व्याधियों की आंधियों में भी सुमनमय मग किए जा।

आश और उल्लास भर दे जगत के प्रति-प्राण में
जान की बाजी लगा दे, विश्व के कल्याण में
तू निराश्रित प्राणियों को उर लगा, आश्रय दिए जा।

भाग्य का अवलम्ब ले, दुःख भोगना है दीनता
कर्म से मुख मोड़ना है, मूढ़ता मति-हीनता
वैषम्य जीवन का मिटा निर्भीक हो, परहित किए जा।

कवि, कृषक, धनवान, श्रमजीवी सभी को एक कर
द्वेष-दुख कर दूर उनमें, प्रेम के उद्‌गार भर
विजय-पथ के पथिक-वर ! तू सत्य का सम्बल लिए जा।

मोड़ कर धारा जलधि की, मरु-धरा की प्यास हर
हो जगद्‌गुरु देश फिर से तू वही शुभ कर्म कर
इतिहास-रचना कर नई, नवचेतना सबको दिए जा !

□□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य-लेख

शिकायतनामा :
एक तृतीय श्रेणी कुमार का 'प्रथमा' कुमारी के नाम

☐ प्रहलाद राय सोमानी 'पुष्प' एम० ए० पूर्वार्द्ध (हिन्दी)

श्रद्धीय कुमारी 'पुष्पा' प्रथमा 'टॉपर' :

मैं अपनी हार्दिक, यों कहिये 'हार्टियेस्ट' शुभकामनाएँ आपको समर्पित कर रहा हूं। श्रद्धेय इसलिए लिखा है कि आप यूनिवर्सिटी में बी० ए० में प्रथम स्थान प्राप्त कर छात्रों के समक्ष श्रद्धा की पात्रा बन गयी हैं। हाँ ! तो आपको मेरी शुभकामनाएँ स्वीकार हैं, ना।

आशा है आप तो ये खबरें कि कोल्हू विश्व-विद्यालय में कुमारी चुन्नी ने प्रथम स्थान प्राप्त किया, चक्रम यूनिवर्सिटी में प्रथम पन्द्रह स्थान प्राप्त विद्यार्थियों में तेरह छात्राएँ थीं, चूना यूनिवर्सिटी में प्रथम दस स्थान प्राप्त करने वाली छात्राएँ ही थीं, इत्यादि-इत्यादि बड़े ही ध्यान से पढ़ती होगी और अपनी सहेलियों में लड़कियों की महत्ता के गीत बड़े गर्व से गाया करती होंगी। यह स्वाभाविक भी है। हमने भी क्रोधपुर विश्वविद्यालय के पन्द्रहवें स्थान प्राप्त छात्र भूतनाथ की हवा शहर में बड़े जोर-शोर से फैलाई है। अपनी-अपनी जाति से सभी को प्यार होता है।

मगर मुसीबत एक ही है कि ये खबरें हमारे पिताश्री भी बड़े ध्यान से पढ़ते हैं। हम आज तक समझ नहीं पाये कि मैट्रिक में सात साल तक फेल होने वाले, आठवीं बार में आठ विषयों में नकल मार कर पास होने वाले श्रद्धेय पिताश्री को इन रिजल्टों में क्या दिलचस्पी है ? और क्यों ? खैर यह तो हम नहीं समझ पाये, परन्तु जब वे अखबार पढ़कर एक लम्बी-सी डकार लेकर लाल-लाल आँखों से गरज कर कहते हैं, "डूब मरो, 'चुगद कहीं के, तो हम फौरन समझ जाते हैं कि आज फिर किसी छात्रा ने परीक्षा के मोर्चे पर शूरवीरता का परमवीर चक्र प्राप्त किया है। बस, इसी के साथ हमारे श्रद्धेय पिताजी साहब का भाषण प्रारम्भ होता है—"शर्म नहीं आती ! मैं तुम्हारी जगह होता तो डूबकर जान दे देता।" (जब कि उन्होंने ऐसे स्वर्ण अवसर कई मर्तबा पाये हैं। थर्ड डिवीजन में भी वे 'बाइ ग्रेस' पास हुये) यह देखो जरा अपनी आँखें फाड़कर, फिर आज एक लड़की ने सिल्ली राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय बोर्ड की परीक्षा टॉप की है। पता नहीं आज के इन छोकरों को क्या हो गया ? संकरी पैन्ट पहनेंगे, छींट के बुशर्ट पहनेंगे, राजेश खन्ना जैसे बाल रखेंगे, हेमामालिनी के पीछे मरेंगे।"

(एक बार हमारे गाँव में टुनटुन के आने पर सबसे पहले देखने के लिए पहुँचने वाले श्रद्धेय हमारे पिताजी थे, हम दूसरे नम्बर पर थे।) दुनियाँ भर की आवारगी कर लेंगे, पर पढ़ाई इनसे नहीं होगी। आज तक ऐसा नहीं सुना कि लड़कियाँ लड़कों पर हावी हो जावें। मगर अब तो यह हाल हो रहा है कि रोजाना खबरें पढ़ने को मिलती हैं कि लड़कियाँ टाप कर रही हैं, विदेश जा रही हैं। ऊँची सरकारी नौकरियां पा रही हैं। एक्टरों से ज्यादा संख्या एक्ट्रेसों की है। (यह उनका प्रिय विषय है) अब कलयुग में बचा ही क्या है ? छी ! छी ! छी !..."

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम खड़े-खड़े नीची गर्दन किए मन-ही-मन अपनी असफलता और आपकी असफलता पर आँसू बहाते रहते हैं। मन में कहने के लिये कुछ रहता है मगर वो पिताजी ही क्या जो हमारी सुन लें। हाथ-पांव की सलामती का ख्याल कर चुपचाप खड़े रहते हैं और 'फूटने' की आज्ञा मिलने पर अपने 'स्टडी रूम' में आकर कुर्सी पर बैठ जाते हैं। तरह-तरह के विचार मन में आते हैं। कई कई बार मन कहता है—"यार डूब ही मरें तो अच्छा है।" मगर फिर सोचते हैं कि अगर हम ही मर गये तो दुनियाँ को कौन बतलायेगा कि हम छात्र कितने मजबूर हैं? कौन इन्हें बतलायेगा कि हमें क्या-क्या मुसीबतें सहनी पड़ती हैं। हमारे सिर पर कितनी जिम्मेदारियाँ हैं? किन तूफानों से हमें गुजरना होता है? आपने तो टॉप किया है। अतः मैं आशा ही नहीं, पूर्ण विश्वास करता हूं कि आप गंभीर और विचारशील होंगी। क्या आपको हमारी मजबूरियों का कुछ ज्ञान है! क्या आप जानती हैं कि हम छात्रों के लिये इस संसार ने क्या क्या मुसीबतें पैदा कर रखी हैं। मैं कहता हूं कि आप तो कल्पना भी नहीं कर सकतीं कि हम छात्रों पर कितने संकट के बादल हर समय मंडराये रहते हैं। मैं आज यह पत्र आपको इसलिये लिख रहा हूं कि कम से कम आपको तो हमारी मजबूरियों का ज्ञान हो जाय और आप जो कालेज के बरामदों में अपनी सहेलियों के साथ मिलकर हम पर हँसती हैं, उसे कतई छोड़ दें। सच कहता हूं, कि दुःखी होकर मैंने बरामदे में से निकलना ही छोड़ दिया है। अब केवल मैं ही 'लैट्रीन्' में से होकर पिछवाड़े से कालेज में प्रवेश नहीं करता अपितु मेरे अनेक साथी भी इसी पिछवाड़े के रास्ते से प्रविष्ट होते हैं। आशा है मेरा यह पत्र पढ़ने के बाद आपको हमसे पूरी सहानुभूति हो जायेगी और भविष्य में टॉप करने का विचार ही छोड़ देंगी।

इन मुसीबतों में सबसे बड़ी मुसीबत यह है कि हम लड़के हैं, आप लोग लड़कियाँ। मैं रोजाना सुबह उठकर सच्चे मन से भगवान से प्रार्थना करता हूँ कि—"हे भगवान, किसी को इस जमाने में लड़का न बनाना।" हमें याद नहीं आता है कि कक्षा में प्रोफेसर महोदय ने कभी हमसे कुछ पूछा हो या हमने कुछ बताया ही हो। हमारी ओर उनकी भृकुटि हर समय तनी रहती है, जबकि आपकी ओर वे हर समय खीसें निपोरते रहते हैं। आपको अच्छी तरह याद होगा, एक बार, और जिन्दगी में प्रथम बार एक सवाल का सही जवाब हमने दिया था। मगर जनाब प्रोफेसर साहब ने हमें यों घूरा जैसे हमने उनकी पूँजी दबा ली हो और फिर झिड़ककर बैठा दिया। फिर मिश्री जैसे मीठे स्वर से वही सवाल मिस 'झड़बेरी' से पूछा। मिस साहब ने 'अंग्रेजी' का जवाब 'संस्कृत' के फार्मूले में दिया। प्रोफेसर साहब ने पूरा जवाब भी नहीं सुना और उनके मुंह से बन्दूक की गोली के समान निकला 'गुड'। तब उन्होंने हमारी ओर कड़ी नजरों से देखा और गुर्राए "देखा"? ईडियट कहीं के।" उस पर गजब यह है कि आप सब लड़कियाँ हम पर खिलखिलाकर हँस रही थीं। हम मन ही मन सोच रहे थे कि कितना अच्छा होता अगर फर्श फट जाता और हम उसमें समा जाते। 'मगर अफसोस, नीचे भी एक कक्षा चल रही थी, क्योंकि हमारा कमरा ऊपर की मंजिल पर था) हमारी सूरत उस मरियल गधे जैसी हो रही थी जिसे कांजीहोज में बन्द कर दिया गया हो और जिसे कोई भी छुड़ाने को तैयार न हो। प्रोफेसर साहब तो आप लोगों की हँसी पर मुग्ध हो रहे थे और मेरे जालिम साथी मुझी पर हँस रहे थे। मैंने तभी कसम खाई कि अब कक्षा में एक शब्द भी नहीं बोलूंगा। इसी कारण मैं सात रोज तक हाजरी में 'यस सर' भी नहीं बोला। (मगर बाद में उपस्थिति कम होने के डर से बोलना प्रारंभ कर दिया।) एक दिन हिन्दी के प्रोफेसर साहब सिनेमा हॉल में "प्यार किसी से होता है" देखते हुए मिल गये। हमने हाथ जोड़कर नमस्ते किया तो जनाब ने गौर से हमें देखा और फरमाया—"आपको कहीं देखा है शायद।" हम सिट-पिटाकर चुपचाप खिसक गए। भूगोल प्रेक्टिकल की तो पूछो ही मत। कई मर्तबा हमें बिना प्रेक्टिकल किए ही लौट आना पड़ता है। क्यों कि भूगोल के प्रोफेसर साहब को घर से आने की फुरसत नहीं मिलती है और वे घर पर बाल-बच्चों सहित 'बिजी' रहते हैं। हमने एक बार (गलती से) प्रोफेसर साहब को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्द्धवार्षिक परीक्षा में हेल्प के लिए पुकार तो हुज़ूर ने फरमाया—**"हायर सैकेन्डरी में जाकर भर्ती हो जाओ।"** सालाना इम्ताहान के दिनों में बाहर से एक्जामिनर महोदय हमारे प्रैक्टीकल की परीक्षा लेने आये। आपके (लड़कियों के) हाथ-पांव फूल रहे थे, लेकिन जनाब आशिक मिज़ाज के थे, तो जनाब ने फरमाया—**'डोंट वरी'**। बहुत अच्छा प्रैक्टीकल जा रहा है।" जबकि हाल यह था कि आपको कुछ नहीं आ रहा था। परन्तु उस पर तुर्रा यह है कि आपने प्रैक्टीकल में युनिवर्सिटी में सबसे ज्यादा नम्बर पाये और हमने जिन्दगी में पहली बार जब अच्छी तरह प्रैक्टीकल किया तो एक्जामिनर महोदय ने दया करके छत्तीस नम्बर दिये।

दूसरी कठिनाई भी आप ही हैं। स्पष्ट बात के लिए क्षमा करें। कक्षा में आपकी ओर देखने से ही हमें फुरसत नहीं मिलती है। कौन-सा पीरियड चल रहा है, कौन महाशय पढ़ा रहे हैं, इन सबका कुछ भी ध्यान हमें नहीं रहता है। जिस प्रकार एक क्लर्क रिश्वत देने वाले की ओर बड़े प्यार से ताकता रहता है, उसी प्रकार हम भी आपको ताकते रहते हैं। आप भी समय समय पर हमारी ओर तिरछी निगाहों से देखकर अपनी सहेलियों से खुसर-पुसर करती रहती हैं। कभी आप कापी में लिखती हैं कभी अपने पास वाली सहेली कोनोचती हैं। कभी आप हँसती हैं, कभी आप नाक सिकोड़ती हैं। एक बार तो ऐसा हुआ कि नये प्रोफेसर साहब के लिए हमने अपने साथी से पूछा कि ये महाशय कौन हैं? मगर उसको भी मालूम नहीं था। दूसरे को पूछा, वह भी नावाकिफ-गर्ज यह है कि पूरी क्लास में किसी भी लड़के को पता नहीं कि वे जनाब कौन थे? उसमें गजब यह है कि वे पूरे एक महीने से हमारी कक्षा में पढ़ा रहे थे। इस सबका जिम्मेदार कौन है? आप हैं। हाँ आप ही जिम्मेदार हैं इसके लिए। आप न हों तो हम ध्यान से लेक्चर सुनें। आप तो ध्यान से लेक्चर सुना करती हैं और हम ध्यान से आपको 'ऑब्जर्व' करते रहते हैं कि आज आपने वही सलवार पहनी है, जो पिछले मण्डे को पहनी थी, होंठ पर आज 'पिंक' की जगह 'रोज' लिपस्टिक लगाई है। आज आपके पास एक नया-रूमाल है जिसके कौने पर 'पुष्प' कढ़ा हुआ है। अब हमारा दिमाग चक्कर लगा रहा है कि यह रूमाल किसका हो सकता है? हमारे पास सब हिसाब है कि आपके पास किस रंग के कितने सूट हैं और आप किस क्रमसे उन्हें पहनती हैं, किस धोबी से उन्हें धुलाती हैं? कितनी चप्पलें हैं इत्यादि-इत्यादि। आप ही अब बताइये, इस सबके हिसाब-किताब में हमारा कितना समय लग जाता है? कितनी मेहनत करनी पड़ती है? इसके अलावा भी हमें घर से जल्दी निकल जाना पड़ता है, ताकि हम आपसे पहले ही उस रास्ते पर जाकर खड़े हो जायें जिससे आप कॉलेज जाती हैं। शाम को हमें घूमकर आपके घर की तरफ से आपके पीछे जाना पड़ता है जिसमें डेढ़ मील का अधिक चक्कर होता है। रात को जब पढ़ने बैठते हैं तो किताब में आपकी सूरत नजर आने लगती है। हाल यह होता है कि रात के बारह बजे रहे हैं और हम बैठे सोच रहे है कि किस प्रकार आपसे बात की जाय। आपने हमें परसों 'चुगद' कह दिया था, उसके लिए क्या एक्शन लिया जाय? कल आप नत्थूलाल की तरफ देख रही थीं। शायद इसलिये कि वह नई स्टाइल से बाल बनाकर आया था। हमने सुबह साढ़े सात बजे उठकर उसी तरह के बाल बनाने की कोशिश शुरू की तो पूरे दो घन्टे और इक्कीस मिनट लगे, तब जाकर कहीं वैसे बाल बनें। मगर अफसोस? हवा का एक झोंका आया और हमारे बाल वापस 'झाड़ू कट' होगये। अब आप ही बोलिये। इन सब बातों में जो समय लगता है उसकी सब जिम्मेदारियाँ आप पर नहीं तो किस पर हैं? हमें पढ़ाई के लिए समय कहाँ मिल पाता है। हमारे पिताश्री फरमाते है, **"आखिर तुम्हें पढ़ाई के सिवाय काम ही क्या है?" उन्हें क्या पता कि कितने लफड़े हमारी छोटी-सी जान को है।**

किताब खोल कर पढ़ने का विचार करते हैं तो इतने ही में हमारे प्रिय मित्र चम्पत भाई आ धमकते हैं। आते ही गोलाबारी करते हैं, **"चौबीसों घण्टे पढ़ाई। मर जायेगा साले परीक्षा के पहले ही, आ चल तुझे चाय पिला लायें"** और ये चाय पूरे तीन घण्टे की साबित होती है। अब आप ही बताइये, है क्या कोई ऐसा जंजाल आपको? घर से निकलकर सीधी कॉलेज जाती हैं और कॉलेज से सीधे घर। क्लास में बराबर नोट्स लेती रहती हैं। पैंतालीस मिनट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के पीरियड में कुल पैंतालीस सैकेण्ड के लिए ही हमारी ओर देखती होंगी और हम पूरे समय आपको ही निहारते रहते हैं। आप कहीं चाय पीने होटल में नहीं जातीं, जहाँ चार घंटे लग जायें। हमारी तरह महीने में दस बार सिनेमा नहीं जातीं। आप किताबें खोलकर हमारी याद में नहीं खोई रहतीं। आपने अपने भ्राता महोदय से हमारे प्रिय मित्र गंगाराम के लिए पता नहीं क्या कह दिया कि वह डेढ़ महीने से अस्पताल में है। निश्चित ही है अब वह फ़ेल होगा। इसकी जिम्मेदारी किस पर होगी ? सीधी बात है, आप पर।

वैसे तो प्रोफेसर साहबान हमें पहचानते तक नहीं मगर जब कोई एक्जिबिशन या फंक्शन होता है तो प्रेम से फर्माते हैं—"भई यह तो तुम्हारा ही काम है, तुम्हें ही करना होगा, तुम्हारे कॉलेज की इज्जत का सवाल है।" (जब कि थोड़े दिनों पहले ही फरमा चुके होते हैं कि तुम जैसों के कारण कॉलेज की इज्जत मिट्टी में मिल रही है)। जनाब अंग्रेजी के प्रोफेसर साहब तो अपने पीरियड में हमें मशहूर काने पण्डित की दुकान से पान लाने को भेज देते हैं। जो कॉलेज से कम से कम दो मील दूर है। मगर क्या करें ? उन्हें उनके सिवाय किसी के पान पसन्द ही नहीं आते और वे हमारे श्रद्धेय पिताजी के लंगोटिया यार हैं।

हमें साहित्य पढ़े बिना चैन नहीं पड़ता है। दिन भर में जब तक आधी फिल्मी या जासूसी किताब न पढ़लें, मूड नहीं बनता है। घर पर तो समय इतना मिलता नहीं, इसलिए क्लास में ही पढ़नी पड़ती हैं। (उस दिन समाज शास्त्र के प्रोफेसर साहब ने पढ़ते देख लिया था और किताब छीन ली थी। बाद में कहते थे किताब काफी 'इण्टेरेस्टिंग' है)। अब इसमें भी समय चाहिए।

कहाँ तक गिनाएँ। हजार काम हमारी जान को हैं। सुबह साढ़े आठ बजे उठने से लेकर रात को सोने तक मरने की भी फुरसत नहीं मिलती। पढ़ें तो किस वक्त ? आपको तो इस तरह की भी मुसीबत नहीं है। क्लास में भी पढ़ना और घर पर भी पढ़ना ही पढ़ना। फिर पोजीशन क्यों न आये ? हमें इतना समय पढ़ने को मिल जाये तो पता नहीं क्या कर बैठें, पोजीशन लाना तो छोटी सी बात है। यह बात नहीं कि कभी हमारी पोजीशन न आई हो। चौथी क्लास में हमारी सत्रहवीं पोजीशन थी। तब की बात और है। फुरसत ही फुरसत थी। खूब पढ़ते थे।

ये तो कुछ दो-चार शिकायतें हैं। अगर सारी लिखने बैठें तो 'शिकायत पुराण' बन जाय और उस पर हम आसानी से पी० एच० डी० पा सकते हैं। खैर, आप फिल-हाल इन पर गौर फरमाइये। संसार हमारी मजबूरियाँ नहीं जानता। पिताजी प्रेम से कह देते हैं कि "डूब मरो। लड़कियों से भी गये बीते हो !" मगर वे यह सोचने की तकलीफ भी नहीं करते कि लड़कियों को कितनी सुविधायें हैं। जमाना भी इन्दिरा गाँधी (लेडीज फर्स्ट) का है। यह पत्र समस्त छात्रों का प्रतिनिधित्व कर रहा है। आप इसे गंभीरता से पढ़ें और इस पर अमल कर अपनी 'सहेलियों' को पढ़ाई से बाहर की दुनियाँ देखने की अमूल्य राय दें। आशा ही नहीं, पूर्ण विश्वास है कि आप विद्यार्थियों के प्रथम रहने की प्राचीन परम्परा को संरक्षण देंगी। पत्र के इस भाग तक पहुंचने तक आशा है आपको हमसे पूर्ण सहानुभूति हो चुकी होगी और साथ ही पोजीशन लाकर जो भारी भूल एवं अन्याय हमारे प्रति किया है उसके प्रति पश्चाताप कर चुकी होंगी। अतः आशा है अब आप आने वाले भविष्य में टॉप करने की कभी हिमायत न करेंगी।

वैसे तो पत्र में कोई गलत बात नहीं है, परन्तु फिर भी कोई गलत लगे, तो गलत समझ कर भुलादें। धन्यवाद

टॉपर सुकुमारियों से पीड़ित:—
कुमार (बी.ए) थर्ड डिवीजन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूर्य की आत्महत्या के लिए

□ अशोक सक्सेना, तृतीय वर्ष (वाणिज्य)

इस अन्तराल में–उपजी पीढ़ी,
आंखे खोलती है—
किसी रेकार्ड—प्लेयर की
मादक धुन सुनकर।
चबाती है अपनी आंखों से
दस से साठ साल तक की औरतों के जिस्म
आवाज होने पर निगल जाते हैं—थूक की तरह
समर्थ है.....!
मुंह में भरी लार को
मनचाही इकाई पर टपकाने में
क्योंकि—
सामाजिक मान्यताओं की सलीब को तोड़कर
फेंक दिया गया है, किसी गहरे समुद्र में।
चौराहे की किसी ट्यूब-लाईट को फोड़कर
टाँक देते हैं अपने सूर्य को और उसकी रोशनी में,
चमकीले रंगों से पोत देते हैं—मुखौटे,
जिन्हें वे भविष्य में पहनेंगे।
संयुक्त रूप से तैयार करते हैं कोरस,
जिसे वे अपनी–अपनी भाषाओं में
रूपान्तरित कर कल गायेंगे।
एल. एस. डी. और शराब-सेवन के बाद
नारे लगाते हैं ईश्वर-चिन्तन के
और वहां भी सम्पृक्त रहते हैं
सैक्स-जैसी कमजोर विषय-वस्तु से।
जीने की सार्थकता को
प्रमाणित करने के प्रयत्न में,
धर्मग्रन्थों को बेच देते हैं,
रद्दी के भाव किसी कबाड़ी बाजार में,
और नि:संकोच,
वात्स्यायन के कामसूत्र से मोरेविया के
'द वूमन ऑफ रोम'
के मध्य सम्पन्न करते हैं यात्राएं;
और आने वाले दिन की प्रतीक्षा में
नसों में दौड़ाते हैं मार्फिया
झुक जाते हैं किसी जिस्मफरोश औरत की गोद में
ओ मेरे ईश्वर ! तुम्हीं बताओ
सूर्य की आत्महत्या के लिए
क्या यह सब काफी नहीं हैं !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कविता-कामिनी

⊙ प्रा० बुद्धि प्रकाश आर्य

ले रस प्रवाह की निर्झरिणी मचली है
मेरे मानस की गागर छल-छल छलक रही

कमनीय बनी रमणीय अर्थ कविता सी
यौवन में झलकी कांति नवल सविता सी
व्यंजना लक्षणा सी कल कुंचित अलकें
संचारी सी हैं चपल तुम्हारी पलकें
ऋजु ग्रीवा में अभिधेय अर्थ गुंजित है
व्यतिरेक कांति उसमें गुंजित पुंजित है
पग नूपुर की ध्वनि गूंज रही झनझन है
उसमें भी ब्रह्मानन्द सहोदर-पन है।

मद भरे नयन-वाणों से कविता पुलक रही
मेरे मानस की गागर छल छल छलक रही

ब्रह्माण्ड युगल हैं तेरे भुज-पाशों में
कवि की वासना उमड़ती निश्वासों में
है अलंकार बहुला यह तेरा जीवन
रस भरे मदन कलशों में खो जाता मन
भावों की सूक्ष्म कल्पना कटि भी लपकी
चट ताल थिरक में मत्त भावना किलकी
भर किलकारी अनुराग-राग है ठनका
हिनहिना उठा उन्मत्त तुरंग कवि-मन का!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

मदभरी छबीली छम--छम थम--थम मचल रही
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
मेरे मानस की गागर छल-छल छलक रही

तू अनुभावों की चपल चित्रशाला सी
उद्दीपन आलम्बन की मधुशाला सी
तू हास्य—सुमन रोदन के लेकर मोती
शृंगार सेज पर करुण मिलन के सोती
जब तुझे गुदगुदाता पा प्रियतम अवसर
छेड़ देता राग मनुहार विपञ्ची स्वर पर
मधुमती ब्रह्म की शक्ति बनी अम्बर—में
छा जाती बन भूमिका प्रणय के स्वर—में।

जन—जन को भाव विभोर भावना पुलक रही
मेरे मानस को गागर छल छल छलक रही

तू मेघ दूत की कभी यक्षिणी बनती
कवि बाल्मीकि के शाप रूप में ढलती
रस करुण एक ही निमित भेद से जग में
कर देती है चरितार्थ करुण जीवन में
रण की तू कभी प्रचण्ड चण्डिका बनती
शोणित पीती शृंगार खड्ग का करती
तू कोप-मेघ में तड़क उठी दामिनि-सी
निश्वासों से विष उगल रही नागिन-सी!

लो काव्य—कामिनो बनो कालिका किलक रही
मेरे मानस की गागर छल छल छलक रही ⊙⊙

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रवाही सम्पत्ति : खनिज तेल

⊙ प्रा० पुरुषोत्तम परांजपे

अभी कुछ दिन पूर्व ही राजस्थान के एक एम. पी. ने लोक सभा में यह मांग की, कि राजस्थान के पश्चिमी भाग में खनिज तेल (पेट्रोल) एवं गैस के लिये सर्वेक्षण कराया जाये। तेल एवं गैस आयोग द्वारा ऐसे सर्वेक्षेण भारत के अनेक भागों में चल रहे हैं। नदियों के मुहाने पर एवं निकट के समुद्री भागों में तेल मिलने की संभावना भी है। इनमें से 'बांम्बे हाई, में तो तेल का बड़ा भंडार है। प्रश्न यह उठता है कि इस तेल की प्राप्ति के लिये इतने प्रयत्न क्यों किये जा रहे हैं? वस्तुतः यह खनिज तेल इतना बहु गुणी है कि आज के युग में जिस देश के पास इस तेल की कमी है वह देश परावलम्बी हो जाता है, तथा मध्य-पूर्व एशिया के वे देश जिनके पास इस तेल की बहुतायत है तथा अन्न कुछ भी नहीं है, उनकी प्रतिव्यक्ति आय दुनिया के अमीर देशों के बराबर है, और अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में उन्हें महत्त्व पूर्ण स्थान प्राप्त है।

खनिज-तेल जमीन के अंदर गहराई में प्राप्त होता है। इसे निकालने के बाद 'रिफाइनरीज' में शोधन किया जाता है जिससे इसके विभिन्न रूप अलग-अलग हो जाते हैं जिनमें से प्रमुख हैं-- (१) नैचुरल गैस (२) पैट्रोल (३) डीजल (४) कैरोसिन (५) लुब्रीकेन्ट (६) मोम (७) कोलतार (८) नेप्था (९) कोक।

सर्वोपयोगी ईंधन :

दुनियां में ईंधन के रूप में खर्च होने वाले पदार्थों में से आधा ईंधन खनिज तेल एवं गैस के रूप में खर्च होता है। अमेरिका जैसे विकसित देशों में यह ७५% तक है। भारत में भी इस ईंधन की सुविधा के कारण, स्टोव प्रत्येक परिवार में आवश्यक हो गया है। गत एक सौ वर्षों में इसी ईंधन ने मनुष्य को कठोर श्रम से बचाया है। मशीनें तो अक्सर पैट्रोल, डीजल से चलने वाली ही होती हैं जिनकी सहायता से आज मनुष्य की कार्य क्षमता कई गुनी बढ़ गयी है।

खनिज तेल अच्छे ईंधन के साथ साथ प्रवाही ईंधन है अतः यह एक स्थान से दूसरे स्थान तक नलियों द्वारा सुविधा-पूर्व पहुँचाये जा सकते हैं, आसाम से प्राप्त होने वाले तेल, चार सौ मील दूर बरौनी तक, पाईयों में बह कर आता है। इतनी दूर तक तेल को लाने का व्यय रेल खर्च को तुलना में नगण्य होता है। इस ईंधन के जलने पर राख भी नहीं बचती जो कि कोयले के जलने से बचती है। यह इसकी अतिरिक्त सविधा है।

बिजली निर्माण करने में डीजल हैवी फ्यूएज आयल का उपयोग तो होता ही है साथ ही पश्चिमी देशों में घरों को गर्म रखने के लिये भी कैरोसीन तथा गैस का उपयोग किया जाता है।

आधुनिक यातायात का आधार स्तंभ :

स्कूटर, कार, वायुयान, एक ही बार में ३५० यात्रियों को ७०० मील प्रति घंटा की रफ्तार से ले जाने वाले जैट यान पैट्रोल से ही चलते हैं। बसें, ट्रक्स, रेल इंजन, बड़े-बड़े जलपोत, मोटर लांच, डीजल से ही चलते हैं। कोयले से चलने वाले इंजनों की अपेक्षा डीजल इंजन कम खर्च से तथा एक बार ईंधन लेकर अधिक दूर तक वेग से चल सकते हैं। पानी की आवश्यकता इन इंजनों में नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पड़ती। यह इन इंजनों का विशेष लाभ है। देश की रक्षा के लिये प्रयोग में आने वाले बड़े-बड़े अस्त्र शस्त्र भी इसी ईंधन पर निर्भर हैं। यह ईंधन यदि कम पड़ जाये तो लड़ाकू विमान, टैंक, मिलेट्री ट्रक, जीपें, ये एक ही स्थान पर रुक जायें। लड़ाकू जल पोत, छोटी २ लांचे आदि की गति ही न रहे। वर्तमान में बंगला देश के मुक्ति संग्राम को दबाने के लिये, पाकिस्तान को जो सैनिक और सामग्री वायुयानों द्वारा भेजनी पड़ी उसे भेजने में सबसे बड़ी कठिनाई पैट्रोल की ही थी।

लुब्रीकेशन :

प्राचीन काल से ही भारत और इजिप्ट के लोग वनस्पति जन्य तेलों को पहियों में लगाते थे ताकि घर्षण कम हो और वाहन तेज चल सके। आज के असंख्य यंत्रों को भी गतिमान रखने के लिये लुब्रीकेशन करना अति आवश्यक है। यदि मशीनों में तेल न दिया जाये तो वे चल न सकें, गर्म हो जायें, जल जायें एवं थोड़े ही दिनों में घिस कर बेकार हो जायें। यह लुब्रीकेन्ट द्रव रूप में हो सकते हैं ग्रीज जैसे मुलायम तथा ठोस भी हो सकते हैं। मोमबती जैसे कठोर भी हो सकते है। कोई घड़ी के सूक्ष्म यंत्रों में लगाने लायक होता है तो कोई भीमकाय मशीनों में लगाने लायक। यह सभी लुब्रीकेंट खनिज तेल से ही प्राप्त होते हैं।

रोशनी का साधन :

आज भी देहातों में कैरोसीन से जलने वाले लैम्प, लालटेन, पैट्रोमैक्स आदि रोशनी के प्रमुख साधन हैं। शहरों में भी बिजली बन्द होने पर रोशनी का सहारा मोमबत्ती ही बनती है। कैरोसीन, और मोम खनिज तेल से ही प्राप्त होते हैं।

तेल विश्वामित्री:

ऊपर लिखे मुख्य उपयोगों के अतिरिक्त खनिज तेल से प्राप्त पदार्थों के उपयोग अगणित हैं छपाई की स्याही, दरवाजे खिड़कियों पर लगाने वाले रंग, वार्निश, कृत्रिम कांच, कृत्रिम प्लास्टिक, वस्त्रों के धागे, रबड़, सुगंधियों, फोटोफिल्म इन सबके बनाने में काम आने वाला मूल तत्त्व तेल ही है। बूट पालिश में काम आने वाले पैराफीन वैक्स, मोटर फर्नीचर, पौलिश में काम आने वाल मोम, दियासलाई देर तक जले इसलिये लगाने वाला मोम खनिज तेल से ही प्राप्त होता है। कार्बन पेपर, टाइप राईटर रिबिन का मसाला मोम से ही बनता है। टेढ़े-मेढ़े पुर्जो और नकली दांतों के सांचे भी मोम के ही बनते हैं। ऐसे ही न जाने कितने ही अन्य उपयोग इस मोम के गिनाये जा सकते हैं।

औषधियों के क्षेत्र में :

लिक्विड पैराफीन पेट साफ करने की दवाई है। सफेद ग्रीज सब प्रकार के मलहम बनाने की आधार-वस्तु है। कुछ दवाइयाँ भी खनिज पदार्थों से बनती हैं। ऑपरेशन के औजार 'व्हाइट ऑयल' में रखे जात हैं, जिससे कि वे जन्तु विरहित, शुद्ध रहें। दाढ़ी बनाने के ब्लेड पर हलकी परत तेल की होती है, जिससे वह ऐन्टीसैप्टिक रहे। खनिज तेल ज्वालाग्राही होने के कारण स्फोटक मिश्रण बनाने के काम आता है, पर इसी से निकले कुछ रसायन आग बुझाने के काम भी आते हैं।

सौंदर्य-प्रसाधनों के क्षेत्र में :

भिन्न-भिन्न-प्रकार की सुगन्धियां, हेयर टॉनिक, शेम्पू, कोल्ड-क्रीम, हेयर-लोशन, तेल पॉलिश, इन सब पदार्थों को बनाने में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से खनिज तेल सहायक है।

वस्त्रों में रेयॉन, नायलॉन, डेकरॉन, एसिटेट, आरलॉन आदि के धागे खनिज तेल से ही बनते हैं। इनके रंग भी खनिज तेल पदार्थों की सहायता से ही तैयार किए जाते हैं।

कोक और कोलतार :

तेल-शोधक कारखानों में सबसे गन्दा निम्न कोटि का जो पदार्थ निकलता है, वह कोलतार? पर यह भी सड़क निर्माण में, वाटरप्रूफ कपड़े, एवं कागज बनाने में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपयोगी है। कोक के साथ-साथ, कार्बन इलेक्ट्रोड वाल्व के भाग बनाए जाते हैं और धातु- शोधन में भी यही काम आता हैं।

कृषि के क्षेत्र में :

सहस्त्र गुणों से युक्त यह रसायन, कृषि के लिए भी विशेष उपयोगी है। ट्रैक्टर, घास काटने की मशीन तथा पानी खींचने के पंप आदि डीजल या पैट्रोल से ही चलते हैं। इनके कारण कृषक की कार्य क्षमता बढ़ जाती है और वह कम श्रम करके, अधिक पैदा कर लेने में सक्षम हो जाता है। अमेरिका जैसे देशों में तो इन यंत्रों के बिना कृषक, का काम ही नहीं चल सकता। फसलों की दुश्मन घास, फसलों को नुकसान करने वाले कीट, फलों पर लगने वाले कीटों पर जो दवाइयाँ छिड़की जाती हैं, वे खनिज तेल से ही बनाई जाती हैं। कृत्रिम वर्षा करने में जो, रसायन काम में आता है, वह भी खनिज तेल से ही बनता है।

कृषक को सिंचाई हेतु पानी नहरों और तलाबों से प्राप्त होता है। लेकिन इस पानी का ४०% भाग वाष्प बन कर उड़ जाता है। अतः पानी की बचत के लिए इजराइल एवं आस्ट्रेलिया में पानी के ऊपर ब्यूटिल रबर डालते हैं जिसकी पानी की सतह पर परत पड़ जाती हैं, और पानी का वाष्पीकरण बन्द हो जाता है। पानी की निचली सतह पर भी इस रबर की हलकी-सी परत रहे तो भूमि द्वारा शोषित पानी की मात्रा भी कम हो जाती है। इस ब्युटिल रबर के बनाने के लिए भी खनिज तेल का उपयोग किया जाता है।

कृत्रिम खाद :

यदि खेतों में अधिक अन्न उपजाना है तो खाद की आवश्यकता होगी। नैसर्गिक खाद पूरी नहीं है, इसलिए कृत्रिम खाद बनाने की आवश्यकता पड़ती है। इसके बनाने की कई विधियाँ हैं, उनमें से 'नेप्था' विधि महत्वपूर्ण है। यह 'नेप्था' खनिज तेल से ही प्राप्त होता है।

तिलहन से तेल निकालने की प्रचलित विधि है घानी में तेल बीजों को पीसना। इस तरीके में बीजों से पूरा तेल प्राप्त नहीं होता और जो खली बचती है, उसकी भी अधिक कीमत प्राप्त नहीं होती। लेकिन आधुनिक तरीके के अनुसार सालवेंट में तेल-बीजों को डालकर तेल निकाला जाता है। इस विधि से तेल अधिक प्राप्त होता है, साथ ही बची खली से प्रोटीन प्राप्त की जा सकती है। तेल में से सॉलवेंट को अलग निकाल कर इसका पुनः उपयोग किया जा सकता है। यही सॉलवेन्ट फूलों से इत्र निकालने में दवाइयों के काम आने वाले विभिन्न प्रकार के तेलों को निकालने में सहायक होता है। यह खनिज-तेल से ही बनता है।

खनिज तेल की सहायता से राजस्थान के रेतीले भागों में भी फसल होने की संभावना बढ़ गई है। लीबिया में और कई अफ्रीकी देशों में बालुई जमीन पर तेल के साथ एक रसायन छिड़कने से, बालू के कण आपस में चिपक जाते हैं और हवा के साथ नहीं उड़ते। लीबियां में ऐसी भूमि पर इमारती लकड़ी के पेड़ लगाए गए हैं। इस रसायन को भी खनिज तेल से ही बनाया जाता है।

खनिज तेल के साथ-साथ मिलने वाली गैस को प्राकृतिक गैस कहते हैं। उपयोग की दृष्टि से यह तेल से भी बढ़कर है।

काला-सोना ;

खनिज तेल एवं प्राकृतिक गैस आधुनिक मानव जाति के जीवन को प्रतिक्षण समृद्धि की ओर ले जा रहे हैं। वर्तमान में किसी देश की समृद्धि का प्रतीक खनिज तेल ही हैं। इसलिये इसे काला सोना प्रवाही सोना भी कहते हैं। भारत में अभी-भी इसकी कमी है। हमें अभी बहुत बड़ी मात्रा में तेल आयात करना पड़ता है। प्रयत्न चल रहे हैं कि तेल के नए भंडार खोज कर आत्म-निर्भर हो सकें।

□□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्यिक आलोचना

○ प्रा. उपेन्द्र शर्मा,

सुकरात के इस प्रश्न कि 'काव्य क्या है?" कवियों का यह उत्तर कि काव्य ही है, इससे परे या अतिरिक्त कुछ नहीं, पर्याप्त समझा गया। निःसन्देह साहित्य जगत में अनक्रिटीकल क्रियेशन (अनालोचनात्मक सृजन) के समान अनक्रिट्रीकल एन्जॉयमेंट (अनालोचनात्मक आनन्दानुभूति) भी सम्भव है, किन्तु ये दोनों बिरले अनुभव हैं। जैसे ही सृजनकर्त्ता यह अनुभव करने लगता है कि वह अपने मनोभावों को अमुक प्रकार से अधिक कुशलता से व्यक्त कर सकता है, जैसे ही तुलनात्मक दृष्टि से विचार कर वह चुनाव करता है; आलोचना का उदय हो जाता है। इसका आशय यह हुआ कि साहित्यिक सृजन की प्रक्रिया के अन्तर्गत आलोचना आरम्भ हो जाती है। लेकिन साहित्य में आलोचना का स्वरूप और गति उस समय प्रकट होती है जब बौद्धिक सिद्धान्तों के प्रति आग्रह (अपील) हो। आलोचनात्मक बुद्धि, विशेषरूप से गद्य साहित्य में, सृजन-कर्त्ता को अपने सृजनात्मक कौशल को अधिक स्पष्ट और प्रभावपूर्ण ढंग से व्यक्त करने में सहायक होती है। वस्तुतः सृजनात्मक कौशल और आलोचनात्मक प्रवृत्ति के मध्य विभाज्य रेखा खींचना कठिन है। अनेक साहित्यकारों में इन दोनों का सहअस्तित्त्व पाया जाता है। सम्भवतः आलोचनात्मक प्रवृति के कारण मैथिली शरण गुप्त तथा वर्डसवर्थ अपनी रचनाओं का पुनर्विलोकन, परिवर्तन तथा संशोधन किया करते थे। रचना के शिल्प–कला पक्ष–के सौन्दर्य निखार और सुदृढ़ता के क्षेत्र में आलोचनात्मक बुद्धि बहुत सहायक होती है। आलोचनात्मक दृष्टि पाठक की आनन्दानुभूति में भी योग देती है आलोचना और सृजनकला की समीपता तो इससे स्पष्ट है कि डा. जॉनसन, हजारी प्रसाद द्विवेदी तथा महोदवी वर्मा के आलोचनात्मक गद्य में विश्लेषण के साथ–साथ कलात्मकता भी है। गद्य-साहित्य में, विशेषरूप से शिल्प की दृष्टि से, रचयिता में आलोचनात्मक योग्यता अपेक्षित है। 'रचना-शिल्प' के शिथिल होने के कारण टॉमस हार्डी तथा प्रेमचन्द जैसे प्रख्यात उपन्यासकारों की रचनाओं में आलोचक असंगतियों की ओर संकेत किये बिना न रह सकी। काव्य में भी शब्द–चयन, गीतात्मकता, अलंकारिकता अर्थात कला पक्ष—में आलोचनात्मक बुद्धि का योग होता है।

नितान्त विशुद्ध अनुभव, काव्यात्मक प्रेरणा व अनुभूति को स्वरूप प्रदान करने के लिये किसी न किसी माध्यम की आवश्कता होती है। माध्यम का उचित चुनाव तथा रुचिकर उपयोग कलाकार की भावना नहीं वरन् बुद्धि पर निर्भर रहता है। विशुद्धतम कविता की सृजन प्रक्रिया में भी किसी न किसी रूप में बुद्धि का योग होता है। सृजन और आलोचना का आधार भूत भेद यह है कि अध्ययन और प्रयत्न द्वारा आलोचनात्मक ज्ञान की प्राप्ति और विकास सम्भव है जब कि कला मूल रूप से दैविक वरदान है। काव्य को दैविकवाणी (डिवाइन वॉयस) का सम्मान इसीलिए प्राप्त है।

साहित्य में एक पृथक शाखा के रूप में आलोचना साहित्य सम्बन्धी प्रश्नों, उनके उत्तर तथा विवेचन में प्रकट होती है। मूल जिज्ञासा यह रही है कि वास्तव में साहित्य है क्या वस्तु ? इसका प्रयोजन या अर्थ क्या है? हम विचार विमर्श द्वार साहित्य-कला की प्रकृति (नेचर) और वृत्ति (मूड) को समझने का यत्न करते हैं। आलोचना द्वारा हम साहित्य की विविध विधाओं के गुण, विशेषताएँ आदि की गहनता में जाने का यत्न करते हैं। रचना के विषय के साथ-साथ उसका शिल्प व स्वरूप (फॉर्म) आलोचना का विषय है तथा रचना के गुण व

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशेषता, आदि का बौद्धिक विश्लेषण आलोचना का प्रयोजन है।

वस्तुतः साहित्य सृजन के मूल में भावनाएँ, अनुभूति, प्रभाव, अनुभव आदि निहित होते हैं लेकिन आलोचना का आधार भावनाएँ व प्रभाव नहीं वरन् विश्लेषण होता है। आलोचना का इतिहास अधिकांश में उन नियमों तथा सिद्धान्तों का संकलन रहा है जिनके अनुसार विभिन्न साहित्यिक रचनाओं के सृजन की परम्परा स्थापित हुई तथा जिनके द्वारा रचनाओं का मूल्यांकन किया गया। लेकिन साहित्यकला के विकास के साथ परम्परागत आलोचना के सिद्धान्त और नियम क्रमशः विघटित होते गये। प्रगतिशील साहित्यकारों ने परम्परा से मुक्त होकर साहित्य में नवीन मूल्यों की स्थापना की और तदनुसार आलोचना की दृष्टि व दिशा भी परिवर्तित हुई। उदाहरणार्थ ग्रीक महाकाव्यों की परम्परानुसार आलोचकों का दुखान्त नाटक तथा महाकाव्यों में उदात्त नायक तथा अलौकिक तत्त्वों के समावेश का आग्रह रहा। इसी प्रकार फ्रांस के 'क्लासिकल' नाट्यकारों ने संकलन-त्रय (थ्री क्लासिकल यूनिटीज) का नाटकों में निर्वाह आवश्यक माना। किन्तु कालान्तर में शेक्सपियर, कालिदास तथा आधुनिक युग में गॉलसवर्दी तथा प्रसाद जैसे नाट्यकारों ने इस सीमा का निर्वाह किये बिना ही न केवल उत्कृष्ट नाटकों की रचना की वरन् विशिष्ट गुणों का आरोप भी किया। वस्तुतः केवल उन्हीं सिद्धान्त और नियमों द्वारा जो सामान्य तौर पर साहित्य की प्रकृति और प्रयोजन को स्पष्ट करते हैं इस बात का निर्णय किया जा सकता है कि साहित्य के लिये क्या आवश्यक है। आलोचना की सार्थकता साहित्य सृजन के लिये नियम और सिद्धान्त निर्धारित करने में नहीं वरन् उन उपायों के सुझाने और प्रयुक्त करने में हैं, जिनके योग से साहित्यानुशीलन अधिक सचेष्ट और सफल बन सके। सृजन और अनुशीलन के मध्य आलोचना एक अवरोध नहीं वरन् सहायता की कड़ी होनी चाहिये। इस संदर्भ में 'आलोचना' शब्द का शाब्दिक और रूढ़ अर्थ भ्रमोत्पादक है। आलोचना का अर्थ निन्दा कदापि नहीं वरन् सहज मूल्यांकन है।

आलोचना के संदर्भ में आलोचक के कार्य का प्रासंगिक विवेचन अपेक्षित है। आलोचक वस्तुतः सृजनकर्त्ता और पाठक या दर्शक के बीच मध्यस्थ है और उसका विषय हैं वे साहित्यिक रचनाएँ जिनका अध्ययन अपने आप में एक पूर्ण और रूचिकर अनुभव है। आलोचक का कार्य यह है कि वह साहित्य अनुशीलन में सहायक हो तथा आनन्दानुभूति को गहरा और व्यापक अनुभव का रूप दे। किन्तु आलोचक रचयिता के व्यक्तिगत जीवन या उसके राजनैतिक मतों जैसे अनावश्यक विषयों में उलझ जाते हैं। वे यह भूल जाते हैं कि कृति मूलरूप से कलाकार के व्यक्तिगत दृष्टिकोण की अभिव्यक्ति है। इसके साथ ही कलाकार में विशुद्ध सृजनात्मक क्षमता होती है। वह शब्दों के माध्यम से सौन्दर्ययुक्त सृजन का आग्रह अनुभव करता है। व्यक्तिगत दृष्टिकोण के अभाव में रचना परम्परागत शैली के अधीन हो जाती है और सृजनात्मक क्षमता के अभाव में रचना आत्मकथा अथवा जीवनी मात्र! अतः योग्य आलोचक को सृजनकर्त्ता के उक्त दोनों पक्षों को दृष्टि में रखना चाहिये। परम्परागत आलोचक, जॉन मिल्टन की शैली के आलोचक इसलिये हैं कि उनकी कृतियों में लैटिन शब्दावली का बाहुल्य है या प्रसाद के नाटक की भाषा अत्यन्त क्लिष्ट है। उचित तो यह है कि किसी भी रचना का मूल्यांकन सृजनकर्त्ता के दृष्टिकोण के अनुसार तथा रचना के आन्तरिक गुणों के आधार पर किया जाय। नियमों और सिद्धान्तों का आरोप सृजन और आनन्दानुभूति दोनों को कुंठित कर देता है।

दूसरी ओर व्यक्तिवादी और मनोवैज्ञानिक कहे जाने वाले आलोचक हैं। ये किसी कृति को लेखक की अभिव्यक्ति मात्र मान कर इस आधार पर उसकी सफलता का निर्णय करते हैं कि वे स्वयं किस सीमा तक लेखक के विचारों से सहमत हैं। उनकी दृष्टि में प्रस्तुत पात्रों का क्या स्थान है। अर्थात वे कुछ विशेष मान्यताओं को आधार मान कर आलोचना में प्रवृत्त होते हैं। ऐसे आलोचक स्टर्न पर अनैतिकता तथा थैकरे पर अत्यधिक नैतिकता का आरोप लगाते हैं। रामचन्द्र शुक्ल तुलसी-साहित्य की नैतिकता और मर्यादावाद के जितने मुक्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रशंसक हैं, उतने ही वे सूर-साहित्य की मर्यादाहीनता के कटु आलोचक हैं। सूर-साहित्य के कलात्मक सौन्दर्य और रागात्मकता के प्रति वे मूक भी नहीं हैं। प्रयास कवि कहे जाने वाले मैथिली शरण गुप्त के साहित्य की नैतिकता के शुक्ल जी प्रशंसक हैं लेकिन प्रसाद की उत्कृष्ट रचना कामायनी के प्रति तटस्थ। इस वर्ग के आलोचकों में टाल्सटॉय जैसे ख्यातिप्राप्त साहित्यकार की रचनाओं की अवहेलना इस आधार पर की है कि उनमें नैपोलियन छाया हुआ है और जेन ऑस्टीन के साहित्य को अभाव ग्रस्त इसलिये कहा है कि उसमें नैपोलियन का उल्लेख नहीं। भगवती प्रसाद वाजपेयी के उपन्यासों की उपेक्षा का यह कोई आधार नहीं कि उनकी पृष्ठभूमि में प्रणय है या उनमें राजनैतिक युधद्घों का वर्णन नहीं। ऑमेली ब्रॉन्टे की रचनाओं को केवल इसलिये अभावग्रस्त कहना कि उनमें समाज और जीवन की भड़कीली झाँकी युक्तियुक्त नहीं। हेनरी जेम्स ने केवल सम्पन्न जीवन का ही चित्र प्रस्तुत किया है, इस आधार पर उनकी रचनाओं की निन्दा आलोचकों का दुराग्रह मात्र है। विचारणीय तो यह है कि लेखक की रचना का विषय, उसका दृष्टि-कोण तथा उसकी परिधि (रेंज) क्या है! इसी आधार और सीमा के अन्तर्गत उसकी रचना का सही मूल्यांकन सम्भव है। अत्यधिक कुशल और सफल लेखक के लिये भी यह सम्भव नहीं कि वह प्रत्येक पाठक और आलोचक की प्रत्येक आशा और अपेक्षा की पूर्ति करे। प्रेमचन्द टॉमस हार्डी ग्राम्य जीवन और पात्रों के सजीव चित्रण में दक्ष हैं। जहाँ भी उन्होंने अपनी 'रेंज' से परे नगरों के भड़कीले जीवन और पात्रों के वर्णन की चेष्टा की है वे अधिक सफल नहीं हुए। प्रसाद के नाटक ऐतिहासिक है और प्राचीन भारतीयता उनकी पृष्ठभूमि में व्याप्त हैं। उनके नाटकों में वैज्ञानिक सभ्यता और आधुनिक प्रभाव के अभाव के कारण आलोचकों का क्षुब्ध होना हठधर्मी है। मूल प्रश्न तो यह है कि लेखक ने अपनी रुचि, दृष्टिकोण तथा 'रेंज' के अनुसार जो कुछ भी प्रस्तुत किया है वह कैसा है? आलोचक का मुख्य कार्य यह है कि वह कलाकृति में निहित गुण, विशेषता तथा सौन्दर्य को प्रकाश में लाये, न कि अपनी अपेक्षा कलाकार पर थोपे। आलोचक रंगीन चश्मा धारण कर न केवल आलोचना धर्म से च्युत होता वरन् है पाठक व सृजनकर्त्ता के मध्य बाधक बन जाता है। यह स्मरणीय है कि साहित्य कला की सजीवता और सरसता के लिये भिन्नता और परिवर्तन आवश्यक है। प्रत्येक सफल रचयिता का अपना स्वतन्त्र दृष्टिकोण होता है। इसी पर उसकी कृतियों का अस्तित्व निर्भर करता है। ऐसी स्थिति में, कला की सजीवता व सौन्दर्य की उपेक्षा कर, आलोचक कलाकार से यदि परम्परागत नियमों के कठोर पालन की अपेक्षा करता है या अपनी निजी रुचि और पूर्व निर्धारित माप दण्डों के अनुसार कृति का मूल्यांकन करता है, तो वह एक कट्टर नीतिशास्त्री या धार्मिक पंडित है आलोचक नहीं। स्वस्थ आलोचना के लिये किसी रचना के सौन्दर्य को सराहने की क्षमता (सैन्स ऑव एप्रीसियेशन) नितान्त आवश्यक है। आलोचक का पूर्ण प्रयत्न यह होना चाहिये कि वह रचना को प्रकाश में लाने के साथ साथ पाठक का उचित मार्गदर्शन करे। जब आलोचक इस ढंग से किसी रचना के मर्म और सौन्दर्य को समझकर विवेचन करता है, तो उसकी आलोचना बुद्धि को अपील करने के साथ-साथ रुचिकर अध्ययन का विषय भी बन जाती है। 'गेटे ने अपनी रचनाओं में समस्याओं का समाधान नहीं किया'—इस आलोचनात्मक कथन के प्रत्युतर में कॉलरिज ने बहुत ही स्मरणीय बात यह कही कि उक्त आलोचना ठीक इसी प्रकार हास्यस्पद है, जैसे कोई व्यक्ति यह कहे कि सूर्य का तेज और प्रकाश व्यर्थ है, क्योंकि इससे उसकी चुरुट नहीं सुलग पाती! □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निष्ठुर स्वप्न

प्रा० हरचन्द्र. जे. मंगलानी

□□

सांझ ढली—ढलती थी
नभ के कोने में
काले मेघा छा जाते थे
दीप समेटे चली
चलती थी निशा
दिशा का आंचल छा जाता था
ऐसे में हे स्वप्न
तुम क्यों निष्ठुर हो गये ?

□□

नीर मिला, मिलता था
टहनी को,
आश्रय मिल जाता था
उठते थे अरमान अगणित,
उर के कोने में,
कम्पन छा जाता था,
ऐसे में हे स्वप्न
तुम क्यों निष्ठुर हो गये ?

□□

घटाएं–घिरी–घिरती थीं,
यौवन उमड़ता
बह जाता था,
फूट पड़ता था,
नभ का उद्गम
सोना निशा का गलता जाता था
ऐसे में हे स्वप्न
तुम क्यों निष्ठुर हो गये ?

□□

इन्तज़ार किया करती थीं,
चंचल लहरें,
अपने करों से,
क्षितिज से टकराती थीं
रजनी के, पिछले पहरों तक भी,
चांद चला आता था
ऐसे में हे स्वप्न
तुम क्यों निष्ठुर हो गये ?

□□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अभिनन्दन

प्रा. रमेशचन्द्र शास्त्री

शिष्य और शिक्षक का यह सम्बन्ध मधुर है,
मधु से मधुतर और सदा मृदु से मृदुतर है।
शिक्षक है यदि ज्ञान और विज्ञान–सरोवर,
तो है शिष्य सुरभिमय विकसित पद्म मनोहर।

शिक्षक है यदि विद्या का ऊर्जस्वल सागर,
ज्ञानवारि से पूर्ण शिष्य है तो लघु गागर!
शिक्षक है यदि पुष्पित, फलित हरित उपवन नव,
तो है शिष्य उसी में रोपित लघु तरु अभिनव।

शिक्षक है यदि कान्त कुसुम कोमल कलियों का,
तो मधुलोभी शिष्य-समूह वृन्द अलियों का।
शिक्षक है यदि कुशल कला का आकर माली,
तो है शिष्य मृदुल तरुवर की कोमल डाली।

श्री वर्मा जी इसी भांति के शिक्षक गुरु हैं,
विद्या लोभी शिष्यों के हित कुसुमित तरु हैं।
निज जीवन भर ज्ञान--सुधा की सरित बहाकर,
किया उन्होंने शिष्यों को गुण गण का आकर।

पाया पद शिष्यों में गौरवशाली गुरु–तर,
पाला पूर्वज–परम्परा को निर्भय बन कर।
चिर जीवी हो ऐसे गुरु–जन इस वसुधा पर,
फैले जिनसे दिव्य ज्योति जगती में तम–हर।

○

[दयानंद कॉलेज अजमेर के अंग्रेजी विभाग के कार्य-विवृत्त अध्यक्ष प्रा० रविशंकर वर्मा के सम्मान में रचित]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय अर्थ-व्यवस्था में कृषि का महत्त्व

⊙ सत्यनारायण शर्मा कृषि स्नातक, भाग-द्वितीय

आज से ही नहीं अपितु हजारों वर्षों पूर्व से ही कृषि से भारत का घनिष्ट सम्बन्ध रहा है । हमारे देश में कृषि के बारे में लोगों का दृष्टिकोण यह था कि "उत्तम खेती मध्यम बान, नीच चाकरी भीख निदान ।" वास्तव में कृषि ने भारतीयों के विचारों, लक्ष्यों और संस्कृति को शताब्दियों से प्रभावित किया है । भारतीय अर्थ-व्यवस्था में कृषि का महत्त्व आज भी किसी तरह से कम नहीं हुआ है । शायद ही संसार का कोई ऐसा देश हो, जहां राज्य का कृषि से उतना घनिष्ट और प्रत्यक्ष सम्बन्ध हो जितना भारत में है । इसकी पुष्टि में जिन प्रमुख तथ्यों को प्रस्तुत किया जा सकता है, वे इस प्रकार हैं:--

१. खाद्यान्न व चारे की पूर्ति

कृषि से देश की ४३९ मिलियन जन-संख्या के लिये भोजन ३३३ मिलियन पशुओं के लिये चारा प्राप्त होता है । सन् १९६५-६६ में कुल कृषि योग्य भूमि (३० करोड़ हेक्टर)में से १६ करोड़ हेक्टर भूमि में खेती की गई । कुल १६ करोड़ जोते गये भू-क्षेत्र में से १२ करोड़ हेक्टर भू-क्षेत्र में धान्य फसलों की तथा शेष में कपास, जूट, कॉफी, चाय, रबर, तिलहन तथा गन्ने की खेती की गई । सन् १९६३-६४ में ६६८० करोड़ रुपये मूल्य की कृषि वस्तुओं का उत्पादन हुआ जब कि सन् १९४८-४९ में यह ४१६० करोड़ रुपये था । चौथी पंचवर्षीय योजना के अंत तक भारत खाद्यानों में पूर्ण रुप से आत्म-निर्भर हो जायेगा ऐसा विशेषज्ञों का मत है ।

२. सर्वाधिक रोजगार

भारत की कार्यशील जनसंख्या का ७० प्रतिशत भाग कृषि व्यवसाय में ही संलग्न है । इस प्रकार लगभग $\frac{2}{3}$ (दो तिहाई) जनसंख्या को रोजगार प्रदान कर कृषि अर्थ-व्यवस्था के संतुलन में योग प्रदान करती है ।

३. राष्ट्रीय आय का प्रधान स्रोत

राष्ट्रीय आय समिति और केन्द्रीय सांख्यिकीय संगठन द्वारा प्रदान किये गये तथ्यों से यह स्पष्ट हो जाता है कि कृषि एवं उससे सम्बन्धित धन्धे जैसे पशुपालन, मुर्गीपालन मधुमक्खी पालन आदि का राष्ट्रीय आय में लगभग ५० प्रतिशत योगदान है जो कि अन्य व्यवसाय श्रेणियों के योगदान की तुलना में सर्वाधिक है । इससे स्पष्ट होता है कि भारतीय अर्थ-व्यवस्था बहुत कुछ सीमा तक कृषि आय पर निर्भर है तथा कृषि की आय में किसी भी प्रकार का दखल देश की अर्थ-व्यवस्था के लिये घातक सिद्ध हो सकता है क्योंकि भारतीय अर्थ व्यवस्था में कृषि मेरुदंड के रूप में सहायक है ।

४. प्रमुख उद्योगों का आधार

कृषि देश के प्रमुख उद्योगों के लिये कच्चा माल जैसे· कपास, ऊन, जूट, चीनी, तम्बाकू, न खाने योग्य तेल, चमड़ा इत्यादि प्रदान करती है । यदि आज गन्ना, जूट व कपास का उत्पादन बंद कर दिया जाये तो इसमें कोई शक नहीं कि शीघ्र ही बड़ी बड़ी शुगर'मिल्स तथा कपड़ों के कारखाने बंद हो जायेंगे जो देश में भुखमरी और बेकारी को प्रोत्साहित करने में लाभदायक सिद्ध होंगे ।

५. सरकार की वित्त-व्यवस्था का आधार

कृषि सरकार की वित्त व्यवस्था का प्रधान एवं स्थायी स्रोत रहा है । केन्द्रीय तथा राज्य सरकारों की वित्त-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यवस्था बहुत कुछ सीमा तक कृषि पर ही आधारित है। उदाहरणार्थ- केन्द्रीय सरकार को निर्यात कर तथा उत्पादन कर के रूप में होने वाली आय कृषि से ही सम्बन्धित है। ठीक इसी प्रकार माल-गुजारी, सिंचाई कर, स्टाम्प फीस, कृषि सम्पत्ति कर, कृषि आय कर इत्यादि राज्य सरकारों को कृषि पर आश्रित जनता द्वारा ही प्राप्त होते हैं। प्रायः मानसूनों की असफलता के कारण कृषि-उत्पादन में होने वाली कमी सरकार के बजट को अस्त-व्यस्त कर देती है।

६. विदेशी व्यापार में महत्त्व

कृषि विदेशी व्यापार का भी एक प्रधान स्रोत है। सन् १९६५-६६ में ३०५ करोड़ रुपये मूल्य की कृषि वस्तुओं का निर्यात किया गया जो कि सन् १९६१-६२ में २८१.३५ करोड़ रुपये था। विदेशों को निर्यात की जाने वाली वस्तुओं का ४५ से ५०%प्रतिशत भाग कृषि द्वारा उत्पादित वस्तुओं से ही किया जाता है उदाहरणार्थ-चाय, तिलहन, तम्बाकू व मसाले आदि कृषि उपजें भारत की निर्यात सूची के प्रमुख आधार हैं। सन् १९१४ के पूर्व लगभग तीन-चौथाई निर्यात व्यापार कृषि उपजों द्वारा ही होता था। देश के विभाजन से पूर्व चावल तथा जूट भी विदेशों को निर्यात किया जाता था।

७. आर्थिक विकास में महत्त्व

कृषि हमारे देश के आर्थिक विकास का मूल आधार है कारण, कृषि को उन्नति से ही अन्य उद्योगों की उन्नति होती है। प्रमुख उद्योग-धंधो को कच्चा माल, रेलों, मोटरों आदि को यातयात के लिये व्यवसाय कृषि से ही प्राप्त होता है। अन्तर्देशीय व्यापार अधिकाँशतः कृषि उपजों पर ही आधारित हैं। जैसा कि शाही कृषि आयोग ने कहा था कि "अच्छी फसलें होने पर ग्रामीण जनता की क्रय शक्ति बढ़ जाती है जो कि स्वदेशी निर्माताओं के उत्पादनों के लिये एक विस्तृत बाजार उपलब्ध कर देती है।" यहाँ यह उल्लेखनीय है कि कृषि-मोर्चे की असफलता हमारी सम्पूर्ण योजनाओं को अस्त-व्यस्त कर देती है क्योंकि इसके कारण खाद्यानों का अभाव होने से मूल्यों में वृद्धि हो जाती है। फलतः दुर्लभ विदेशी मुद्रा को खाद्यानों के आयात पर व्यय करना पड़ता है।

८. अन्तर्राष्ट्रीय महत्त्व

भारतीय कृषि को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सम्मानित स्थान प्राप्त है। चाय व मूंगफली के उत्पादन में हमारे देश का विश्व में प्रथम तथा पटसन, चावल व चीनी के उत्पादन में द्वितीय स्थान है। लाख का उत्पादन तो लगभग सम्पूर्ण रूप से हमारे देश में ही होता है जिससे ग्रामोफोन व टेप-रिकार्डर के रिकार्ड बनाये जाते हैं।

इस प्रकार उपरोक्त विवेचन भारतीय अर्थ-व्यवस्था में कृषि के महत्त्व को इंगित करने के अतिरिक्त यह भी स्पष्ट करता है कि भूमि पर बढ़ती हुई जन संख्या के दबाव को कम करने तथा देश का बहुमुखी विकास करने के लिये कृषि का उत्थान अत्यावश्यक है। अतः इसके लिये सभी कृषि सम्बन्धित विषयों में तीव्र विकास आवश्यकता है। अस्तु यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि कृषि भारतीय जीवन की आत्मा है। □

पुष्कर–महिमा

पुष्कर, विश्व–कमल–सर का पर्याय है : जीवन का आदि स्त्रोत ! अग्नि (तेज, प्राण) के एक रूप अथर्वान द्वारा मंथन किये जाने पर, इसमें अन्तर्निहित रूप में व्याप्त अग्नि की दक्षिणाग्नि के रूप में उत्पत्ति हुई। जीवन–रस का प्रादुर्भाव हुआ : कमल के रूप में ! यही कमल आदि सृष्टि–कर्त्ता ब्रह्मा का स्थान है। सृष्टि, जो अव्यक्त रूप से पुष्कर में थी, अब व्यक्त रूप में प्रस्फुटित हो गई !

गौरी शंकर मोहता : एक पत्र में.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राचार्य वाब्ले : एक संचालक के रूप में

प्रा० रामपालसिंह वर्मा, जियालाल शिक्षक प्रशिक्षण संस्थान, अजमेर

किसी कार्य को प्रारम्भ करना एक बात है और उस कार्य को अंत तक सफलतापूर्वक पूरा करना और ही बात है। ठीक यही बात शिक्षण संस्थाओं के सम्बन्ध में कही जा सकती है। शिक्षण संस्था चाहे वह किसी भी स्तर की हो स्थापित एवं प्रारम्भ करना एक सरल बात है किन्तु उसका इस प्रकार संचालन करना कि वह दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति करती जाय एक अन्य बात हो जाती है। कुशल संचालन हेतु सतत् प्रयास, लगन, सूझ बूझ नेतृत्व-आदि गुण तथा उच्च स्तरीय बौद्धिक-स्तर की आवश्यकता होती है। जिसके द्वारा स्थापित संस्था शीघ्र ही एक आदर्श संस्था बन जाय।

जियालाल शिक्षक प्रशिक्षण संस्था, अजमेर को स्थापित करने का श्रेय महान शिक्षानुरागी एवं शिक्षा-शास्त्री दयानन्द कालेज, अजमेर के भूतपूर्व प्राचार्य श्री वाब्ले को प्राप्त है। प्राचार्य वाब्ले संस्थान को स्थापित करके ही शान्त नहीं हुये, वरन् दिनरात बड़ी लगन एवं उत्साह के साथ संस्थान की उन्नति एवं प्रगति हेतु न केवल योजनायें ही बनाते रहे, बल्कि उन्हें क्रियान्वित करने हेतु भी प्रयास करते रहे। यही कारण है कि जियालाल शिक्षक प्रशिक्षण संस्थान अपने जीवन की अल्पायु में आशा से कहीं बहुत ही अधिक उन्नति कर गया है। यह प्रगति संस्थान के संचालक प्राचार्य वाब्ले की सूझबूझ, दूरदर्शिता और कुशल प्रशासन की कहानी कहती है। जिस दूरदर्शिता के साथ संस्थान का संचालन किया जा रहा है वास्तव में वह वर्णनातीत है। आप के अथक प्रयास से ही संस्थान को बड़े ही अल्प समय में स्थायी मान्यता का प्राप्त होना एम. एड. कक्षाओं का प्रारम्भ होना आदि आश्चर्य में डालने वाली बातें हैं। आपकी ही लगन एवं भागदौड़ से संस्थान का अपना स्वयं का स्वतंत्र भवन बना और गत वर्ष संस्थान के अधुनातन छात्रावास का निर्माण भी आपके ही कुशल संचालन का फल है। संस्थान के उत्तम परीक्षा-परिणाम एवं सुयोग्य प्रवक्ताओं की नियुक्ति भी कुशल संचालन की एक तस्वीर है। जिसे देखकर कोई भी संस्थान की प्रगति के सम्बध में प्रमाण एकत्रित कर सकता है।

अब प्रश्न है कि आखिर प्राचार्य वाब्ले ने इतने छोटे से समय में संस्थान को उन्नति के शिखर पर कैसे पहुंचा दिया। इसका उत्तर है 'प्राचार्य के कतिपय गुण'। प्राचार्य वाब्ले के सम्पर्क में जो भी आता है वह आश्चर्य चकित हुये बिना नहीं रहता कि वे कैसे अनेक गंभीर पेचीदी एवं जटिल समस्याओं का बड़ी सूझबूझ के साथ समाधान खोज निकालते हैं। प्राचार्य वाब्ले के दृढ़ संकल्प एवं तत्परता से असंभव से दिखने वाले कार्य अति शीघ्र ही पूरे हो जाते हैं। प्राचार्य वाब्ले में योजना-निर्माण करने एवं उसे अंत तक क्रियान्वित करने की अद्भुत-क्षमता है।

प्राचार्य वाब्ले के प्रशासन जैसी स्वच्छता साधारणतया देखने को नहीं मिलती है। प्राचार्य को जो भी निर्णय लेने होते हैं तुरन्त ले लिये जाते हैं और पाया यह गया है कि वे निर्णय अच्छे परिणाम ही देते हैं। यह प्राचार्य की तुरन्त सूझ बूझ का एक उदाहरण है। सतर्कता यह प्राचार्य जी का एक और प्रमुख गुण है। उनकी कॉलेज तथा संस्थान की प्रत्येक गतिविधि पर बड़ी सतर्कता से दृष्टि रहती है, परिणामस्वरूप कहीं भी अनियमितता नहीं पाई जाती है। वे स्वयं परिश्रम करते हैं और परि-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रम पसंद करते हैं। उनकी दृष्टि कर्मचारियों के कार्यो का सही मूल्यांकन ही करती है।

प्राचार्य वाव्ले के कुशल संचालन में अपने कर्मचारियों का कल्याण, भलाई एवं उन्नति सदैव निहित रहती है। मैं जब भी कोई व्यक्तिगत समस्या लेकर प्राचार्य वाव्ले के पास गया कभी भी निराश लौटकर नहीं आया। अध्यापकों के कल्याण एवं उन्नति हेतु वाव्ले साहब सदैव तैयार रहते हैं। इसके उदाहरण में कहा जा सकता है कि अपनी उन्नति हेतु अभी हाल ही में दो प्राध्यापक सेवारत रहते हुए ही एम. एड. की डिग्री प्राप्त कर चुके हैं, एक प्राध्यापक एल. एल. वी. की तैयारी कर रहे है और दो प्राध्यापक पी. एच. डी. की तैयारी कर रहे हैं। इस प्रकार के कार्यो से प्राध्यापकों का उत्साह बढ़ता है।

दृढ़-निश्चय प्राचार्य जी का एक और गुण है। आप ने जिस जीवन दर्शन को माना है, जिन-मान्यताओं को स्वीकार किया है आप उन पर बड़ी दृढ़ता से सजग होकर निरन्तर चल रहे हैं। प्रभाव में डालकर या बल पूर्वक अन्य सिद्धान्तों या विचारों को स्वीकार कर लेना वाव्ले साहब के लिये एक असंभव बात है। यही कारण है कि आपकी नीतियों में एक विशेष प्रकार की निश्चितता एवं दृढ़ता रहती है। अपने सिद्धान्तों के लिये आप बड़ी ही निर्भीकता से बड़ी से बड़ी हस्ती से भिड़ जाते हैं।

एक कुशल संचालक में मौलिकता का होना भी परमावश्यक है जिससे संस्था में भी अपनी मौलिकता आजाय और संस्था अन्य संस्थाओं में से पृथक से पहिचानी जा सके। प्राचार्य वाव्ले के व्यक्तित्व की स्पष्ट छाप संस्थान पर पड़ी है जिसके कारण वह अन्य समकक्षीय संस्थाओं से पृथक ही पहिचाना जा सकता है।

संक्षेप में, आज जियालाल शिक्षक प्रशिक्षण संस्थान को जो रूप, प्रगति और ख्याति प्राप्त है, उसका एकमात्र श्रेय संस्थान के कुशल संचालक प्राचार्य दत्तात्रेय वाव्ले को ही है। □□

दो व्यंग्य

केशव लख्यानी
एम. ए. (उत्तरार्द्ध) हिन्दी

□ फर्क महज़ बस इतना
आधुनिक प्रेमी और नेता में
ये दिल बदलते हैं
वो दल बदलते हैं !

□ जो रेज़गारी न दे सकी, वो रोज़गार क्या देगी !
जो कार न दे सकी, वो सरकार क्या देगी !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शोध

'नदी के द्वीप' में प्रतीक-योजना

कु० कुसुम शर्मा एम. ए. (उ.)

भावाभिव्यक्ति की प्रभावशालिता के लिए मानव चिरकाल से प्रतीकों का आश्रय लेता आया है। प्रतीकों का उन्मेष, काव्य-सृजन के सदर्भ में, सर्वप्रथम हुआ। प्रसाद के कथा-साहित्य में प्रतीकों की बानगी को देखा जा सकता है। छायावादी युग में इसे गरिमा मिली, परन्तु यह महत्व केवल काव्य तक ही सीमित था। जैनेन्द्र के कथा-साहित्य में संभवत: प्रथम बार प्रतीकों को विशेष महत्व मिला है। अज्ञेय ने प्रतीकों की धारा को और अधिक परिपुष्ट किया है। अब प्रतीकों का प्रचलन कथा-साहित्य में अपरिहार्य माना जाने लगा है। प्रतीकों के वैविध्य और अर्थवत्ता की दृष्टि से 'नदी के द्वीप में, अज्ञेय ने नये आयामों का उद्घाटन किया है, इसी से मुझे उक्त उपन्यास के प्रतीक-विधान पर कार्य करने की प्रेरणा मिली है।

'प्रतीक' की सैद्धान्तिक पृष्ठभूमि :

आधुनिक युग में 'प्रतीक' शब्द, अंग्रेजी शब्द 'सिम्बल' के पर्याय रूप में प्रयुक्त होता है। हिन्दी के शब्द-कोशों में प्रतीक के कई अर्थ मिलते हैं। प्रामाणिक हिन्दी शब्द-कोश में इसका अर्थ है: चिह्न, लक्षण, आकृति। किसी के स्थान पर या बदले में रखी गई वस्तु !' [१] अंग्रेजी शब्द 'सिम्बल' के भी कई अर्थ मिलते हैं:

(क) प्रतीक वह चिन्ह होता है, जिससे कोई वस्तु जानी जाती है।

(ख) स्वेच्छा से प्रयुक्त या परम्परागत संकेत

(ग) जो किसी अन्य का प्रतिनिधित्व करता हो।' [२]

इसके अतिरिक्त 'विश्व-कोष' में 'प्रतीक को अमूर्त्त का मूर्त्त स्वरूप कहा गया है।' [३] कुछ विद्वानों ने इसकी परिभाषाएँ इस प्रकार की हैं :

(अ) 'प्रतीक अपने सम्पर्क, सन्दर्भ, और परम्परा से किसी अदृश्य वस्तु की ओर संकेत करता है।'[४]

(आ) सौंदर्यशास्त्र में प्रतीक वह वस्तु है जो कि अपने तात्कालिक अभिप्राय से भिन्न किसी अन्य ऐसे अभिप्राय को सुझाता है, जो कि विषय की दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण हो।' [५]

(इ) 'प्रतीक वह विशेष संकेत चिन्ह होता है जिसका प्रयोग स्वेच्छा से या परम्परा से किसी अन्य अर्थ के लिए प्रतिध्वनित होता है।' [६]

इन परिभाषाओं के अतिरिक्त अज्ञेय ने स्वयं कहा है 'प्रतीक वास्तव में ज्ञान का एक उपकरण है, जो सीधे-सीधे अभिधा में नहीं बंधता, उसे आत्मसात् करने या प्रेषित करने के लिए प्रतीक काम देते हैं।' [७]

इन सभी परिभाषाओं से प्रतीक के ३ आवश्यक लक्षण चुने जा सकते हैं :

१. विशेष संकेत चिन्ह

२. अनेकार्थक (एक सामान्य और प्रत्यक्ष तथा दूसरा विशेष और अप्रत्यक्ष होता है।

---

१. प्रामाणिक हिन्दी शब्द-कोश, धीरेन्द्र वर्मा
२. चैम्बर्स इंग्लिश डिक्शनरी
३. एनसाईक्लोपीडिया ब्रिटेनिका भाग १२, पृ. ७००
४. वेवस्टर, विलियम टिडेल के 'लिटरेरी सिम्बल' से उद्धृत
५. डिक्शनरी ऑफ वर्ल्ड लिटरेरी टर्म्स: शिपले: पृ. ४०५
६. साहित्य-विज्ञान : डॉ. गणपतिचन्द्र गुप्त: पृ. ३२८
७. आत्मनेपद : अज्ञेय : पृ. ४५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. अप्रत्यक्ष एवं विशेष अर्थ की प्रत्यक्ष एवं सामान्य अर्थ से अधिक महत्ता। [१]

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम यदि अज्ञेय के 'नदी के द्वीप' उपन्यास में आए प्रतीकों को देखें, तो ज्ञात होगा कि अज्ञेय अपने प्रतीकों, भाषा-शैली इत्यादि में नई अर्थवत्ता लिए हुए हैं। अज्ञेय पर अप्रत्यक्ष रूप से पाश्चात्य प्रभाव रहा है इसलिए उनके प्रतीकों पर भी यह प्रभाव द्रष्टव्य है।

श्री अरबान महोदय ने रूपात्मक दृष्टि से प्रतीकों के तीन प्रमुख भेद किए हैं :

१) संकेतात्मक
२) व्यंग्यात्मक
३) आरोपमूलक।" [२]

ये तीनों भेद 'क्रमशः अभिधा, लक्षणा तथा व्यंजना पर आधारित है।' [३] अज्ञेय में ये तीनों रूप उपलब्ध हैं। उनके कई प्रतीक परम्परागत हैं, वहीं अनेक नए प्रतीक भी उन्होंने हिन्दी साहित्य-जगत को दिए हैं। प्रतीकों के साथ ही उनकी भाषा-शैली भी परिवर्तित होती चली है। भाषा में काव्यात्मकता आ जाती है।

'नदी के द्वीप' में प्रतीक-योजना: उदाहरण एवं निर्वचन :

भाषा-शैली की दृष्टि से उनके प्रतीकों के कुछ प्रमुख उदाहरण प्रस्तुत हैं, जो अज्ञेय के कुशल शैलीकार को पाठक के सम्मुख रखते हैं।

प्रथम उदाहरण द्रष्टव्य है : 'एक बार चन्द्र ने कहा भी था, "आप अपने पास किसी को आने नहीं देतीं, जैसे"–

रेखा ने तुरंत हँसकर कहा था, "मेरे आसपास दुर्भाग्य का मण्डल जो रहता है, उसके भीतर किसी को नहीं आने देती कि छूत न लग जाये।" [४]

रेखा की इस उक्ति में व्यंग्य-भाव है। लोगों के चारों तरफ प्रभामंडल रहता है, मगर रेखा के चारों ओर दुर्भाग्य-मंडल विद्यमान है। यही दुर्भाग्य-मंडल मानो उसकी अब तक की असफलताओं एवं दुःखों का प्रतीक है। वह यह भी नहीं चाहती कि कोई उसके सम्पर्क में आए। चन्द्र जब उससे घनिष्ठता बढ़ाने का प्रयास करता है, तब उसका यह जवाब, चन्द्र के बढ़ते हुए कदम रोक देता है। दूसरी तरफ रेखा अपने दुःखों से, अपनी निरर्थकता से बहुत ही संत्रस्त है।

एक और उदाहरण: "पर भुवन के आकर्षण का अपने लिए संतोषजनक कारण पा लेना तो काफी नहीं था, वह तो मानव संबंधों का अध्ययन करने नहीं बैठा है, वह जिन्दगी का तमाशाई नहीं है, वह खिलाड़ी है, नायक है, वह जिन्दगी को अंगूर के गुच्छे की तरह तोड़ कर उसका रस निचोड़ लेगा, लता को झँझोड़ डालेगा, कुंज में आग लगा देगा, वह आराम से नहीं बैठेगा।,, [५]

चन्द्र की मनःस्थिति का विश्लेषण, इस उद्धरण में है। रेखा को वह पाना चाहता है, मगर रेखा को जब वह भुवन की ओर आकर्षित होते देखता है, तो वह दोनों के अनिष्ट की बात सोचने लगता है। 'मानव संबंधों' में उसकी और भुवन की दोस्ती की अनुगूँज है, 'जिन्दगी का तमाशाई' होना, उसके अब तक के धैर्य एवं असम्पृक्ति का प्रतीक है। अपने को 'खिलाड़ी' और 'नायक' समझना, उसके अहं के प्रतीक हैं। वह अपने प्राप्य को जरूर लेगा। लता जैसे रेखा है, और कुंज, में भुवन की प्रतिध्वनि है। दोनों का ही वह दुश्मन है। लता को वह झिंझोड़ना चाहता है और कुंज में आग लगाना चाहता है, अर्थात् रेखा और भुवन के स्वप्नों को तोड़ना चाहता है।

एक और उद्धरण देखिए, जहाँ अज्ञेय ने अपने प्रतीकों की तरफ स्वयं संकेत कर दिया है। प्रतीकों की दृष्टि से यह उद्धरण नवीनता लिए हुए है। "श्रवणकुमार का जो

---

१. साहित्य-विज्ञान : डॉ. गणपति चन्द्र गुप्त पृ. ३२९
२. लैंग्वेज़ एण्ड रियेलिटी: पृ. ४०७
३. साहित्य-विज्ञान : डॉ. गणपतिचन्द्र गुप्त : पृ. ३३१
४. नदी के द्वीप : अज्ञेय : पृ. ४७
५. नदी के द्वीप: अज्ञेय: पृ. ५३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आदर्श है, वही-जरा-सी चूक पर हमारी सारी पीढ़ी की पराजय और क्लीवता का अच्छा प्रतीक भी है। कन्धे पर लदी हुई बँहगी पितृभक्ति का, आदर्शपरायण का, आत्म बलिदान का प्रतीक नहीं, जड़-पूजा का, आत्म-प्रवंचना का स्वाधीन जीवन की अपात्रता का प्रतीक है। श्रवण के लिए वह क्या था, इसका निर्णय करना मेरे लिए आवश्यक नहीं है, मेरी पीढ़ी के लिए वह है, मैं ठीक जानता हूं।"[1]

श्रवण कुमार को नई पीढ़ी के रूप में देखना, और उसके आदर्शों को आज की बुराइयों का प्रतीक मानना अज्ञेय की निजी कल्पना है। ऐसा नहीं है कि वे श्रवण कुमार की सेवावृत्ति को गलत समझे हों, मगर नई पीढ़ी के लिए वह इसे बिलकुल विपरीत समझते हैं। श्रवण कुमार के सन्दर्भ में आई 'पितृभक्ति' को वे नई पीढ़ी की 'जड़-पूजा' का, 'आदर्श परायणता' को आत्म-प्रवंचना, का 'आत्म-बलिदान' को, स्वाधीन जीवन की अपात्रता का प्रतीक मानते हैं। अज्ञेय के ये प्रतीक बिलकुल नवीन हैं।

"मैं जानती हूँ। और सभ्यता जो ह्रासोन्मुख हो जाती है, वह किसलिए ? कि समर्थ प्रकृत चरित्र सभ्यता के पोसे हुए पालतू चरित्र के नीचे दब जाता है—व्यक्ति चरित्रहीन हो जाता है तब वह सृजन नहीं करता अलंकरण करता है। नए बीज की दुर्निवार शक्ति से जमीन फोड़ कर नए अंकुर नहीं फेंकता, पल्लवित नहीं होता, झरे फूल चुनता है, मालाएँ गूंथता है, मालाओं से मूर्तियाँ सजाता है। पर मूर्ति पर मालाएँ सूख जाती हैं, तब हमें ध्यान होता है कि सभ्यता तो मर चली—पर वास्तव में मरना तो वहाँ आरम्भ हुआ है, जहाँ हमने झरे फूल का सौंदर्य देखना शुरू किया, डाल से टूटे फूल का।"[2]

इस उदाहरण में व्यक्ति की कामनाओं, आकांक्षाओं का प्रतीकपूर्ण चित्रण है। समर्थ एवं मुक्त चरित्र पर जब सभ्यता का खोल चढ़ जाता है, तब व्यक्ति चरित्रहीन कहलाने लगता है। तब वह विकास की बात नहीं सोचता अतीत को ही संवारता रहता है, उससे यह नहीं बनता कि अपने परिश्रम से नई वस्तु बनाए या बनवाए, वरन् वह झड़े हुए फूल चुनता है। यहाँ झरे हुए फूल टूटी आकांक्षाएँ हैं। 'मालाएँ गूंथना' का प्रतीकात्मक अर्थ कल्पना करने से लिया जा सकता है। उन कल्पनाओं से बनी लड़ी से, वह अपने जीवन को अलंकृत करना चाहता है, मगर वे मालाएँ (कल्पनाएँ) झूठी हो जाती हैं, तब हमें ध्यान आता है कि सभ्यता तो यह नहीं है, पर टूटी आकांक्षाओं का महत्व जानकर ही हम सिद्धि पा सकते हैं।

एक उद्धरण प्रस्तुत है, जिसमें एक अकेली नारी की व्यथापूर्ण कामनाओं का चित्रण बड़े प्रतीकात्मक रूप में हुआ है : भुवन भी हँस दिया। फिर उसने पूछा, "नैनीताल में क्या करेंगी आप दिन भर ?

"झील की ओर ताका करूँगी। कागज की नावें चलाया करूँगी-नहीं, कागज की भी नहीं, सपनों की। काल्पनिक यात्राएँ करूँगी। आपको क्या मालूम है, मध्य वर्ग की बेकार औरत कितनी लम्बी लड़ी गूँथ सकती है सपनों की।"[3]

भुवन द्वारा पूछे जाने पर रेखा का यह उत्तर उसके हृदय के खालीपन को प्रतिबिम्बित करता है। उसने अपने जीवन के लिए बहुत-सी कल्पनाएँ की थीं, जो पूरी नहीं हो पाईं, इन सब कल्पनाओं के प्रतीक रूप में 'कागज की नावें, 'काल्पनिक यात्राएँ' इत्यादि इस उद्धरण में आए हैं। दूसरे रेखा अभी किसी कार्य पर नहीं हैं, अतः अब स्वप्न देखने के अतिरिक्त वह कर भी क्या सकती है।

एक उदाहरण और द्रष्टव्य है : 'तुम चले जाओगे,—मैं जानती हूँ कि तुम चले जाओगे। मैं आदी हूं कि जीवन में कुछ आए और चला जाए। मैंने हाथ बढ़ा कर उसे पकड़ना छोड़ दिया है—कौन पकड़ कर रख सकता है। बचपन में मां एक कहानी सुनाया करती थीं, कोकिल का स्वर सुन कर राजा उसे पकड़वा मंगाते थे, पर वह चुप हो जाता

१. नदी के द्वीप; अज्ञेय पृ. ७६
२. नदी के द्वीपः अज्ञेयः पृ १०६
३. नदी के द्वीप : अज्ञेय, पृ. १२२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था। मां कहती थीं, कोकिल को पकड़ लिया जा सकता है, पर गान बन्दी नहीं होता। तब मैं, सोच लेती थी, बन्दी करना मैं क्यों चाहने लगी ? मैं स्वयं गाऊँगी। और हाँ गाऊँगी भी, चाहे टूटे स्वर से—मेरा गान तुम सुनोगे ?„[1]

इसमें 'गान' स्वाधीनता का गान है। मूल भाव यही रहा है कि शरीर तो बन्दी बनाया जा सकता है, मगर आत्मा बन्दी नहीं हो सकती। 'जीवन में कुछ आए' यह प्रतीक है रेखा की असफलताओं को, और कौन पकड़ कर रख सकता है, में उसकी तज्जन्य विवशता मुखरित है। वह इतना टूट चुकी है, कि उसमें अब किसी को पकड़ कर रखने की सामर्थ्य भी चुक गई है। मगर वह टूटी होकर भी उपेक्षित नहीं रहना चाहती, अतः भुवन को अपने टूटे स्वर का गान सुनाना चाहती है और परिणाम में उसकी सहानुभुति अर्जित करना चाहती है।

'नदी के द्वीप' में यौन–प्रतीक भी काफी हैं क्योंकि प्रेम को लेकर ही उपन्यास लिखा गया है। एक यौन–प्रतीक देखिए:

'तुमने मेरे जूड़े में लाल फूल खोंस कर मेरा सिर ढक दिया है; तुमने मेरी पलकें, मेरा मुँह·····एक घधकते हुए प्रभा-मण्डल से मेरा शीश घिर गया है ·····क्या इसकी दीप्ति दुर्भाग्य के उस मंडल को छार न कर डालेगी, जो मेरे साथ रहा है" [2]

भुवन द्वारा रेखा के 'जूड़े में फूल लगाना' और 'उसका सिर ढकना' प्रणय की स्पष्ट स्वीकृति के प्रतीक हैं। अगले वाक्य में आगे (····) बिन्दु लगाकर चुम्बनों का संकेत दिया गया है। घधकते हुआ प्रभा-मंडल' उसकी प्रणयानुभूति का चरम उत्कर्ष है, यहाँ तक कि वह अपनी पिछली कटु–स्मृतियाँ भी, इस घधकते हुए प्रभा-मण्डल में झोंक देने को तैयार है। इसका कारण यही है कि भुवन की स्वीकारोक्ति से उसमें अदम्य शक्ति का संचार हो गया है।

एक उद्धरण और प्रस्तुत है : "मैं एक खड़ा हुआ पानी थी : एक झील, पोखर, एक छोटा ताल, शैवालों से ढका हुआ। तुमने आंधी की तरह आकर मुझको आलोड़ित कर दिया। मुझमें अनन्त आकाश को प्रतिबिम्बित कर दिया मुझे कहने दो, भुवन, मेरी यह देह जैसे तुम्हारी ओर उमड़ी थी, वैसे कभी नहीं उमड़ी। शिरा-शिरा ने तुम्हारा स्पर्श मांगा, तुम्हारे हाथों का स्पर्श. तुम्हारी बाहों की जकड़, तुम्हारी देह की उत्तेजित गरमाई·····लेकिन—तुम में डर था—डर नहीं, एक कोई दूर था अनुशासन, कोई एक मर्यादा, जिसके स्रोत तक मेरी पहुँच नहीं थी। और जिसे छुआ जा कर मेरा तूफान सहसा शान्त हो गया मैं फिर उसी पर पहुंच गई जिस तल पर ताल सदा से था—ढका हुआ निश्चल, खड़े पानी का एक उद्देश्यहीन जमाव।"[3]

इसमें रेखा, ने भुवन के आने के बाद उसके हृदय की अस्थिरता प्रकट की है। वह अपने को 'खड़ा पानी' कहती है, जिसे उसके संयम और स्थिर जीवन का प्रतीक कहा जा सकता है। उसकी कामनाओं का धीरे-धीरे क्षय हुआ हैं। पहले उसकी कल्पनाएँ झील के समान विस्तृत थीं, मगर धीरे-धीरे वे पोखर से छोटा ताल, फिर इतनी संकुचित हो गई कि शैवालों से घिर गईं। ये शैवाल उसकी मानसिक उलझनों के प्रतीक माने जा सकते हैं। 'अनन्त आकाश को प्रतिबिम्बित करना' उसकी उमड़ी हुई कल्पनाओं का प्रतीक है। आंधी––भुवन के आगमन की प्रतीक है। रेखा की 'देह का भुवन की तरफ उमड़ना' उसका 'स्पर्श मांगना', 'बाँहों की जकड़ मांगना', 'देह की उत्तेजित गरमाई मांगना'—स्पष्ट ही यौन-प्रतीकों की श्रेणी में आते हैं। रेखा का वापस उसी धरातल पर 'आ जाना', खड़े पानी का उद्देश्यहीन जमाव' हो जाना, उसकी कल्पनाओं, आकांक्षों पर तुषारपात होने का प्रतीक है। वह अकेलेपन और उदासी से घिरी हुई थी, उसी परिवेश में वापस आ गई।

एक परम्परागत प्रतीक की नई बानगी देखिए: "रेखा का कराहना भी बन्द हो गया था। कभी वह हलका-सा हूँ-हूँ, करती, नहीं तो मौन, एक अजब डरावना

१. वही : वही पृ, १४५
२. नदी के द्वीप––पृ. १४६
३. वही —पृ. १६२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सन्नाटा छा गया था। भुवन वर्षा का स्वर सुन रहा था। बीच-बीच में कभी अचानक कुछ गिरने का 'धप्' का स्वर सुनाई देता है—पहले वह समझ न सका कि यह क्या है, फिर सहसा जान गया: पके फल·····रात के सन्नाटे में फल का यह चू पड़ना हैरतनाक था—मानो एक द्रुत कारणहीन मृत्यु आ कर किसी को ग्रस ले।"[1]

रेखा बीमार है, और भुवन उसके पास बैठा है। रेखा का पीला पड़ा हुआ मुख, उसकी दयनीय स्थिति, और तत्कालीन वातावरण ने मिल कर, भुवन के मस्तिष्क पर भय का आवरण चढ़ा दिया है। उसी भय में बाहर पके फल की 'धप्' सुनकर वह सिहर उठता है। यहाँ पका फल, रेखा का प्रतीक है। उसे यह लगता है कि रेखा भी पका फल है, न जाने कब मृत्यु उसे अचानक ही उसे भुवन से छीन ले। यह सभी कुछ वह सोच रहा है, मगर पके फल के माध्यम से।

एक उद्धरण और प्रस्तुत है जिसमें भुवन का अपराधी मन (गिल्टी कांशस), उसके संत्रास का कारण बना है।

"शायद—नहीं—कोई रोया था!"

"रोया था? नहीं भुवन दा—रोने की आवज कहाँ से आ सकती है"

"हाँ" 'भुवन ने साग्रह कहा' "चिड़िया का बच्चा रोया था।'

× × ×

"नहीं नहीं' आग में मुझे चेहरे दीखते हैं!

'गौरा ने पीछे खड़े-खड़े ही दोनों हाथ भुवन के कन्धों पर रखते हुए कोमल स्वर से पूछा, "किसके चेहरे, भुवन दा?"

"चेहरे—मृत चेहरे—बच्चों के चेहरे।" गौरा के हाथों के नीचे उसका शरीर एक बार सिहर गया।"[2]

इस उद्धरण में 'चिड़िया के बच्चे का रोना,' आग में चेहरे दीखना,' 'मृत बच्चों के चेहरे दिखना'—भुवन की अपराधी भावना के प्रतीक हैं। रेखा ने गर्भपात जो करवाया है, उसके लिए भुवन अपने को ही दोषी समझने लगा है। उसका यही सोचना कि वह उस बच्चे का हत्यारा है, उसे चैन नहीं लेने देता। उसके अवचेतन में कहीं यह गहरे बैठा हुआ है—इसीलिए वह सोते-सोते चिड़िया के बच्चे का रोना सुनता है—आग में भी उसे मृत बच्चों के चेहरे ही दिखाई देते है। 'चिड़िया के बच्चे' अबोध शैशव का सटीक प्रतीक है।

आग से ही सम्बंधित एक और प्रतीक देखिए: "आग लपकती और गिरती; कभी एक अधजली लकड़ी बीच में से टूट कर गिरती और आग का एक भाग दब कर अंधेरा या नीलाभ हो जाता, फिर फुरफुरा कर एक छोटी-सी शिखा उसमें उमग आती, और बढ़ जाती। उसी प्रकार भुवन का स्वर कभी मद्धिम पड़ जाता, कभी धीरे-धीरे ऊँचा उठ जाता, कभी उसकी वाणी क्षण भर अटक कर फिर कई एक द्रुत चिन्गारियाँ फेंक देती-यद्यपि साधारण रूप से उसकी बात फुलझड़ी-सी नहीं थी, न उस में तारा-फूलों की लड़ियाँ थीं, न घटती-बढ़ती कलाओं का आकर्षण, न वह चटचटाहट, जो स्फूर्ति देती है, न वह रंग-बिरंग चमक जो लुभा लेती है। वह थी महताबी की तरह, जिसके भीतर से अंगारे बूँद-बूँद टपकते हैं, पिघली हुई आग के आँसुओं की तरह, जो हवा में भी झरते हैं, पानी के नीचे भी झरते हैं, चुप-चाप, बेरोक झरते जाते हैं—जलते जाते हैं।"[3]

इस में जिस 'आग' का वर्णन आया है, वह भुवन की स्मृति का प्रतीक है। 'आग का बढ़ना-घटना' स्मृतियों के उभरने-मिटने का प्रतीक है।—'द्रुत चिन्गारियाँ उसके मन की कुछ विशेष स्मृतियाँ हैं, जो उसके हृदय को सालती रहती हैं। ये स्मृतियाँ उसके लिए रिसता नासूर बन गई हैं, जो उसे परेशान किये रहती हैं। भुवन की बात को महताबी (नली के आकार की आतिशबाजी) कहा गया है जिसमें से उसके स्मृति रूपी अंगारे झर रहे हैं, बेरोक-टोक! प्रतीकों की दृष्टि से यह बहुत सूक्ष्म विधान है।

---

१. नदी के द्वीप : पृ. २३१
२. वही पृ. २९२
३. नदी के द्वीप : पृ. २९५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्त में एक स्वप्न देखिए, जो कि प्रतीकों की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण है। स्वप्न में हम अपनी सभी इच्छाओं की पूर्ति कर लेते हैं-कुछ इसी तरह का स्वप्न यह है :

"फिर एक दिन स्वप्न में तुम्हें देखा था-देखा कि तुम हमारे घर आए हो–हमारे घर, मेरे माता–पिता और छोटे भाई, सबकी उपस्थिति में, और सबसे मिले हो, पिता तुम्हें बाहर नदी के किनारे की रौंस पर मेरे पास बिठा गए हैं, फिर हम लोग कागज की नावें बना कर नदी में डालते हैं, और उनका बह जाना देखते हैं। नावें कभी दूर-दूर तक चली जाती हैं, कभी पास आ जाती हैं, कभी टकरा भी जाती हैं, कभी नदी में बहते हुए शैवाल से उलझ जाती हैं। ·····सहसा नदी का पानी बहती हुई सूखी बालू हो जाती है, और तुम्हारा चेहरा तुम्हारा नहीं कोई और चेहरा है।"[२२]

इसमें, 'रेखा के पिता द्वारा भुवन को रेखा के पास बैठा देना' उनकी स्वीकृति का प्रतीक है। 'कागज की नावें उनकी भावनाएँ हैं, नावों का उलझ जाना, कभी पास आना, कभी दूर जाना, रेखा की जीवनधारा में अवरोधों तथा मिलन-वियोग के प्रतीक हैं। फिर-सहसा 'नदी के पानी का सूखी बालू हो जाना' उनके प्रेम के अवरुद्ध होने का प्रतीक है। भुवन का चेहरा 'किसी दूसरे के चेहरे में बदलना, रेखा का, रमेशचन्द्र के प्रति थोड़े-से झुकाव का प्रतीक है। झुकाव नहीं, तो वह रमेशचन्द्र से प्रभावित अवश्य है इसलिए उसे भुवन के चेहरे में दूसरा चेहरा दिखाई देने लगता है। वह वास्तव में ऐसा नहीं चाहती, मगर उसका अवचेतन इसमें सक्रिय है!

निष्कर्ष: इन प्रतीकों के विवेचन के उपरान्त, निष्कर्ष रूप में निम्न तथ्य सामने आते हैं :

(१) 'नदी के द्वीप' में प्रतीक काफी संख्या में हैं, और उन प्रतीकों की योजना में अज्ञेय पूर्ण सफल रहे हैं।

(२) अज्ञेय के प्रतीकों में जहाँ पुरातनता का स्पर्श है, वहीं बहुत से नए आयामों को भी छुआ गया है।

(३) प्रतीक बहुत–ही स्पष्ट हैं। पाठक के सामने जहाँ क्लिष्टता आने का सवाल उठता है, अज्ञेय स्वयं ही राह दिखा देते हैं।

(४) अज्ञेय की भाषा–शैली प्रतीकों में कहीं—कहीं भावात्मक हो गई है। ऐसे स्थलों पर उनकी अनूठी उद्भावना, पाठक को प्रभावित करती है।

(५) प्रतीकों का सृजन सभी पृष्ठभूमियों पर हुआ है, तथा प्रतीकों के सभी रूपों का दिग्दर्शन 'नदी के द्वीप' में मिल जाता है।

(६) प्रतीक-विधान में कल्पना की कमनीयता खुलकर खेलती है। अज्ञेय का कल्पना-वैभव निस्सीम है। शुक्लजी ने छायावाद के सन्दर्भ में जिस प्रतीकमयी भाषा' का उल्लेख किया है, वह अपने चरम शिखर को यहाँ स्पर्श करती है। उसका प्रयोग-वैविध्य विस्मयकारी है।

(७) प्रतीकों के सफल प्रयोग से भाषा की अर्थवत्ता में वृद्धि होती है। उसके सूक्ष्म अवयव भाषारत्नों के समान चमकते हैं।

(८) प्रणयानुराग की सूक्ष्म विवृत्ति, इन प्रतीकों में चार चाँद लगा देती है। आक्रोश, ईर्ष्या, ऐन्द्रीयता (कामनाओं का चटकीलापन), प्रतिस्पर्धा, वाग्मिता एवं हास्य-व्यंग्य, इन प्रतीकों की अन्तरंग निधियाँ हैं।

(९) अज्ञेय के गद्य की नक्काशी और बारीकी, इन प्रतीकों में देखते ही बनती है। ऐसा लगता है कि जैसे गद्य-सरिता में भावनाएँ जम गई हों और उन्होंने हिम खण्डों के रुप में एक स्पष्ट आकार ले लिया हो।

(१०) यौन-प्रतीकों में भी भावनाओं का सूक्ष्म परिधान है। इस प्रकार, सहज ही लेखक अश्लीलता के आरोप से बच जाता है। 'आर्टेस्ट सिलैटी आर्टम्'—इस लातीनी कहावत के अनुसार कला की कमनीयता, उसकी गुह्यता के झीने आवरण में प्रतिच्छायित होती है। 'नदी के द्वीप, के यौन-प्रतीक इस कहावत को साकार करते हैं।

अन्त में यही कहा जा सकता है कि प्रतीक-विधान की दृष्टि से, अज्ञेय ने असाधारण सफलता प्राप्त की है और हिन्दी गद्य-शैली को उच्चतम शिखर तक पहुँचा दिया है। □

---

२२. नदी के द्वीप: पृ. ३१३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खामोशी

अनिल कुमार शर्मा

राजेश प्रथम वर्ष में पढ़ रहा था। इसके पश्चात् वह मेडीकल कालेज में प्रवेश पाकर डाक्टर बनने की इच्छा रखता था। उसकी इच्छा तो पूरी हुई लेकिन....।

मध्य सत्र में राजेश एक ऐसी लड़की पर आसक्त हो गया जिसका कि वह नाम तक नहीं जानता था। राजेश को सिर्फ इतना भर ज्ञात था कि वह एक चित्रकार है। बस राजेश की जो मंजिल की हर सीढ़ी को सफलता-पूर्वक पार करता जा रहा था, प्रगति में रुकावट आ गई। उस चित्रकार लड़की के जाने से कक्षा में राजेश का मन नहीं लगता था। खाने के नाम से कुछ झुंझलाहट-सी और निद्रा देवी तो ऐसी रुष्ट हुई कि प्रसन्न ही नहीं होती, लाख प्रयत्न करने पर भी। चेहरे की मुस्कराहट, रौनक, चमक इन सब का स्थान ग़म ने ले लिया था। आँखों की चमक का स्थान समुद्र की गहराई ने ले लिया था। हर पल उसी गहराई में निगाहें कुछ ढूँढ़ती थीं। शायद उस का प्यार।

जब भी राजेश का सामना उस चित्रकार से होता तो राजेश के सूखे ओठ फड़फड़ाने लगते। आँखों में देखने से महसूस होता जैसे वे कह रही हैं।

"तुम मेरी तमन्नाओं की तस्वीर को संवार दो,
प्यासी है जिन्दगी तुम मुझे प्यार दो।'

लेकिन अफसोस ! चित्रों में जिन्दगी भर देने वाला चित्रकार एक सजीव चित्र की गूंजती भाषा न समझ पाया और राजेश अपनी जबान से यह न कह पाया कि मैं तुम्हें प्यार करता हूँ।

राजेश के बस की एक ही बात थी, वह थी तड़फ केवल तड़फ और वह बेचैनी में गुन-गुनाया करता था—

"खुदा करे मुहब्बत में वह मुकाम आये,
किसी का नाम लूं तो लबों पै तुम्हारा नाम आये।"

घर वाले राजेश की यह हालत देख कर चिन्तित थे कि राजेश को क्या घुन लग गया है? जो दिन-ब-दिन सूखता जा रहा है। लेकिन वे भी मजबूर थे।

परीक्षा आ गई थी। राजेश ने परीक्षा दी और परिणाम आया अनुतीर्ण। चोट पर चोट हुई। इधर वह अनुत्तीर्ण हो गया था, उधर वह चित्रकार लड़की कहीं बाहर चली गई थी और राजेश अपने दिल के अरमान उसके सामने न निकाल पाया था। राजेश यह सदमा न संभाल पाया और बीमार पड़ गया। वह यह महसूस करने लगा, कि वह चित्रकार यौवन से हरा-भरा एक वृक्ष है और वह स्वयं एक अमर बेल जो बिना सहारे के नहीं रह सकती।' राजेश की हालत में कुछ सुधार हुआ तो उसके पिताजी ने उसे बाकी ग्रीष्मावकाश व्यतीत करने के लिए उसके चाचाजी के पास शिमला भेज दिया। और यह कह दिया कि उसे अकेला न छोड़ा जाये।

स्थान और वातावरण के परिवर्तन से राजेश में कुछ जीवन-सा नजर आने लगा। लेकिन वह उसको न भुला पाया था।

कालेज खुल गये थे। राजेश वापस लौटा और कालेज में पुनः प्रवेश प्राप्त कर पढ़ने लगा। उसने इसका निश्चय कर लिया था कि वह उस निष्ठुर की प्रतीक्षा करेगा। अब उसका जीवन एकाकी हो गया था। घर से कालेज और कालेज से घर।

आज राजेश देश का प्रख्यात सफल सर्जन था। यह सफलता उसे बहुत ही कम समय में मिली थी। घर वाले

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजेश को तंग करते थे कि राजेश अब शादी करले। लेकिन राजेश फीकी मुस्कान के साथ कह देता था। उसे तो उसकी प्रतीक्षा थी, जो जा चुकी है, वापस आयेगी या नहीं यह पता नहीं था।

सुबह से आज राजेश कुछ बेचैन था। तबियत हलकी-हलकी सी हो रही थी। अस्पताल जाने की कतई इच्छा नहीं थी। इसलिए उसने छुट्टी ले ली थी। घर पर वह आराम कर रहा था कि अस्पताल से फोन आया कि एक सीरियस केस आया है और आपरेशन आवश्यक है। राजेश के मन में आया कि मैं क्या करूँ और वह मना कर दे। लेकिन उसके अन्तर्मन से एक आवाज उठी, तुम अपने कर्त्तव्य से हट रहे हो राजेश, कह दो कि आ रहा हूँ और वह अपनी जबान न रोक सका।

वह शीघ्र ही अस्पताल पहुँच गया और पहुँचने पर उसे पता चला कि केस किसी औरत का है जो कार के ऐक्सीडेन्ट से घायल होकर बेहोश पड़ी हुई है।

राजेश ने उसे ऑपरेशन थिटयेर में पहुँचाने को कहा। ऑपरेशन रूम में पहुँच कर राजेश ने चादर उतरवाई, ऑपरेशन के लिए। लेकिन उसका चेहरा देख कर वह भौचक्का रह गया और मुँह से केवल इतना निकला, चित्रकार, तुम। वह आगे कुछ न कह सका। कुछ समय तक वह किंकर्त्तव्य-विमूढ़ की स्थिति में खड़ा रहा। कुछ देर पश्चात् अस्पष्ट से शब्दों में बोला, चित्रकार! मैं तुम्हें बचाऊँगा।

पांच घन्टे आपरेशन करते-करते राजेश के माथे पर पसीना छलक आया था। वह मौत से संघर्ष कर रहा था जो सब पर विजयी होती है। उसने एक कराह के साथ आँखें खोलीं चारों ओर देखा और एक अन्तिम कराह के साथ उसकी आँखें फिर बन्द हो गई। राजेश हारचुका था। औजार उसके हाथ से छूट चुके थे। राजेश चीख पड़ा, नहीं। असम्भव, ऐसा नहीं हो सकता। मैंने तुम्हारी बहुत प्रतीक्षा की लेकिन अब नहीं कर सकूँगा। ठहरो! मुझे अकेला अब मत छोड़कर जाओ। ठहरो, न! जा रही हो तो रुको मैं भी.....राजेश के प्राण पखेरू उड़ गये थे।

□

मेरे-अपने

सुरेश शर्मा

तुम जाओ मैं यादों की परछांई में रह लूँगा,
अपने अनुरागों के सपने खुद से ही कह लूँगा!
हृदय वेदना अब अपने मन से ही मैं कह लिया करूँगा,
अपने आंसू अब अपनी आंखों में ही पी लिया करूँगा,
अपने सब अभिशापों को अब में खुद ही सह लूँगा,
तुम जाओ मैं यादों की परछाँई में रह लूँगा!
रहता कौन साथ है हरदम सभी छूट जाते हैं,
कभी-कभी आशाओं के सब ख्वाब टूट जाते हैं,
मैं अपने टूटे सपनों की यादों में रह लूँगा,
तुम जाओ मैं यादों की परछाँई में रह लूँगा!
सब-कुछ कह कर भी मैं तुम से कुछ भी ना कह पाया,
साथ रहा है इतना फिर भी साथ नहीं रह पाया!
निठुर कल्पना की लहरों में ही अब मैं बह लूँगा,
तुम जाओ मैं यादों की परछाँई में रह लूँगा! □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजस्थान का आर्थिक विकास

प्रा० दाऊदयाल शर्मा

'Rajasthan is the Collective and Classical denomination of western India which for centuries remained of the territory controlled, ruled and predominently inhabited by (Rajpoot) princes."

राजस्थान ! तुम्हारा नाम सुनते ही भुजाएँ फड़कने-लगती हैं, रोम-रोम रोमांचित हो उठता है। भारत के वैभव पूर्ण अतीत की वीर गाथाएँ साकार होने लगती हैं। हृदय में उत्साह, आशा तथा नवजीवन का संचार होने लगता है।

राजस्थान ! तुम्हारा स्थान सदैव शीर्ष एवं महत्व-पूर्ण रहा है। क्षेत्रफल की दृष्टि से भारत में तुम दूसरे बड़े राज्य हो। भारतीय सर्वेयर जनरल के अनुसार तुम्हारा क्षेत्रफल १३२,१४७ वर्गमील तथा ग्रामपत्रों के अनुसार १,३१,९४३ वर्ग मील है। तुम्हारे उत्तर में पंजाब, पूर्व में उत्तर प्रदेश व दिल्ली, दक्षिण-पूर्व में मध्य-प्रदेश दक्षिण-पश्चिम में गुजरात और पश्चिम में पाकिस्तान है।

सूरमाओं के प्रदेश ! तुम्हारी वीर-भोग्या वसुंधरा में कमी किस बात की है ! तुम्हारे पुत्र, रणचंडी के गीत गाकर अकाल-मृत्यु का सहर्ष वरण करते हैं। तुम्हारे बांके सूरमा एक बार चल पड़ते हैं, तो रुकने का नाम ही नहीं लेते। वे आज अपनी कर्म-निष्ठा तथा अनूठे विचारों से भारत के पुनीत एवं गौरवपूर्ण इतिहास को और भी गौरवान्वित कर रहे हैं तथा भविष्य के संजोये हुए उज्ज्वल स्वप्नों को साकार करने में तत्पर हैं। अभी हाल ही में याहिया सैनिक-शासकों के द्वारा किये गये नर-संहार से मुक्ति दिलाने में, बंगला देश के स्वतंत्रता संग्राम को सफल बनाने में व विश्व रंग-मंच पर भारत को विजय-श्री दिलाने में तुम्हारे सपूतों के शौर्य एवं बलिदान की गाथा किसने नहीं सुनी ! इधर जमींदारी, विस्वेदारी तथा जागीरदारों के तीक्ष्ण कंटकों का भी अनुभव जितना तुम्हारे रत्नों ने किया, उतना शायद कहीं के निवासियों ने नहीं। तभी तो सरदार वल्लभ भाई पटेल ने कहा था : "हम लोग बहुत दिनों तक लड़े, हमें परदेसियों के साथ लड़ना पड़ा था, वही गुलामी से छुटकारे का रास्ता था, पर आज हमें किसी के साथ लड़ना नहीं है। हमें तो अपनी कमजोरियों से लड़ना है, तभी हम राजस्थान को ऊँचा उठा सकते हैं।"

स्वतंत्रता ने तो लोगों की काया ही पलट दी। सपूतों ने अनवरत प्रयास करने का बीड़ा उठाया। परिणाम स्वरूप १९४९ से १९५४ तक अनेक भूमि सुधार अधिनियम पारित हुये। राजस्थान काश्तकारी अधिनियम १९५५ तथा सीलिंग कानून १९५९ पारित किये गये। १९५६ में तुम आत्मनिर्भर हो गये। खाद्यान्न के क्षेत्र में १९५८ में तो तुमने ५० लाख टन खाद्यान्न की उत्पति से सारे देश को चकित कर दिया। युगों से चली आ रही रूढ़िवादिता के जामे को भी तुमने उतार फेंका तथा प्रगतिशील दृष्टिकोण अपना कर संकर बाजरा, ज्वार, मक्का व मैक्सिकन गेहूँ के बीजों का उपयोग किया, जिसका क्षेत्र १९६७-६८ में लगभग ४ लाख एकड़, १९६८-६९ में ११.३५ लाख एकड़, १९६९-७० में १४ लाख एकड़ का लक्ष्य रहा तथा १९७१-७२ में १२५ हजार एकड़ भूमि में संकर बाजरा व साथ ही १२४०० एकड़ भूमि में मैक्सिकन गेहूं बोने का लक्ष्य रखा गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वीरों के देश ! सपूतों की खान ! तुम्हारे नाम से इतिहास आंखों में चढ़ जाता है। यह सत्योक्ति कि तुम अपनी बहूद्देश्यीय नदी घाटी योजनाओं के माध्यम से भूगोल को बदल रहे हो। तुम्हारा ६०%भाग रेतीला है। कुओं की गहराई २०० से ५०० फीट तक है। चम्बल के अतिरिक्त वर्ष भर बहने वाली कोई नदी भी नहीं है। पंचवर्षीय योजनाओं के प्रारंभ में ९ लाख एकड़ भूमि में तालाबों अथवा बांधों के द्वारा सिंचाई होती थी तथा कुल ३० लाख एकड़ भूमि में सिंचाई की सुविधायें प्राप्त थीं। दूसरे शब्दों में सन् १९५० तक राज्य में कुल कृषि योग्य भूमि के ५ प्रतिशत भाग में ही सिंचाई के साधन उपलब्ध थे।

पर तुम तो एकता के प्रतीक रहे हो। पंजाब से जैसलमेर तक, राजस्थान नहर के रूप में प्रकट होने वाली गंगा, चंबल की नदियों के रूप में यमुना तथा भाखड़ा और चंबल की विद्युत के रूप में छिपी हुई सरस्वती के पवित्र संगम से तुम अनेक अलभ्य फलों को प्राप्त कर रहे हो। १९६७-६८ में राजस्थान नहर से १ लाख ९८ हजार एकड़ भूमि में सिंचाई हुई थी। १९६९-७० में एक लाख अड़तीस हजार हैक्टर भूमि में सिंचाई हुई थी। इस वर्ष १ लाख ८० हजार हैक्टर भूमि की सिंचाई का लक्ष्य है। चतुर्थ योजना में (१९६९-७४) इसके लिये ४० करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया। लूणकरण-सर, बीकानेर लिफ्ट नहर पर भी गतवर्षों में कार्य प्रारंभ किया जा चुका है। इस योजना के अंर्गगत १ लाख २६ हजार एकड़ भूमि में सिंचाई होने की संभावना है और १०० करोड़ रुपये से राजस्थान भू-जल-मंडल, कृषि-उत्पादन बढ़ाने के लिये महत्वपूर्ण योगदान दे रहा है इसके अंतर्गत १९६८ में २२६ नलकूपों का बोरिंग किया गया व ११ हजार कुओं को गहरा किया गया। अलवर, भरतपुर, जोधपुर, नगौर, पाली, चित्तौड़, डूंगरपुर, बीकानेर व झुंझुनूं आदि क्षेत्रों में भू-जल की उपलब्धि के लिये सर्वेक्षण-कार्य किया गया। लघु-सिंचाई योजनाओं के अतिरिक्त ९६ योजनाएँ चालू हैं। अकाल की स्थिति में लिफ्ट द्वारा सिंचाई योजनाओं को महत्व दिया गया है। १९७१-७२ में २० हजार कुओं को बिजली दी जाने की योजना है।

विद्युत से तुम जगमगा रहे हो ! राणाप्रताप परियोजना, जवाहरपरियोजना तथा आणविक बिजली घर के कारण विद्युत-उत्पादन में १९७३-७४ तक २५१ मैगावाट से भी अधिक उत्पादन की आशा है। राज्य के विद्युत एवं जन-संपर्क मंत्री द्वारा भरतपुर जिले के राजाखेड़ा में ५० लाख रुपये की विशाल विद्युतीकरण परियोजना का आरम्भ किया गया है। इस योजना के पूरे होने पर (चतुर्थ योजना काल में) राजाखेडा पंचायत-समिति के ७० गावों के १२६२ कुओं को बिजली उपलब्ध कराई जा सकेगी, जिससे बड़े क्षेत्रों में सिंचाई संभव हो सकेगी। कृषि उद्योगों एवं घरेलु उद्योगों के लिये बिजली उपलब्ध कराने हेतु ११६ सब स्टेशनों का निर्माण किया जायेगा। राज्य सरकार ने सवाई माधोपुर जिले में आधुनिक एवं उन्नत कृषि-विधियों को लोकप्रिय बनाने तथा इनके जरिये अधिकतम श्रेष्ठ परिणाम प्राप्त करने वाली पंचायत-समितियों के लिये ४५००० रु. के अनुदान दिये जाने के आदेश दिये है। जिलाधीश ने १९६९-७०एवं१९७०-७१ के वर्षों में जिले की १० पंचायत समितियों की तुलनात्मक प्रगति की स्थिति को ध्यान में रखते हुये हिंडौन को प्रथम स्थान प्राप्त होने के कारण ३५००० रु० तथा महुआ समिति को १०,००० रुपये की राशि देने के आदेश जारी कर दिये हैं। इस राशि का योग कृषि-निर्माण एवं सिंचाई-साधनों में वृद्धि हेतु किया जायेगा।

प्रगति के प्रतीक राजस्थान ! रेतीली होने पर भी तुम्हारी भूमि, रत्नों से विभूषित है। भारत का ९२ प्रतिशत जिप्सम, चांदी, ७० प्रतिशत सोपस्टोन, १०० प्रतिशत जस्ता व २५ प्रतिशत अभ्रक तुम्हीं पैदा करते हो। अब तो तुम्हारे यहां कारखानों में उपभोग किये जाने वाले उत्तम किस्म के राक व फास्फेट के भी अतुल भंडार उदयपुर, जैसलमेर, अजमेर तथा खंडला में हाथ लगे हैं। मकराना का संगमरमर तथा रक्षात्मक कार्यों में प्रयुक्त किया जाने वाला उत्तम किस्म का रंगस्तन मिलने से तुमने भारत को यश दिया है। भारत सरकार द्वारा खेतड़ी के स्थापित होने वाले कापर-स्मैल्टर का काम भी गति पूर्वक चल रहा है। आशा है कि इस वर्ष (१९७२) में तांबे का उत्पादन शुरू हो जायेगा। सरमथुरा क्षेत्रजिला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भरतपुर से प्राप्त पत्थर का गतवर्ष (१९७०–७१) में जापान एवं कनाडा को निर्यात किया गया, जिससे ५ लाख रुपये की विदेशी मुद्रा प्राप्त हुई।

तुम्हारी औद्योगिक प्रगति भी सराहनीय रही है। उत्पादन में सर्वाधिक वृद्धि शक्कर में हुई। सीमेंट, सूती-कपड़े, नायलान के धागे के उत्पादन में महत्वपूर्ण बढ़ोत्तरी हुई। भारत सरकार द्वारा सार्वजनिक क्षेत्र में यंत्र बनाने का कारखाना भी कोटा में स्थापित हो चुका है। और उसमें उत्पादन भी शुरु हो गया है। इसी प्रकार यंत्रों के उपकरण बनाने का कारखाना (एम. टी. सी.) अजमेर में स्थापित किया गया है। सार्वजनिक क्षेत्र में ही चमड़े का कारखाना (लेदर टेनरी) स्थापित करने की दिशा में विशेष प्रगति हो चुकी है। तृतीय पंचवर्षीय योजना के अंत में तुम्हारे यहां १७ सूती मिलें थीं, जिनमें ३,०९, ४५६ तकुये लगे हुये थे। इनके अतिरिक्त ३ ऊनी मिलें, ३ सिंथेटिक धागे बनाने वाली मिलें, ५ खनिज व ३ सीमेंट कारखाने १ उर्वरक कारखाना, २ डिस्टलिरीज, ८ इंजिनियरिंग यूनिट्स, ५ विद्युत, २ वैज्ञानिक उपकरण उद्योग, १ वनस्पति उत्पादन संयंत्र, १ गुबार से गोंद बनाने का उद्योग, ३ दुग्धशाला संयंत्र तथा चमड़े का कारखाना आदि स्थापित होने जा रहे हैं। ड्राईबैट्री सैल्ज, सूखा दुग्ध चूर्ण, उच्च कारबन एवं अलाय स्टील स्ट्रिप आदि के कारखानों को भी स्वीकृति दे दी गई है।

गतवर्षों में यहां दो महत्वपूर्ण निगमों की स्थापना की गई है। राज्य कृषि उद्योग निगम व राजस्थान राज्य उद्योग एवं खनिज विकास निगम के द्वारा इंजीनियरों के लिये "सीखो और अपने उद्योग लगाओ" योजना भी तैयार कर ली गई है। इस संबंध में राज्य के भूतपूर्व मुख्यमंत्री श्री सुखाडिया के विचार उल्लेखनीय हैं :

"हमें उत्पादन में अधिक-से-अधिक वृद्धि के कार्य को एक राष्ट्रीय कर्त्तव्य मान कर खेतों, कारखानों, व खदानों में कार्य करना है। हमें अपनी आवश्यकताओं की वस्तुओं के लिये दूसरे राष्ट्रों पर निर्भर नहीं रहना है। देश के हर नागरिक को चाहे वह किसी भी काम में लगा हो, यह मान कर काम करना चाहिये कि वह देश की शक्ति एवं समृद्धि बढ़ाने में अपना योगदान दे रहा है।"

इसके अतिरिक्त ३१ मार्च १९७४ के पूर्व नये उद्योगों की स्थापना तथा वर्तमान उद्योगों का विस्तार करने के लिये निर्माण-सामग्री तथा कच्चे-माल को ७ वर्षों की अवधि तक चुंगी से मुक्त रखा जायेगा। इस अवधि में स्थापित उद्योगों के कच्चे माल को ३१ मार्च १९७९ तक की अवधि के लिये राज्य बिक्रीकर से पूर्णतः मुक्त कर दिया जायेगा। इस प्रकार की अनेक सुविधाओं व रियायतों के कारण औद्योगिक विकास की गति को एक नई दिशा मिल सकेगी।

वीरों की धरती ! अभी तक तुम्हारे सपूतों ने अकाल की विभीषिका को बहुत सहा हैं। अकाल के संबंध में यह कहावत बहुत प्रचलित रही है:

पंग पूंगल घिड, उदरज बीकानेर।
भूलो चूको जोधपुर, ठावो जैसलमेर।।

अकाल कहता है कि मेरे पैर पूगल क्षेत्र में, घड़ मेड़ता में और उदर बीकानेर में स्थायी रुप से हैं। कभी कभी भूला-भटका जोधपुर भी पहुँच जाता हूँ किंतु जैसलमेर में तो मैं स्थायी रूप से निवास करता हूँ।

अकाल के पूर्ण निदान के लिये यहां निरंतर प्रयास किये जाते रहे हैं। 'मुख्य मंत्री बाढ़ व अकाल सहायता कोष' में लगभग १८ लाख ८२ हजार रु० एकत्र हो चुके हैं। इन क्षेत्रों में पानी के ट्यूबवैल्स खोदने, रीजनल पाइप लाइनें लगाने व फौडर बैंक स्थापित करने आदि की संभावनाओं पर अकाल समितियों ने सुझाव दिये हैं। आशा है कि कुछ वर्षों में सरकार की बहूद्देशीय नदी घाटी योजनाओं की सफलता एवं आर्थिक क्षेत्र में वृहद कार्यक्रमों से बीकानेर व जैसलमेर के क्षेत्र लहलहा उठेंगे। आशा की जाती है कि नर्मदा–माही योजना से राजस्थान को पानी मिल सकेगा तथा जालौर बाड़मेर जिले की ५११ लाख एकड़ भूमि की शुष्कता दूर हो सकेगी। दैवी विपदाएँ तुम्हारे लिये कोई नई नहीं हैं। तुम्हारी इस प्रगति की कहानी को हम स्वर्गीय नेहरू जी के निम्न शेर द्वारा व्यक्त कर सकते हैं :

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'इस तरह तय की हमने मंजिलें।
गिर पड़े, गिरकर उठे, फिर चल दिये।'

स्वतंत्रता दिवस की २३ वीं वर्षगांठ पर तुम्हारे राज्यपाल श्री हुकुमसिंह के ये शब्द स्मरण रहेंगे :

"मुझे विश्वास है कि हमारे विपुल प्राकृतिक साधनों तथा जन–शक्ति के उन्नत मनोबल से हम राज्य को खुशहाली का एक नया युग दे सकेंगे।'

आइये, आज के इस गौरवपूर्ण पर्व पर हम पुनः निश्चय करें कि हम छोटे विवादों में न पड़कर, राज्य के नव-निर्माण में अपना श्रेष्ठ तम सहयोग देंगे।"

अरावली के प्रदेश! वास्तव में तुमने हर क्षेत्र में अपनी सर्वतोन्मुखी उन्नति व आकांक्षाओं के अनेक स्वप्न संजो रखे हैं। तुम्हारी प्रगति के लिये ३१६ करोड़ रुपये के आकार की चतुर्थ–योजना, योजना–आयोग के समक्ष प्रस्तुत की, जिसे घटाकर ३०२ करोड़ रुपये की ही रहने का सुझाव दिया गया। १९६९–७० हेतु ४९.५० करोड़ रु० व १९७०–७१ के लिये ५५.७७ करोड़ रुपये की वार्षिक योजनाएँ बनाई गई। वर्ष ७१--७२ में ६५.५५ करोड़ रुपये की योजना है जिस राशि को कृषि, सहकारिता, सिंचाई विभाग, विद्युत, यातायात आदि पर खर्च करने की संभावना है। इसके अतिरिक्त ६.७० करोड़ रुपये राजस्थान क्षेत्र में कृषि–विकास को गति देने के लिये विश्व--खाद्य कार्यक्रम के द्वारा दिये जायेंगे। इस प्रकार प्रसन्नता है कि चतुर्थ योजना के प्रथम ३ वर्षों में राज्य सरकार द्वारा १७५.३६ करोड़ रुपये खर्च किये गये।

सन् १९७२–७३ में विश्व–खाद्य–कार्यक्रम के अंतर्गत राजस्थान की राजस्थान नहर के विकास कार्यक्रम पर व्यय करने हेतु ०.७० लाख रुपये प्राप्त होंगे। १९७१-७२ ए. पी. ६५ करोड़ रुपये का व्यय निम्न प्रकार होगा :

१. कृषि-कार्यक्रम.....५६०.९० (लाख रुपये)
२. सामुदायिक विकास.....१२०.९० (लाख रुपये) एवं सहकारी पंचायतें
३. सिंचाई तथा बिजली....३५४३.४४ (लाख रुपये)
४. उद्योग व खनिज..... १६२.३५ (लाख रुपये)
५. परिवहन–संचार.....१८९.५० (लाख रुपये)
६. कल्याण-सेवायें.....१८६९.४० (लाख रुपये)
७. विविध.....४३.५१ (लाख रुपये)

आशा है कि तुम्हारी ये सभी महत्वपूर्ण आर्थिक योजनाएँ सफल हो सकेंगी। तुम्हारी मरूभूमि, जो अपने अतीत की वीर गाथा शुष्क कंठ से गाती रही है, शीघ्र ही घनधान्य से परिपूर्ण हो जायेगी। सिंचाई के साधनों का विस्तार व बहूद्देशीय नदी घाटी–योजनाओं की चमत्कारिक सफलता तुम्हारे लिये वरदान सिद्ध हो रही है।

□□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजस्थान में दयानन्द-मिशन

प्रा. हरीश मोहन सक्सेना

१९ वीं शताब्दी में भारत के अन्तर्गत जो सामाजिक एवं धार्मिक क्षेत्र में पुनर्जागरण हुआ, उसकी भाववादी भूमिका रही है, जिसने राष्ट्रीय विकास की मांग के साथ धर्म, समाज और संस्कृति में महत्त्वपूर्ण परिवर्तनों को संभव बनाया। इस देश की सामाजिक और धार्मिक विचार धाराओं के संदर्भ में अंग्रेजी शासन के प्रारम्भिक डेढ़ सौ वर्ष, भारत में रूढ़िवादी परिवर्तनों की दृष्टि से उल्लेखनीय माने जाते हैं, क्योंकि इन्हीं परिवर्तनों के परिणाम स्वरूप भारत ने आधुनिक युग में प्रवेश किया। १९ वीं शताब्दी के प्रारम्भ में राजाराममोहन राय ने 'ईश्वर की एकता' का उपदेश देकर सामाजिक और धार्मिक सुधारों को प्रेरित किया। उनके अंधविश्वास तथा अज्ञान पर साहसिक प्रहार ने शिक्षित नवयुवकों में नवीन चेतना उत्पन्न की।

इस शताब्दी के द्वितीय चरण में स्वामी दयानन्द सरस्वती ने भारत में पुनर्जागृति लाने का कार्य प्रारम्भ किया। १९ वीं शताब्दी में हुए सामाजिक और धार्मिक आन्दोलनों की श्रेणियों की श्रृंखला में आर्यसमाज आन्दोलन का विशिष्ट महत्त्व रहा है। यह आन्दोलन अपनी उपलब्धियों तथा प्रभावों की दृष्टि से सब से महत्त्वपूर्ण आन्दोलन माना जाता है। यदि आर्यसमाज आन्दोलन अपनी भूमिका में न होता, तो सम्भवतः हिन्दुत्व की रक्षा खतरे में पड़ जाती एवं हिन्द धर्म जीवित अवस्था में नहीं रह पाता यदि धर्म जीवित रहता भी तो परिवर्तित रूप में होता। दयानन्द सरस्वती ने मूर्त्ति-पूजा का विरोध कर, उसके विरूद्ध उपदेश देकर, भारत में जागरण का कार्य प्रारम्भ किया। उन्होंने पश्चिमी भारत तथा गंगा के तटवर्ती इलाकों में प्रमुख रूप से अपने उपदेश दिए। उन्होंने समाज के अंधविश्वास, अनैतिकता, वेश्यावृत्ति, समाज की गिरती हुई स्थिति पर साहस व स्पष्ट रूप में वज्रपात किया। वे भारतीय समाज में क्रांति के रूप में अंधकार, अंधविश्वास और अज्ञान को समाप्त करना, अपना उद्देश्य मानते थे, उनकी भावनाओं को इस प्रकार प्रकट किया गया है :—

"The world is fettered by the chainforged by superistition and ignorance. I have came to snape as under that chain and to set slaves at liberty. The purpose of my life is the pursuit of truth of thought, speech and deed."

राजस्थान में जिस समय दयानन्द सरस्वती के मिशन का आगमन हुआ, उस समय राजस्थान या राजवाड़ों की स्थिति अव्यवस्थित एवं शोचनीय रूप में थी; जहां कि शाही दरबारों में अनैतिकता, भोगविलासी जीवन, आलस्यपूर्ण निष्क्रियता (Lethargy) विद्यमान थी। ये शासक और राजकुमार मद्यपान एवं वेश्यावृत्ति में व्यस्त रहते थे, जिनका स्तर काफी गिर चुका था, वे अपनी स्वतन्त्रता खो चुके थे और ब्रिटिश शासन के प्रभाव तथा संरक्षण में रहने में ही प्रसन्न थे, क्योंकि रियासती शासकों के राजनीतिक, सैनिक तथा प्रशासनिक अधिकारों तथा हितों की रक्षा ब्रिटिश शासन द्वारा की जाती थी। दयानन्द सरस्वती इस स्थिति में दर्शक के रूप में शांत नहीं बैठ सकते थे।

राजस्थान में दयानन्द मिशन का पदार्पण १८६५ई० में हुआ जबकि दयानन्द सर्वप्रथम जयपुर आए और उन्होंने शाही दरबारों में वर्णित अनैतिकता के विरूद्ध

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सक्रिय गति विधियां करनी प्रारम्भ कीं। शाही दरबारों में दरबारियों तथा संगीतकारों का जमघट बना रहता था और शराब को पानी की तरह बहाया जाता था। इस आनन्दपूर्ण व भोगविलासी जीवन ने शासकों को इस बात से भुला दिया था कि कृषक उनके लिए दिन-रात मेहनत करके भूमि पर परिश्रम कर रहे हैं। जयपुर के महाराजा रामसिंह, जो कि शिव के उपासक थे, उनके विरूद्ध दयानन्द ने सुधार करने का प्रयास किया, परन्तु दयानन्द को इस संबध में सफलता प्राप्त नहीं हुई। स्वामी दयानन्द सरस्वती का अजमेर में सर्वप्रथम आगमन ३० मई १८६६ ई० में हुआ, जहां कि वे रायदौलत राम के बगीचे में ठहरे। इस यात्रा के दौरान स्वामी दयानन्द, का रेवरनग्रे, रोप्सन, सूल्ब्रेड आदि ईसाई मिशनरियों के साथ शास्त्रार्थ हुआ। इसी समय एक मुस्लिम नेता मुराद अली के साथ भी स्वामीजी का सम्पर्क हुआ। स्वामी दयानन्द, जब अजमेर भ्रमण पर आए, तो मार्ग में दूदू के ठाकुर इन्दरसिंह से उनका सम्पर्क हुआ एवं इन्दरसिंह उनके शिष्य बन गए। यद्यपि राजस्थान के अपने प्रथम भ्रमण में दयानन्द को विशेष सफलता नहीं मिली, तथापि उन्हें इस दृष्टि से सफलता प्राप्त हुई कि अचरोल के ठाकुर रणजीतसिंह दयानन्द के शिष्य बन गए तथा कामदार हीरालाल कायस्थ ने मद्यपान करना त्याग दिया।

स्वामी दयानन्द १८७८ ई० की शीतऋतु में द्वितीय बार राजस्थान में भ्रमण पर आए तथा अजमेर में ठहरे। इस बार पुनः दयानन्द सरस्वती का पादरियों से शास्त्रार्थ हुआ जिनमें रेवरनग्रे, डा. हजबैण्ड, स्कोटिस प्रेसबीटिरियन मिशन के सदस्यों से २८ नवम्बर १८७८ ई० में शास्त्रार्थ हुआ। दयानन्द सरस्वती ने पादरियों की चुनौती के ऊपर इसाईयों के विरूद्ध ६४ मत निर्मित किए और उनके लिखित रूप में उत्तर पूछे, परन्तु पादरीवर्ग लिखित उत्तर देने में असमर्थ रहा। इस समय स्वामी दयानन्द अपना प्रभाव जयपुर के महराजा रामसिंह पर पुनः डालने के प्रयत्न में असफल रहे, क्योंकि महाराजा ने मूर्त्ति-पूजा का खण्डन किए जाने तथा स्वामीजी के प्रति श्रद्धा पूर्ण भावनाओं को मानने से इन्कार कर दिया।

लेकिन दयानन्द अपने प्रयत्नों में निराश नहीं हुए उनका राजस्थान में तृतीय बार भ्रमण १८८१ ई० हुआ, जो कि राजस्थान में दयानन्द मिशन के संदर्भ महत्त्वपूर्ण योग कहा जा सकता है, क्योंकि इस भ्रम के दौरान स्वामी दयानन्द चित्तौड़ गए और मेवाड़ महाराजा सज्जनसिंह से मिले, जो कि अपने दरबारि के साथ शाही कर्त्तव्यों की अवहेलना कर रहे थे। उनक नास्तिकता और भोग-विलासी-जीवन ने कविराजा श्यामल दास और पाण्डेय मोहनलाल विष्णुलाल के लिए चिन्ता उत्पन्न की कि वे महाराणा में धार्मिक बातों की ओ रूचि उत्पन्न करें तथा उनका ध्यान इस ओर आकर्षि किया जाय कि आध्यात्मवाद शासन को विवेकपूर्ण बना देता है। इस उद्देश्य से महाराणा के दो शुभचिंतकों ने दयानन्द सरस्वती के साथ पत्र व्यवहार किया कि स्वामीदयानन्द महाराणा के सा वार्तालाप करना निश्चित करें। इस समय दयानन्द ने सज्जनसिंह को अपने उपदेश देने प्रारम्भ किए जिसमें कि उन्होंने यह स्पष्ट करने का प्रयत्न किया कि राजा के क्या धार्मिक कर्त्तव्य हैं। उन्होंने भोगविलास, ऐश्वर्य वेश्यावृत्ति का खण्डन किया और धर्म के संबंध में उपदे दिए। दयानन्द सरस्वती के इन प्रयत्नों के फलस्वरू जहां शाही हरम में सहस्त्रों निर्दोष स्त्रियों के साथ मान तावादी व्यवहार नहीं होता था, वहां अब उनको सम्मा दिया जाने लगा।

जोधपुर दरबार की स्थिति मेवाड़ से भी अत्यधि गिरी हुई थी। जोधपुर शासक जसवंतसिंह एक दरबारी सुन्दर व लावण्ययुक्त युवती ननीजान (Nunnijan) के प्रेम में लिप्त थे। अपने प्रयत्नों में कभी न थकने वा स्वामी दयानन्द सरस्वती ने जोधपुर शासक जसवंतसिं के जीवन में भी परिवर्तन लाने का प्रयत्न किया ताकि व अपनी प्रजा के प्रति शाही कर्त्तव्यों का उचित रूप पालन कर सकें। यद्यपि इस समय जसवंतसिंह ने ऋषि को इस बात का अवसर नहीं दिया कि वे व्यक्तिगत रू से उसको सलाह दें फिर भी उन्होंने उनके चरित्र परिवर्तन लाने का निश्चय किया और उनका ध्यान एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पत्र के द्वारा उनकी चारित्रिक कमियों की ओर आकर्षित किया। यह माना जाता है कि स्वामी दयानन्द ने इस दृष्टि से कई पत्र जसवंतसिंह को लिखे जिनमें उन्हें सफलता भी मिली। इसके अतिरिक्त स्वामी दयानन्द ने जसवंतसिंह की मुसलमानों और यूरोपियनों के साथ मित्रता के विरुद्ध भी आवाज उठायी। इन सब गति-विधियों का परिणाम यह हुआ कि स्वामीजी ने जोधपुर में अपने कई शत्रु बना लिए। ननिजान ने प्रेम और शक्ति अर्जित करने की मदान्धता में स्वामीजी को जहर दे दिया जिससे उनकी अक्टूबर १८८३ ई० में मृत्यु हो गयी।

यद्यपि स्वामीदयानन्द को अपनी गतिविधियों में इच्छित सफलता प्राप्त न हो सकी तथापि हमें यह बात नहीं भूल जानी चाहिये कि राजस्थान के लोगों के जीवन से संबंधित विभिन्न पहलुओं पर दयानन्द के विचारों एवं प्रयत्नों का स्पष्ट प्रभाव पड़ा। जहां भी वे गए, उनके कई शासक शिष्य बन गए। उनके प्रभाव के कारण शाहपुरा के राजा और मसूदा के राव ने मांस का सेवन करना बंद कर दिया। इसी प्रकार वे जहां भी गए, उन्होंने गो-वध के विरुद्ध आवाज उठायी और इसके विरुद्ध हिन्दुओं की विचार धारा को बढ़ाने में सफलता प्राप्त की। इस कार्य में उदयपुर और बूंदी राज्य के शासकों का काफी सहयोग प्राप्त हुआ। उनकी मृत्यु की एक दशाब्दी के पश्चात् राजस्थान में विभिन्न शिक्षा तथा कल्याणकारी संस्थाओं की स्थापना हुई। अजमेर के आस-पास कई स्थानों पर विभिन्न शिक्षा संस्थाएँ, महाविद्यालय, विधवाश्रम आदि स्थापित हुए जो कि मानवता के प्रति अपनी महान सेवाएँ कर रहे हैं।

□

दो व्यंग्य

आनन्दसागर मेहता
बी० एस- सी० (कृषि) अंतिम वर्ष

हलके कवि

जो दवा के नाम पर,
पुड़िया में राख बेचते हैं,
वे ही अच्छा मजमा जमाते हैं !
अकसर हलके कवि मंच पर,
कविता के पहले,
चुटकुले सुनाते हैं !

समाजवाद

एक चुनाव जीते नेता से,
पूछा हमने,
आप की खातिर,
क्यों
इतना धन खर्चा जा रहा है ?
वे चिल्लाये :
'देखते नहीं,
समाजवाद आ रहा है !'

□□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पश्चासीन [बैक–बैंचर्स]

प्रमोद कुमार शर्मा तृतीय वर्ष (विज्ञान)

मित्रो,

कॉलेज ही नहीं विद्यालय एवं प्राथमिक शाला की कक्षाओं में भी उपस्थित छात्रों में कुछ स्वेच्छापूर्वक नियमित रूप से जो पीछे की सीटों पर अपना स्थान ग्रहण करते हैं, उनको 'पश्चासीन' (बैक-बेंचर्स) कहते हैं। पश्चासीन बनने में कितने लाभ हैं यह तो गिनना आकाश के तारों के गिनने के समान ही होगा लेकिन फिर भी कुछ लाभ आपके समक्ष प्रस्तुत करते हुए मुझे उसी प्रकार की प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है जिस प्रकार अमेरिका को चांद पर उतर कर अथवा मंगल ग्रह की ओर उड़ान भरने का विचार करके होता होगा :—

१. पीछे से उठकर आहिस्ता से खिसक जाना।

२. देर से आने पर पर भी भीगी बिल्ली की तरह चुपके से अपना स्थान ग्रहण कर लेना।

३. स्टंट करने पर भी किसी की दृष्टि वहाँ तक न पहुंचने के कारण बच जाने की पूर्ण सुविधा।

४. पीछे से फेंक कर सामने पटाखे छुड़ाने पर अगले छात्रों पर उसका घुआँ उड़ाना।

५. कक्षा में चल रहे अध्ययन के समय निरापद झपकियाँ लेना व दिन में ही मधुर स्वप्न देखना।

६. भावी असाधारण एवं अवांछनीय कार्य-क्रमों की रुप-रेखा तैयार करना।

७. किसी अनुपस्थित छात्रकी बोली बदलकर उपस्थिति का बोध कराना।

८. अध्ययन में ध्यान न देकर बैठे-बैठे कई प्रकार के खेल खेलते रहना आदि-आदि।

जिस प्रकार युद्ध के मैदान में सबसे आगे पैदल उसके पीछे घुड़सवार, ऊँट सवार, हाथी सवार, एवं सबसे पीछे तोप सेना रहा करती है उसी प्रकार स्टेडियम अथवा कक्षा थियेटर्स में भी अगली पंक्ति सबसे नीची एवं पिछली पंक्तियाँ ऊँची होती हैं या यों कहिए कि कॉलेज में प्रथम वर्ष, द्वितीय वर्ष, तृतीय वर्ष आदि कक्षाएँ सीढ़ियों के समान ऊँची चढ़ती चली जाती हैं उसी प्रकार यह अनुभव किया जाता है कि सबसे अगली पंक्ति में स्थान ग्रहण करने वाला छात्र "छोटे मुन्ने" व क्रमशः उनसे पिछली पंक्तियों में युवक एवं नव-जवान तथा बुजुर्गों के विराजने के स्थान होते हैं।

इन महाशयों का कक्षा में चल रहे अध्ययन से कोई सरोकार नहीं होता वे तो कक्षा के बुजुर्ग होते हैं। जिस प्रकार सरकार का संचालन मंत्रियों द्वारा होता है, अथवा छात्र संघ का संचालन संसद सदस्यों द्वारा किया जाता है उसी प्रकार का रुतबा इन बुजुर्गों यानी 'पश्चासीनों' का कक्षा में पाया जाता है। ये कक्षा में उपस्थित अवश्य होते हैं किन्तु मात्र शारीरिक रूप से। कोई भी मनोवैज्ञानिक इनके चेहरे के भावों को पढ़कर आसानी से बता सकता है कि इनका मन जलपान गृह अथवा किसी चलचित्र में अटका हुआ है। क्या इनको मन बहलाने का साधन वहाँ उपलब्ध होता ही नहीं, किन्तु फिर भी क्योंकि परीक्षा में बैठने के लिए प्रत्येक विद्यार्थी के लिए ६५% उपस्थिति अनिवार्य है, परिणामतः १५% कानूनी छूट प्राप्त कर लेने के उपरान्त भी इनको अपना मन मसोस कर अपने अरमानों का खून करके भी शेष प्रतिशत प्राप्ति के लिए कक्षा में उपस्थित होना ही पड़ता है।

अब आपके मन में फिर ये प्रश्न उठता होगा कि ऐसी स्थिति में ये महाशय कक्षा में किस प्रकार समय व्यतीत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर पाते होंगे। स्वयं पश्चासीन होने के नाते इनकी साधारण दिनचर्या का मुझे बहुत अच्छा अनुभव है। मैं यह नहीं चाहता कि आप उस अनुभव ज्ञान से वंचित रह जाएं, तो सुनिये, अलग-अलग स्वभाव के सज्जन अपने कार्यों में स्वभावानुसार पूर्ण दक्ष होते हैं। उपस्थिति अंकन के समय अपने सहपाठियोंकी प्रतिपत्री (प्रॉक्सी) बोलकर अपने कार्यों का शुभारम्भ करते हैं। अध्ययन के समय भी शिक्षक महोदय का मुँह श्यामपट्ट की तरफ होते ही यकायक शोर मचना उसी प्रकार आरंभ हो जाता है जिस प्रकार चित्रपट पर नायिका के ऊपर दुःख पड़ते ही उसका रागिनी के साथ गाना। इसकी प्रमुख भूमिका इन्हीं बुजुर्गों अर्थात् पश्चासीनों को ही निभानी पडती है। बीच-बीच में विभिन्न प्रकार की आवाजों का आना प्रारम्भ हो जाता है और ऐसा प्रतीत होने लगता है कि जैसे शिक्षा-संस्था व चिड़िया घर पास-पास ही हैं। ये बुजुर्ग लोग कक्षा में गले का पूर्ण अभ्यास आरंभ करते हैं, भयंकर व सुरीली आवाजें एक साथ गूंजती हैं जिससे कक्षा का वातावरण कोलाहलपूर्ण व आधुनिक संगीत-मय हो जाता है और तब शिक्षक महोदय का मुँह यकायक पुनः सामने होते ही कक्षा का वातावरण श्मशान की तरह शांत हो जाता है।

वैसे तो महाविद्यालयों के छात्रों में प्रश्न पूछने का साहस ही नहीं होता किंतु यदि कोई छात्र साहस बटोर कर प्रश्न पूछे तो फिर से आवाजें आने लगती हैं "बैठ जा, बैठ जा, चमचा न बन" जिससे फिर कोई प्रश्न पूछता ही नहीं। उच्च कक्षाओं में शोर मचाने की प्रवृत्ति कम हो जाती है परन्तु उपर्युक्त अन्य साधनों द्वारा समय व्यतीत करना पड़ता है, कुछ छात्र पेपर पर कोई शेर या कविता या "यह तो बड़ा बोर लेक्चरार है" आदि लिखकर कक्षा में घुमाते हैं। परिणामतः अगली कक्षाओं में कोई उपस्थित ही नहीं होता।

गंभीर प्रकृति के महाशय अपने समय का सद्-उपयोग गंभीर कार्यों में करते हैं। अध्ययनशील छात्र कक्षा में उपन्यास पढ़कर मानो समय के दुरुपयोग से बचते हैं। कोई छात्र अपनी काल्पनिक प्रेयसी को प्रेम पत्र लिखकर उसकी मधुर याद में मन मसोस कर रह जाता है तो कुछ छात्र अपने माता पिता से पैसे मँगवाने के तरीकों का उसी प्रकार अन्वेषण करते हैं जिस प्रकार कि चाय बनाते-बनाते स्टीफनसन् ने "भाप के इंजिन" का आविष्कार कर डाला था, जरूर ही वह पश्चासीन रहा होगा। कला प्रेमी छात्र अपनी पुस्तकों व कापियों पर अभिनेत्रियों के भाव पूर्ण चित्र बनाकर शिक्षक के प्रति श्रद्धा दिखलाते हैं तो उनमें से ही कुछ अपना लेख सुधारते हैं और तो और लेखक बनने की धुन में अपने लेख को कक्षा में लिखना आरंभ करते हैं, जिसको बाद में स्वयं ही पढ़कर मुक्त कंठ से उसकी प्रंशसा करते नहीं अघाते।

यह अतिशयोक्ति नहीं होगी यदि मैं यह स्पष्ट कह दूँ कि प्रस्तुत लेख भी लेखक की तीन कक्षाओं की सफल साधना का ही प्रतिफल है।

अच्छा तो अब हम चलते हैं, फिर कल मिलेंगे।

आपका अपना ही...एक पश्चासीन

व्यंग्य चित्र : रामबाबू माथुर, द्वितीय वर्ष (कला)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोक-विज्ञान

वर्षा-आगमन-संबंधी प्रचलित लोकोक्तियाँ

□ नारायणसिंह चौहान—एम. ए. हिन्दी (उत्तरार्द्ध)

"उत्तम खेती मध्यम बान,
निकृष्ट चाकरी भीख निदान"

भारत एक कृषि-प्रधान देश है। यहां की जनसंख्या का लगभग ६९.०८ प्रतिशत भाग कृषि करता है। किसी देश की समृद्धि की कसौटी वर्तमान युग में उद्योग-धंधे होते हैं। लेकिन प्रसिद्ध विचारक सुकरात का मत है: "जब खेती फलती-फूलती है, तब सब धंधे पनपते हैं, परन्तु जब भूमि को बंजर छोड़ दिया जाता है, तो धंधे भी शीघ्र नष्ट हो जाते हैं।" लेकिन यह हमारा दुर्भाग्य है कि "भारतीय कृषि तथा सरकार का बजट, वर्षा में एक जुआ है।"

भारत आदिकाल से ही कृषि-प्रधान देश रहा है। प्रकृति के पूर्ण साधनों से सम्पन्न यह देश 'सोने की चिड़िया" और "घी-दूध की नदियाँ बहाने वाला देश" रहा है। कृषि की प्रमुख आवश्यकता पानी है। पानी की पूर्ति अधिकतर इंद्र देवता द्वारा ही होती है। वर्षा का अनिश्चय हमेशा कृषक के हृदय में भय उत्पन्न करता रह है और इस भय के निवारण हेतु भारतीय कृषि-परंपरा में कुछ ऐसे पंडित और विद्वान हुए हैं जिन्होंने प्रकृति का गहन अध्ययन और अनुभव किया और इन अनुभवों के आधार पर वर्षा के निश्चय सम्बन्धी विविध सूत्रों की रचना की। इनमें विशेष चर्चित नाम घाघ और भंडर के हैं। इनके वर्षा सम्बन्धी पद्य-बद्ध सूत्र कृषकों में मौखिक परम्परा में आज भी प्रचलित हैं। यहाँ इनका विवेचन करना ही हमारा प्रतिपाद्य है। इन सूत्रों में आज बहुत से प्रक्षिप्त अंश भी जोड़ दिये गये हैं। बहुत से कृषकों ने अपने अनुभवों के आधार पर और नये सूत्रों की भी रचना करली है और उन्हें उक्त विशेषज्ञों के नाम के साथ जोड़ दिया है।

ग्रीष्म के दिनकर की कुटिल किरणों से व्याकुल कृषक की जीवन-आशा मात्र वर्षा ही है। वह प्रकृति के प्रत्येक परिवर्तन का निरीक्षण बड़े ध्यान से करता है। निरीक्षण के बाद वह निष्कर्ष निकालता है। यही निष्कर्ष जब आने वाले कुछ वर्षों में सही निकलता है तो वह निष्कर्ष कृषक की एक थाती बन जाता है। जब किसान देखता है कि पुर्वा हवा इतने जोर से चल रही है कि आम झड़ने लगते हैं, तब वह समझता है कि वर्षा ऋतु आ गई:

"अम्बा झोर चलै पुरवाई
तब जानो वर्षा ऋतु आई"

यही नहीं, वरन् एक सफल कृषक ज्येष्ठ के महीने की गर्मी को देखकर ही साल भर की वर्षा का अंदाज लगा लेता है:

"जेठ मास जो तपै निरासा
तो जानो पानी की आसा"

प्रकृति के सूक्ष्म निरीक्षण द्वारा एक सफल कृषक प्रकृति के वायु, बादल, पशु-पक्षियों एवं अन्य विविध उपादानों के परिवर्तनों को देखकर वर्षा के आगमन की जानकारी प्राप्त कर लेता है। यहां इन उपादानों के आधार पर वर्षा के आगमन से सम्बन्धित कृषक-जीवन में जो विविध सूत्र प्रचलित हैं, उनका संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत किया जा रहा है:

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वायु :

वायु-विचार वर्षागमन का प्रमुख और महत्वपूर्ण उपादान है। जब अत्यधिक गर्मी पड़ती है और हवा रुक जाती है अथवा रुक-रुक कर थोड़ी-थोड़ी बहती है या वायु प्रतिपल दिशा परिवर्तन कर बहती है तो वर्षा का आगमन निश्चित होता है :

"वायु में जब वायु समाय
घाघ कहै जल कहाँ समाय"

× × ×

"पुरुवा में पछिवाँ बहै, हँसि के नार पुरुष से कहै
ऊ बरसै ई करै भतार, घाघ कहै यह सगुन विचार"

इसी प्रकार :

"खन पुरवैया, खन पछियांव
खन-२ बहै बबूरा बाव"
जो बादर में बादर जाय
घाघ कह जल कहाँ समाय"

जब ज्येष्ठ मास में वायु अपना पछवाँ रुख छोड़कर उत्तर-पूर्व की ओर से बहने लगती है, तब भी वर्षा के आगमन की संभावना हो जाती है :

"बयार चले इसाना, ऊँची खेती करो किसाना।"

× × ×

पहला पवन पुरब से आवे
बरसे मेघ अन्न भरि लावे।"

बादल :

यूं तो बादलों का वर्गीकरण अनेक प्रकार से किया गया है, लेकिन वर्षा के लिए कौन से बादल उपयुक्त होते हैं तथा उनका रुख क्या होता है, इस पर विचार करने का भी काफी व्यापक क्षेत्र है। सामान्य कृषक जब मोर या तीतर के पंखों के सदृश बादल देखता है, तो अत्यधिक प्रसन्न होता है और हो भी क्यों नहीं :

"तीतर बरनीं बादरी, रहै गगन पर छाय
कहै भड्डु सुन भड्डुरी बिनु बरसे नहीं जाय"

× × ×

"मोर पंख बादर उठै, राँड़ों काजर रेख
वह बरसे वह घर करै, यामें मीन न मेख"

× × ×

कारा बादल जी डरपावै
गोरा बादल पानी लावै"

केवल बादलों का वर्ण ही नहीं, वरन् उनके चलने की दिशा देखकर भी वर्षा के आगमन का अंदाज लगा लिया जाता है :

"पूरब के घन पच्छिम चलै
रांड बतकहीं हंसि हंसि करै"
ऊ बरसै ऊ करै भतार,
भंडुर के मन यही विचार"

इसी प्रकार :

"उलटा बादल जो चढै, विधवा खड़ी नहाय
घाघ कह सुन भंडुरी वह बरसे, वह जाय"

पशु-पक्षी :

वर्षा आगमन से पूर्व ही पशु-पक्षियों में अपार आनंद का आभास होने लगता है। साँप तथा कीड़े-मकोड़े तो गरमी के कारण अपने-अपने बिलों को त्याग कर बाहर आते ही हैं, भेड़ बकरियाँ भी उत्साह में उछलने लगती हैं और बिल्लियाँ आपस में लड़ने लगती हैं :

"नाग रूखड़ों ऊपर डोलै
प्यास्ते पपिहो आतुर बोलै।
चिरियों माथे धूल उछालै
किड़ी अंडा बाहर निकालै।
रेवड़ हौल मचावण लागै
फूटा करम किरस का जागै।
मांडे राड़ नार की मासी,
तो जाणो बरषा पल-आसी"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यही नहीं चील और गिरगिट जैसे जानवर भी ऐसे कार्य-कलाप करने लगते हैं कि किसान वर्षा के आगमन को भली प्रकार पहले से ही जान लेता है :

"उलटे गिरगिट ऊँचे चढै
बरखा होई भुई जल बूढ़ै"

× × ×

"ढेले ऊपर चील जो बोलै,
गली-गली में पानी डोलै"

अन्य :

उपर्युक्त उपादानों के अतिरिक्त कुछ ऐसे महत्वपूर्ण पदार्थ भी हैं, जिनके आधार पर वर्षा के आगमन की सूचना मिल जाती है, जैसे : नमक का गीला हो जाना, छाछ का खट्टा हो जाना, तेज गरमी का पड़ना तथा नए बादल का बनना और समाप्त हो जाना आदि। बादल जितना अधिक बनकर गल जाता है, वर्षा उतनी ही ज्यादा होती है। इसके अतिरिक्त जिस समय नीम पकने शुरू हो जाते हैं वट-वृक्ष अपनी जटाएँ छिटका देते मेंढक तेजी से बोलने लगता है, साँप सीटी देने लग है, कछुए की भी आवाज आने लगती है, तब भी व का योग माना जाता है। सिलबट्टे पर अपने आप सी आना और कांसे के बर्तनों का रंग कुछ-कुछ नीला जाना भी वर्षा (–आगमन) का सूचक माना जाता है

"ऊमस आँख झपावण लागै
बादल बण-बण खोवण लागै।
पवन थक्यो छाया में सोवै
सूरज-किरणों तीर पिरोवै।
बड़ को रुंख साकियों छोडै,
सिलबट्टा में कॉमण दौड़।
कांसै नीलो रंग प्रकासी,
घड़ी पलक में पाँणीं आसी।"

इस प्रकार यदि इन अनुभवों की गहराई जानकारी की जाय, तो काफी महत्वपूर्ण ज्ञान हमें प्रा हो सकता है।

तीन कोण

□ आनंद सागर मेहता

समय

आंख से निकला हुआ
अश्रु है,
जिसे डाला नहीं जा सकता
आंख में फिर से !

रिश्वत

रिश्वत की माया जटिल,
समझ न आये मीत !
'लेता है' तो गलत है,
'लेता हूँ' तो ठीक !

प्रतीक्षारत

अपने जीर्ण-शीर्ण
सामान का,
पांच हजार का
बीमा करा,
प्रतीक्षारत हैं श्री मुले,
कब चोरी हो,
और कब भाग्य खुलें !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय क्रांतिकारी आन्दोलन के अग्रदूत स्वामी दयानन्द सरस्वती

□ हुकमचन्द स्वर्णकार एम० ए० (उत्तरार्द्ध) इतिहास

महर्षि दयानन्द सरस्वती को कौन नहीं जानता ! उनका जन्म उस समय हुआ था जब भारतवर्ष विदेशियों के हाथों कुचला जा रहा था। भारतीय पश्चिमी सभ्यता में रंगे जा रहे थे। वे अँग्रेजी से प्रेम करने लगे थे। उनके द्वारा स्थापित आर्य–समाज द्वारा भारतवर्ष में राष्ट्रवाद को जन्म मिला। डी. ए. वी. जैसी संस्थायें खोली गयीं। क्रांतिकारी-आन्दोलन के सरदार भगतसिंह भी लाहौर डी. ए. वी. कॉलेज के ही छात्र थे। कुछ लोग स्वामीजी को केवल धर्म और समाज सुधारक मानते हैं। वस्तुतः वे धर्म और समाज सुधारक होने के साथ ही भारतीय क्रांतिकारी आन्दोलन के अग्रदूत भी थे।

श्री दयानन्द सरस्वती क्रांतिकारी आन्दोलन के अग्रदूत कैसे:—१८५७ की क्रांति को कुचलने के बाद अंग्रेज समझने लगे थे कि अब भारत में शायद आसानी से कोई आजादी का नाम नहीं ले सकेगा। कुछ सीमा तक यह बात सत्य भी थी क्योंकि अंग्रेजों ने अपने अत्याचारों में कोई कसर नहीं छोड़ी थी। अंग्रेजों ने खोज खोज कर उनको फांसी पर लटकवा दिया जिनमें स्वतंत्रता की कुछ भी तड़प शेष रह गयी थी। दिल्ली, ग्वालियर, कानपुर, झाँसी, इलाहाबद के निवासी तो आज भी उन दृश्यों की कल्पना करके कांप उठते हैं। क्रांति दब तो गयी, लेकिन अँग्रेज भयभीत जरूर थे। उन्होंने जबानों और कलम पर ताले लगा दिये, न कोई बोल सकता था, न लिख सकता था। ऐसे में फिर आजादी की आवाज उठाना मामूली बात न थी।

कुछ इतिहासकारों ने १८८५ तक के समय को भारतीय स्वराज्य आन्दोलन की दृष्टि से अंधकार का समय माना है। उनका कहना है कि इन २८ वर्षों में कोई भारतीय ऐसा नहीं हुआ जिसने अँग्रेजों के खिलाफ आज़ादी की आवाज उठायी हो। लेकिन कुछ इतिहासकारों का कहना है कि इस अंधकार के समय में भारतीय आकाश में स्वतंत्रता के दो प्रकाशमान नक्षत्र उभरकर सामने आये : पहले थे गुजरात में स्वामी दयानंद और दूसरे बंगाली बंकिमचन्द्र चटर्जी। स्वामीजी ने अपना कार्य–क्षेत्र पूरे भारतवर्ष को बनाया और राजस्थान, पंजाब, बंगाल, बिहार, उत्तर-प्रदेश एवं महाराष्ट्र आदि में भ्रमण किया।

स्वामीजी की प्रतिभा सर्वतोन्मुखी थी। उन्होंने हिन्दू–समाज में न जाने कब से चली आ रहीं बाल-विवाह, वृद्ध-विवाह, अस्पृश्यता और जाति-प्रथा आदि कुप्रथाओं के विरुद्ध एक अभियान शुरू कर दिया। स्वामीजी जानते थे कि विदेशियों के आगमन और उनकी सत्ता स्थापित होने में ये सामाजिक कुरीतियां ही सहायक रहीं हैं। इसी समय में स्वामीजी ने १८७५ में आर्य-समाज की स्थापना की। सर्वप्रथम उन्होंने क्रांति के मूल में जाकर उसकी असफलता के कारणों का पता लगाया। उनका विचार था कि यदि देशी रियासतों ने संग्राम में सहायता की होती तो भारत आज से ९० वर्ष पहले ही स्वतंत्र हो जाता। इसलिए उन्होंने सन् १८५७ के बाद अपने प्रचार कार्य के लिए देशी रियासतों और सैनिक छावनियों को ही चुना। जितनी भ आर्य-समाज की शाखायें खोलीं, वे भी प्रायः उन्हीं नगरों में जहां सैनिक छावनियां थीं। जैसे बम्बई, पूना, कलकत्ता, पेशावर, लाहौर, लखनऊ, कानपुर, रुड़की, देहरादून, मेरठ और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मऊ आदि। भ्रमण का कार्य भी इन्ही क्षेत्रों में रखा। उन दिनों आर्य-समाज के धार्मिक संत्सगों में सैनिक अधिकारी भी हर स्थान पर अच्छी संख्या में आने लगे थे। इससे हम समझ सकते हैं कि सैनिक छावनियों में धार्मिक उपदेश देने, वहाँ आर्य-समाज की संस्थायें खोलने का क्या उद्देश्य हो सकता है! निस्संदेह स्वामीजी का उद्देश्य धर्म की आड़ द्वारा सैनिकों में स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए क्रांति के बीज बोना था।

स्वामीजी द्वारा लिखित 'सत्यार्थ प्रकाश' में और वेदों की व्याख्या में भी स्थान-स्थान पर पराधीनता के जुए को उतार फेंकने की चर्चा मिलती है। जैसे "हे प्रभो! हमारे देश में कभी विदेशी राजा का राज न रहे।" उन दिनों सरकारी कार्यालयों में देशी जूते पहनकर जाने पर प्रतिबंध था। स्वामी जी को यह बात बहुत चुभी। अतः **'सत्यार्थ प्रकाश'** में एक स्थान पर उन्होंने लिखा है—"जब इन लोगों को हमारे देश के बने जूतों से इतनी घृणा है तब हमारे देश के मनुष्यों से पता नहीं कितनी घृणा होगी।" दोनों हाथों से अंग्रेजों द्वारा भारतीय सम्पदा की लूट का वर्णन करते हुये, स्वामीजी ने इसी ग्रन्थ में एक स्थान पर लिखा है—"हमने सुना है कि पारस पत्थर लोहे को सोना बना देता है। लेकिन यह पत्थर किसी के देखने में नहीं आया। हमारा तो अनुमान है कि यह भारत देश ही वह पारस पत्थर है जिसमें बाहर से जो भी विदेशी लोहा बनकर आये थे वे यहां से सोना बन कर गये।'

सिपाहियों ने गाय की चर्बी से बने कारतूसों को प्रयोग में लाने का विरोध किया था। स्वामीजी ने इसका समर्थन किया। स्वामीजी ने गाय की उपयोगिता पर 'गोकरुणानिधि' नामक ग्रंथ की रचना की। इसमें उन्होंने क्रांति को जन्म देने के लिए लिखा है 'जो गाय के रक्षक नहीं हैं वे भक्षक हैं। वे म्लेच्छ हैं। भारत की पुण्य-भूमि में म्लेच्छों को एक क्षण भी रहने का अधिकार नहीं है।' महारानी विक्टोरिया को भी गोवध बंद कराने के लिए एक स्मृति-पत्र उन्ही दिनों स्वामीजी ने भिजवाया था। पूरे देश में दो करोड़ आदमियों के हस्ताक्षर करने का अभियान चलाया। इस तरह स्वतंत्रता की तड़प पैदा करने में जो भी साधन सहायक बन सकते थे उन सब का स्वामीजी ने प्रयोग किया।

स्वामी जी हिन्दी को राष्ट्र भाषा बनाने पर जोर देते थे। उनका कहना था कि पूरे भारत-वर्ष की भाषा एक हो। एक समय केशवचन्द्र सेन ने कहा था—महाराज (स्वामी जी) आपने एक बहुत बड़ी भूल की, जो अंग्रेजी नहीं पढ़ी। यदि आप अंग्रेजी जानते तो वेदों का संदेश अमेरिका इंग्लैंड व जर्मनी में भी जाकर देते। इस पर स्वामी जी ने हँस कर कहा—केशव बाबू एक भूल आपसे भी हुई, जो आपने संस्कृत नहीं पढ़ी। यदि आप संस्कृत जानते तो 'एक और एक ग्यारह' पहले हम मिलकर अपने घर का सुधार करते, बाद में यदि समय मिलता तो बाहर चलते।'—स्वामी जी का अभिप्राय था-'पराधीन देश में' रहने वाले क्या संसार की आँखें खोलेंगे। उदयपुर के एक भाषण में स्वामीजी ने कहा था कि 'राष्ट्रीय-एकता के लिए पूरे देश में एक भाषा का होना बहुत आवश्यक है।

देशी-रियासतों में उन्होंने धीरे-धीरे अपना पूरा प्रभाव जमा लिया। अनेक राजा उनके प्रभाव में आ गये। राजस्थान में जोधपुर, उदयपुर और शाहपुरा आदि राजाओं का स्वामी जी अपने ढ़ंग का एक पृथक संगठन बनान चाहते थे। राजस्थान के प्रसिद्ध क्रांतिकारी श्री केसरसिंह जी बारह उन्हीं दिनों शाहपुरा-राज में राज-कवि थे। श्याम जी कृष्ण वर्मा को स्वामी जी ने ही फ्रांस भेजा। वहां रह कर उन्होंने स्वतंत्रता के लिए जो कार्य किया, वह तो आज इतिहास का रोचक विषय बन चुका है। स्वामी दयानंद व श्याम जी का पत्र व्यवहार अधिकतर अभी अप्रकाशित ही है।

अँग्रेजों के पास भी स्वामी जी की शिकायतें पहुंचने लगीं। उन्हें मालूम हुआ कि एक संन्यासी धर्म प्रचार की आड़ में फिर से देश को एक नयी क्रांति के लिए तैयार कर रहा है। उनकी असामयिक मृत्यु में भी अँग्रेजों का हाथ बताया जाता है। स्वामी जी भारतीय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्रांतिकारी आंदोलन के अग्रदूत माने जाते हैं। उन्होंने विदेशी-सत्ता का खुलकर विरोध नहीं किया लेकिन उन्होंने अपने विचारों और उपदेशों द्वारा सोते हुये भारत को जगाया और स्वतन्त्रता का पाठ पढ़ाया।

उनकी मृत्यु के पश्चात् आर्य-समाजी नेताओं ने अंग्रेजी सत्ता का खुलकर विरोध किया। उन दिनों गुरुकुलों से जो स्नातक निकलते थे, वे राष्ट्रीयता की भावना से ओतप्रोत होते थे कितने ही क्रांतिकारी भी अपने अज्ञातवास में गुरुकुलों में ही आकर शरण लेते रहे। परमानंद जी को फांसी देने की चर्चा पर आर्य-समाज की प्रतिक्रिया का उल्लेख करते हुए प्रसिद्ध क्रांतिकारी बिस्मिल ने अपनी आत्म-कथा में लिखा है "मैंने आर्य-समाज शाहजहांपुर के उत्सव में एक आर्य-संन्यासी के मुख से यह सुना कि भाई परमानंद को फांसी दी गई, तो-उसने उसी समय शपथ खाई-मैं उसके बदले में जब तक दस अंग्रेजों को मौत के घाट नहीं उतार दूंगा, चैन की नींद नहीं बैठूंगा।" बिस्मिल साहब ने लिखा है कि मेरा क्रांतिकारी-जीवन यहीं से शुरु होता है।

क्रांतिकारियों में प्रमुख भगतसिंह थे। जिन्होंने अपने जीवन में दयानंद स्वामी जी को ही प्रमुख श्रेय दिया है। अन्य नेताओं ने भी अपना प्रारंभ आर्य-समाज से ही किया। श्री गेंदालाल दीक्षित, रोशनलाल आदि क्रांतिकारियों के अज्ञातवास में भी आर्य-समाजी मंदिरों का अपना विशेष सहयोग रहा। कलकत्ता में कार्नवालिस स्ट्रीट के आर्य-समाज में सरदार भगतसिंह ने महीनों तक अज्ञातवास किया।

इस तरह ऋषि दयानंद और उनके द्वारा स्थापित आर्य-समाज ने देश के स्वतन्त्रता संग्राम में प्रारम्भ से ही अपनी क्रांतिकारी भूमिका निभाई। अंग्रेजों को भारत से निकालने में जिन आर्य-समाजियों ने क्रांतिकारियों के रूप में हथियार उठाये उनकी संख्या काफी थी। स्वतंत्रता के बाद एक प्रमुख आर्य-समाजी नेता से तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीजवाहरलाल नेहरू ने कहा- 'प्रायः सब ही ने अपने-अपने बलिदानों का कुछ न कुछ पुरस्कार ले लिया है। आर्य समाजी क्यों पीछे हटकर खड़े हो गये हैं! तो आर्य समाजी नेता ने हँस कर कहा—हमें तो उसी दिन अपने बलिदानों की कीमत मिल गयी, जिस दिन दिल्ली के लाल किले पर तिरंगा झण्डा लगा दिया गया, इससे बढ़कर और क्या पुरस्कार हो सकता है!

अतः स्वामी दयानंद के अपने निजी विचार ही क्रांतिकारी विचारधारा में परिवर्तित हो गये। हालाँकि उनका विचार क्रांतिकारी होना नहीं था बल्कि अपने भारत के स्वाभिमान को ऊंचा उठाना व उसके अतीत के गौरव की याद दिलाना एवं अंग्रेजों के अत्याचारों से पीड़ित जनता को उनसे मुक्त कराना था तथापि उनके ये ही उद्देश्य क्रांतिकारी विचार धारा के प्रवर्तक बन गये। भारतवर्ष में स्वामी दयानंद ही सबसे पहले व्यक्ति हुये जिन्होंने अपने दृढ़ विश्वास के साथ अंग्रेजों के विरुद्ध बीड़ा उठाया और उन्हें भारत से समूल नष्ट करने का नारा लगाया।

□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहानी

"नयी ज़िन्दगी"

□ बाल किशन वैष्णव, प्रथम वर्ष विज्ञान

गाड़ी अपनी चाल से चली जा रही थी। खटर····· ·····खटर शब्द सुनते-सुनते दिमाग भन्ना गया था। सांझ अब जा चुकी थी और रात की काली चादर सर्वत्र व्याप्त होती जा रही थी। सर्दी की रातें वैसे ही लम्बी होती हैं और फिर अंधेरा भी जल्दी ही हो जाता है। दुख के बादल मंडराते हैं तो घनघोर वर्षा भी करते हैं और उसके पानी में अच्छे-अच्छे इन्सान बह जाते हैं। उसने अपनी कलाई-घड़ी की ओर देखा, रेडियम डायल शाम के सात बजा रही थी। उसको गाड़ी में बैठे-बैठे दो घंटे हो गये थे, एक ही जगह, न कहीं उठना, न घूमना। शीला बेचारी नन्ही बच्ची सो गयी थी। वह थोड़ी देर बाद जग जाती और फिर सो जाती। वह क्या जाने, दुख क्या होता है? फिर भी इससे बचकर कोई नहीं रह सकता सबको इसकी चपेट में आना ही पड़ता है। "ममी·····जल्दी आओ मेरी आंखें खराब हैं" राजीव के लिखे ये शब्द कमला के दिमाग में सन्नाटा बनकर छा गये थे। राजीव की आंखें खराब कैसे हो सकती हैं? वह तो बिल्कुल भला चंगा था, अचानक ही उसे क्या हो गया? यह दुनियाँ है, इसमें सभी कुछ होना संभव है। भगवान इसका विशेष ध्यान रखता है कि कहीं मनुष्य खुशी से तो नहीं जी रहा है और जब उसे लगता है कि मनुष्य सुखी है तो वह अपनी ऐसी-ऐसी लीलाएँ रचता है कि बेसहारा इन्सान घुटनों के बल उसकी गोदी में पड़ जाता है। जब विपत्ति आती है तो आती ही चली जाती है। एक के बाद दूसरी विपदा आकर अति साहसी व्यक्ति को भी हिला देती है। व्यक्ति धीरज खो बैठता है। निराशा उसे झकझोरने लगती है और वह अबोध बालक सा निरुपाय हो जाता है। कमला को अचानक ही वह दिन याद आ गया जब विनोद एक छोटी किश्ती में समुद्र में गया था पर उसके बाद फिर कभी वापस न लौटा, केवल एक समाचार मिला कि किश्ती समुद्र के तूफान में वहीं उलट गयी। उसमें बैठे आदमियों की कई दिनों तक खोज की गयी पर किसी का पता न चला। सूचना क्या थी, एक जहर का घूंट था जो जबरदस्ती दिलाया गया हो। राजीव उस समय सोलह साल का था। आज उस बात को पूरा एक साल बीत चुका था, कैसे समुद्र में तूफान आया होगा, और कैसे वे विशाल समुद्र के गर्भ में समा गये होंगे, ये सभी बातें कमला की समझ से बाहर की थीं। किश्ती में बैठते समय विनोद ने कहा था:—"कमले! मैं शीघ्र ही वापस आऊंगा"।.... ·····राजीव तुम ममी का ध्यान रखना, और अपनी पढ़ाई में मन लगाना"। जिन्दगी में उन्हें जी भरकर देख लिया। उस बंदरगाह पर शायद वह आखिरी मुलाकात थी, इसके बाद तो किश्ती विशाल समुद्र पर बढ़ चली, शीला उस समय दो साल की थी, पापा·····पापा चिल्ला कर रह गयी। खतरों से खेलना ही तो जिन्दगी है। घर में बैठकर तो हर कोई जी ले, मनुष्य को दुखों का सामना करना चाहिये, सुख तो उसे आलसी और निकम्मा बना देता है। जिन्दगी तो एक टिमटिमाता दीपक है, जब तक उसमें तेल रहेगा, जलता रहेगा और तेल खत्म होते ही बुझ जायेगा, नहीं तो एक हवा के झोंके से तेल होते हुए भी बुझ जायेगा। कमला अपने अतीत में खो चली। विनोद एक अच्छा तैराक था, लम्बी-लम्बी झीलों को उसने तैर कर पार किया था तथा तैराकी में वह हमेशा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अव्वल आया करता था। जब वह कॉलेज में पढ़ता था तो वह भी कॉलेज में पढ़ती थी, बिल्कुल उसी के साथ, विनोद उसके बाद ऊँची पढ़ाई के लिए शहर चला गया और मैंने पढ़ाई छोड़ दी। कॉलेज जीवन में ही मैं विनोद को पूजती थी क्योंकि वह बहादुर और अच्छा नवयुवक था और हमेशा दूर की सोचा करता था। शादी के पहले भी हम कई दफा अक्सर ही मिल जाया करते थे। पहले वह मुझसे बात करने में शरमाता था, प्यार होते हुए भी शादी की बात कहने में हिचकिचाता था, पर आँखें एक दूसरे का दुख, तड़फन सभी कुछ अपने आप बता देती थीं। एक बार हम एक क्लब में बैठे ह्विस्की पी रहे थे, आर्किस्ट्रा अपने धुन में गुनगुना रहा था, विनोद उस दिन सुस्त और उदास कुछ खोया हुआ था, कई लोग आर्किस्ट्रा की धुन के साथ इंगलिश डांस कर रहे थे, मैं धीरे धीरे चुसकियाँ ले रही थी और कभी-कभी उसकी ओर चुपके से देख लेती थी, कितना सुदृढ़ शरीर, बहादुर और कितना प्यारा चेहरा, सभी मेरे दिल के अन्दर समा कर रह गये। वह भी कभी-कभी मेरी ओर देख लेता था, और आंखें मिलते ही झेंप जाता था। कॉलेज के कई लड़के लड़कियां आते और आर्किस्ट्रा की धुन में डान्स करके चले जाते पर उसने कभी मेरे साथ डान्स करने का साहस नहीं किया। जाते वक्त एक लम्बा लिफाफा निकाल कर मेरी ओर बढ़ा दिया, वह भी अत्यंत लजाते हुए, न जाने वह इतना साहस कैसे कर बैठा। लिफ़ाफे में वही लिखा था जो मैं चाहती थी, उसके मुंह से न सुन सकी पर उसके अक्षरों को पढ़कर खुशी में मग्न हो गयी।

"कमला! मैं बम्बई जा रहा हूँ। आगे की नेवी की पढ़ाई पूरी करके शीघ्र आऊंगा। यह मत भूलना मेरा शरीर वहां जा रहा है। दिल तो हमेशा अब यहीं तुम्हारे पास मंडराता रहेगा। शीघ्र ही दूल्हे के रूप में आऊंगा, मगर तुमने मुझे ठुकरा दिया तो मैं जिंदगी को व्यर्थ समझूंगा; भगवान ऐसा नहीं करेंगे, अच्छा एक दोस्त की तरफ से नमस्कार, विदा"। विनोद"

कुछ ही महीनों बाद वह कप्तान बन गया और मैं उसकी हो गयी। "खुशियां जब आती हैं तो एक साथ आतीं हैं। उन्हें संभालना भी मुश्किल हो जाता है।" काश! ये एक-एक करके आतीं। शादी के एक साल बाद राजीव इस दुनिया में आ गया। विनोद ने हमेशा बहादुरी के काम किये, सरकार उसका लोहा मानती थी। यकायक शीला जाग गयी। ममी! पानी, और मैंने सुराही में से एक गिलास पानी निकाल कर शीला को पिला दिया डिब्बे में सब लोग अपनी-अपनी बातों में मस्त थे। कोई कुछ कह रहा था तो कोई कुछ। एक साहब भी गुमसुम विचारों की तन्द्रा में बैठे हुए थे। उनका एक हाथ टूटा हुआ था, "आपके हाथ को क्या हुआ भाई साहब"? मैंने सहसा ही पूछ लिया। इतना पूछते ही उसकी आंखों में आंसुओं की बूंदें छलक आयीं, अपने दिल पर काबू पा कर उसने अपनी कहानी यों शुरु की "मां बाप बचपन में ही मर गये थे। मुझे और मेरी बहिन को मेरी नानी ने पाला। जब मैं कमाने योग्य हुआ तो नानी भी मुझ से बिदा लेकर चली गयी बड़े उत्साह से मैंने अपनी बहिन का विवाह किया, उसका कर्ज अभी तक पूरा नहीं कर पाया हूँ। वह काली थी, जीजाजी बड़े विद्वान थे, लन्दन से पढ़कर आये तो उसे ठुकरा दिया। मैंने उन्हें खूब समझाया पर वे नहीं माने। "एक काली और अनपढ़ भैंस के साथ में अपनी जिन्दगी कैसे गुजार दूं! यही कहा था जीजाजी ने। बहिन का दिल टूट चुका था और एक दिन वह यकायक घर से गायब हो गयी। मैंने उसे खूब ढूंढ़ा पर वह न मिली। एक दिन उसकी लाश एक तालाब में मिली, मैं खूब रोया, खूब रोया पर मर न सका न जाने क्यों! काश! मुझे उसी समय मौत आ जाती। इतना कहने के साथ ही वह फूट-फूट कर रो पड़ा। "जिसके लिए कर्ज लिया था वह कर्ज भी नहीं चुका पाया कि वह दुनिया से चली गयी," उसने रोते-रोते कहा। सारे मुसाफिर उसकी ओर देख रहे थे। सभी की आंखों से दया टपक रही थी। "बहन .....अब तो कर्ज चुकाने के.....लिए जिंदा हूँ, जब कर्ज चुक जायेगा, मुझे लगेगा कि मेरे सारे पाप धुल गये, फिर मैं खुशी से मर सकूंगा"।

"आप करते क्या हैं" एक अधेड़ आयु के व्यक्ति ने पूछा।

"मैं.....मैं.....मैं तांगा चलाता हूँ, मेरा घोड़ा और मैं दो ही मेरे परिवार के सदस्य हैं,। एक दिन यकायक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही एक टैक्सी वाले ने जाते हुए मेरे करीब से टैक्सी निकाली, जिससे उसका पीछे का भाग तांगे से टकरा गया और तांगे का एक पहिया टूट गया। मैं जमीन पर गिर पड़ा, घोड़ा भी जमीन पर गिर गया, दुर्घटना कुछ नहीं हुई केवल मेरे एक हाथ की हड्डी टूट गयी। भगवान ने अच्छा किया जो घोड़े को बचा लिया। तांगा मैंने फिर नया ले लिया और फिर धंधे में लग गया। गाड़ी एक स्टेशन पर रुकी और यात्री एक-एक करके उतर गये। तांगा चलाने वाला भी उतर गया। कम्पार्टमेन्ट खाली हो गया। यह एक बड़ा स्टेशन था। एक ठेले वाले से कमला ने शीला के लिए कुछ मिठाई खरीद ली। रेडियम डायल रात के आठ बजा रही थी। शीला मिठाई के लिए जिद करने लगी और थोड़ी ही देर बाद उसे आधी मिठाई दे दी। वह उसे खाने लगी। बच्चे, काश ! सभी बच्चे रहते, कोई बड़ा न होता, न आगे की फिकर है, न पीछे की।

"मनुष्य का स्वभाव है कि जब वह दूसरों को भी अपने समान दुखी देखता है तो धैर्य पाता है।" कमला ने तांगे वाले की कहानी सुनी तो वह कुछ आश्वस्त सी हुई। उसे लगा, जीवन की राह में एक वह ही दुखी नहीं है, और भी बहुत से हैं। काश ! दुःख भी आपस में बाँटने लायक कोई चीज होती तो सभी थोड़ा थोड़ा बाँट लेते जिससे किसी के ऊपर अधिक भार नहीं पड़ता। गाड़ी फिर चल दी और कमला विचारों में खो गयी। वह यह भूल गयी कि सारे कम्पार्ट मेन्ट में मैं अकेली बैठी हूँ। उसने बैग खोला, उसमें से विनोद का फोटो निकाल कर सामने रख लिया। इसी बीच दो व्यक्ति कम्पार्टमेन्ट में चढ़ आये और कमला के पास आकर बैठ गये। विनोद एक अजीब अंदाज में मुस्करा रहा था, ऐसा ही था उसका फोटो–भरे हुए गाल-सुदृढ़ मांस पेशियां, मुस्कराता हुआ चेहरा उसे देख कर कमला की आखें गीली हो आयीं। काश ! आज वह जिंदा होता, उसके पास होता, उसके सामने बैठा होता। शीला फिर सो गयी थी पर कमला की आंखों में नींद कहां, हां ! आंखे कुछ-कुछ बोझिल हो आयी थीं, बम्बई अभी काफी दूर थी। दोनों युवक एक अजीब अंदाज़ से कमला को घूर रहे थे। औरत का हृदय शंकालु होता है। वह खतरा शीघ्र भांप जाता है। कमला को लगा कि वह अकेली है बिल्कुल अकेली। सहसा उसके दिमाग में रात को गाड़ी में होने वाली हत्याओं, आदि का ध्यान आ गया, वह सिर से पैर तक कांप उठी। वह कुछ और संभल कर बैठ गयी वह। मन ही मन अपने आप को ही कोसने लगी। "मैंने दूसरा डिब्बा क्यों नहीं बदल लिया।" उसे अब सचमुच ही डर लग रहा था, फोटो को बैग में बंद कर, उसने शीला को जगा लिया। इसी बीच उनमें से एक युवक उठा और दूसरी तरफ चला गया दूसरा युवक वहीं बैठा रहा और फिर कम्पार्टमेन्ट में अन्धकार छा गया। कमला खतरा भांप गयी और अपनी जगह से बैग सहित शीला को लेकर शौचालय की ओर निकल गयी। वहो बैठा व्यक्ति उस पर झपटा पर, अंधेरे के कारण दीवारों से टकरा कर रह गया, फिर उसने उठकर पीछा करना चाहा, पर आने वाले दूसरे व्यक्ति से टकरा गया। इसी बीच कमला शौचालय का दरवाजा खोलकर उसमें घुस गयी। दोनों व्यक्ति शौचालय के पास आकर खड़े हो गये, उसे खटखटाया पर वह बन्द था।

"बाहर आ जाओ मैं तुम्हे सौ रुपये दूंगा।" एक व्यक्ति चिल्लाया। पर कमला कुछ न बोली, वह हांफ रही थी। क्या मनुष्य ऐसा होता है ! उसका दिल घृणा से जलने लगा। यकायक ही उसे कॉलेज के दिन याद आ गये, जब वह एक बार मंजु के घर की पार्टी में गई थी बाद में जब वह पार्टी से जाने लगी तो मंजु के भाई अरुण ने कहा, "जरा रुकिये, देखिये मैं आपको एक शानदार चीज दिखाता हूँ, आप उसे देखेंगी तो देखती ही रह जायेंगी।"मैंने कहा" क्या चीज ?"

"आइये मेरे साथ।" उसने कहा और मैं उसके पीछे पीछे चल दी। एक लम्बे दालान को पार करने के बाद वह मुझे बैठक में ले गया और मुझे अपनी बाहों में भर लिया, मैं थोड़ी देर के लिए कुछ न समझ सकी और फिर जल्दी से छुड़ाकर बाहर भाग आयी। इस जल्दी में मेरे सीने का सामने वाला स्कर्ट फट गया। तब में मंजु के कमरे से उसका स्कर्ट पहन कर घर आयी। उस दिन रात भर नींद न आयी और आज, आज भी वही स्थिति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। अन्तर केवल इतना है कि उस समय मैं कुमारी थी और अब विधवा। गाड़ी अपनी रफ्तार से चली जा रही थी। सहसा ही कमला का ध्यान जंजीर की ओर गया। उसने आव देखा न ताव, झट से जंजीर खींच ली। गाड़ी ने तीन बार सीटी दी और धीमी हो गयी। इसके बाद रेंगती हुई रुक गयी। पुलिस और गार्ड कमला वाले डिब्बे की ओर भागे आये। कमला भी बाहर निकल आयी। उसने सारा हाल बता दिया, पर उन युवकों का कहीं पता न था। कमला को गार्ड तथा अन्य मुसाफिरों ने ढाढ़स दिया और उसे डिब्बे में बैठा दिया। बेसहारे का एक भगवान सहारा होता है। मुसीबत में उन हर कोई याद करता है। कमला भी भगवान को याद करने लगी। शीला अब सोना नहीं चाहती थी, वह अपनी बड़ी-बड़ी आँखों से डिब्बे की दीवारों को घूर रही थी। गाड़ी लम्बे-लम्बे पेड़ों को पीछे छोड़ती हुई आगे चली जा रही थी। कमला पुनः अपने विचारों में लीन हो गई। विनोद और उससे सम्बन्धित घटनाएँ रह-रह कर उसके सामने साकार होने लगीं।

"ए ! इस नन्ही मुन्नी गुड़िया का क्या नाम रखोगी"? विनोद ने गुड़िया को हाथों के ऊपर उछालते हुए पूछा।

"मैं बताऊँ" ? राजीव ने सहसा ही कहा।

"हूँ-हूँ बता तो" ? मैंने पूछा।

"इसका नाम शीला रखेंगे"।

"अच्छा शीला बड़ा प्यारा नाम है"। मैंने उत्तर में कहा था।

× × ×

"पापा, राजीव भैया कहते हैं ' तेली छादी नहीं करेंगे"।

"नहीं, कैसे नहीं करेंगे, जरूर करेंगे और बड़ी धूम-धाम से करेंगे"।

"कब करेंगे पापा"?

"जल्दी ही करेंगे, बहुत जल्दी"।

"मगल पापा, ममी तो कहती है पहले राजीव भैया की छादी करेंगे, फिल तेली"।

"अरे वाह ! ऐसा कैसा हो सकता है ? सबसे पहले तेरी फिर बाद में सभी की"।

"हां-पापा-अब ममी की नहीं चलेगी, मैं उछछे छाफ छाफ कह दूंगी पहले छादी मेली होगी"।

× × ×

गाड़ी बम्बई के विशाल प्लेटफार्म पर आकर रुक गयी और कमला की विचार तन्द्रा सहसा भंग हो गई। वह जल्दी से अटेची लेकर शीला के साथ नीचे उतर आयी। रिक्शे में बैठकर वह अपनी मंजिल की ओर चल दी। उसे बार-बार राजीव याद आ रहा था, कहीं वह अंधा न हो जाये। नहीं·····नहीं ऐसा नहीं होगा। रेडियम डायल रात के दस बजा रही थी। ठण्ड बहुत ज्यादा थी। वह जल्दी से राजीव के फ्लेट में पहुँची। कमरे में झांक कर देखा तो वह चौंक गयी। वह कौन है ?·····वह तो विनोद है जो कुर्सी पर बैठा है। बगल में राजीव भी बैठा है। कमला ने सोचा शायद यह उसका भ्रम हो और फिर देखा। वह सचमुच विनोद ही था। उसका प्रियतम, उसका चित चोर, उसका सुहाग। और उसका सिर चकरा गया, वह धड़ाम से दरवाजे के पास जा गिरी बेचारी शीला जो नींद में थी, सिसक-सिसक कर रो पड़ी।

डाक्टर के प्रयास से कमला कुछ ही देर में होश में आ गई। विनोद ने उसे हृदय से लगा लिया और वह किस प्रकार बचा और क्यों राजीव की आँखें खराब होने के बहाने उसे यहाँ बुलाया, सब कुछ एक ही सांस में कह लिया। शीला यह सब आँखें फाड़-फाड़ कर देख रही थी।

कमला·····बेचारी कमला अतीत से वर्तमान में आ गयी। भगवान जब सुख देता है, तो एक साथ दे देता है, जिससे उन्हें संभालना कठिन हो जाता है। काश ! ये सभी सुख एक-एक करके आते। उसके लिए यह नई जिन्दगी थी।

□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपन्यास का एक अंश

चलती तस्वीरों की बनती तकदीर

□ विज्ञान प्रकाश यादव, प्रथम वर्ष (कला)

·····आज रेखा फिर मुझसे मिली·····! पास ही: के सार्वजनिक पार्क के प्रांगण में रेखा और मैं बैठे हुये थे·····उसकी चंचल जिह्वा आज बन्द थी·····।

उसमें·····बीते हुये दिनों से मैं कुछ परिवर्तन देख रहा था ! वह मुझसे कुछ खफा·····खफा सी रहने लगी !·····पता नहीं क्यों ?

·····अचानक रेखा की आवाज ने विचारों के तारों को जोड़ते हुए, मेरे विचारों के क्रम को तोड़ दिया !

उसकी जबान मुझ से कह रही थी :

'मनोज ! तुम आज से मेरे मिलने की आशा मत रखना' !

और·····कुंएँ में टूटती हुई रस्सी के समान मेरा 'मानव' टूट गया !·····भावावेश में आकर मेरा खून बोल उठा । उमड़ती हुई गहराइयों में मेरा मनुष्यत्व बोलने लगा·····प्रश्नों के प्रश्न लेकर !

'क्यों ?·····रेखा क्यों·····?·····क्या मेरा आचरण तुम्हें अच्छा नहीं लगता ?

'नहीं मनोज·····नहीं·····। बात यह नहीं है···। ·····तुम समझते क्यों नहीं····· समाज की जकड़ी हुई जँजीरों को·····हम नहीं तोड़ सकते !

·····मैं तुम्हारे साथ ऐसा नहीं होने देना चाहती·····कि तुम मुझे ही अपने जीवन की राह मान कर·····अपने सम्पूर्ण मानव को अर्पण कर दो····· मेरे प्यार के बदनाम उस रिश्ते को लेकर·····जो कि हमारे बीच कुछ क्षण पहले था !·····बस रेखा····· चुप रहो·····।'

·····यह तुम्हारे भाव·····पूर्ण शब्द आज से नहीं ·····मैं·····प्यार की अन्तिम मञ्जिल पर पहुँचने वाले जवानों की·····दायित्वपूर्ण कहानी यों सुन चुका हूँ···· ··जिन्हें कि तुम···· ···मुझे उन्हीं राहगीरों की राहें, दिखा रही हो·····। बस··· · रेखा ·····!

इस··· ····समाज के दायित्वपूर्ण आवाजों से डर गयी·····। मैं तुमसे पूछता हूँ·····इस समाज का निर्माण किसने किया·····हम ने ही तो इसे बनाया है·····!

'क्या हम इसके नियमों को बना सकते हैं·····तो उन्हें क्या तोड़ नहीं सकते·····!···· ··और फिर ऐसा त्रुटिपूर्ण कार्य हमने कौनसा किया है·····!

·····आने वाली जिन्दगी के पल तुम्हें इस समाज के साथ नहीं·····मेरे साथ बिताने पड़ेंगे··· ··। समाज तुम्हारा साथ नहीं·····मैं दूँगा ·····! फिर इस समाज से इतना डर क्यों·····?

'बताओ रेखा ?'

·····तुम समझती हो रेखा·····कि एक क्षण रेखा बनाने से उसका कोई सार नहीं निकलता·····। नहीं रेखा·····एक छोटी-सी रेखा की भी हम सम्पूर्ण जिन्दगी से तुलना कर सकते हैं·····जिसे कि मिटाना इतना सरल कार्य नहीं है ।

·····और मेरी ध्वनि के कुछ धीमी पड़ते ही····· फिर रेखा कहने लगी·····। मनोज·····कहना सरल है, करना कठिन·····! क्या तुम सोचते हो·····जीवन की नैया को हम और तुम ही पार लगा सकते हैं·····?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'नहीं मनोज।'.....जीवन के अनेक कार्य इसी समाज में सम्भव हैं.....जीवन की अन्तिम राह पर तुम ही नहीं.....यही समाज ले जाएगा.....। समाज की गंठीली मजबूत कड़ियों को तोड़ना इतना आसान नहीं.....जैसा तुम और हम सोचते हैं।

.....और यह सुनते .....सुनते मैंने अपनी पुस्तकें उठालीं.....घृणित वातावरण की कड़ियों के साथ मैंने उससे.....अलविदा ली.....।

.....यही कहते हुये.....।

.....अच्छा रेखा.....तुम नहीं चाहती हो तो..... ठीक है।.....मैं कोशिश करूंगा कि यह नामुराद शरीर.....तुम्हें कभी दिखायी न दे.....!

.....और अब मैं अपने घर की तरफ अपने कदम बढ़ा रहा था।.....अपने को कोसते हुये.....।

.....पता नहीं.....आज का दिन कैसा था..... जिसके उठते विचारों ने मेरे मष्तिष्कयुक्त शरीर की रचना इस प्रकार कर दी थी.....जिस प्रकार मकड़ी के बने जाल में.....एक मक्खी फँस जाती है।

.....और मेरे घर पहुँचते ही.....मैंने हाथों में लगी पुस्तक को टेबुल पर फेंक दिया.....।

.....फेंकने के साथ ही पुस्तक के अन्दर से एक सफेद रंग का लिफाफा नीचे गिर गया.....। उसे जानने के लिये मेरे हाथों की.....अँगुलियों ने उसे उठाया...।

.....मैंने देखा : उसके अन्दर कुछ रखा हुआ था।

.....कौतूहल-दृष्टि से मैंने लिफाफे को उत्सुकता पूर्वक खोला.....।

.....जिसके अन्दर एक सुन्दर छपा हुआ कार्ड था.....जिसको अब मेरी निगाहें पढ़ रही थीं.....।

.....और पढ़ते-पढ़ते कार्ड के छपे शब्दों ने..... मेरे टूटते धीरज को और भी तोड़ दिया.....।

.....यह था रेखा की.....शादी का 'निमन्त्रण पत्र'.....जिसने मुझे अपनी शुभविवाह की घड़ियों में.....मेरे कदमों को निमन्त्रण दिया था.....जीवन के उस सत्य को देखने के लिये.....जिसे इस समाज ने अपने में ही निहित कर रखा था!

अनेक विशेषणों से युक्त 'प्यार' शब्द आज फिर मेरे सामने आ खड़ा.....जिसको सोचने के लिये मुझे विवश होना पड़ा.....और फिर बुद्धि प्रधान संयत ज्ञान की मशीन ने कार्य करना शुरु कर दिया।

.....प्रश्नों के उठने के साथ ही उनका जबाव मुझे मिलता गया..... ..मानव स्वभाव .....प्यार और हम.....हम और हमारा प्यार.....हम और हमारा समाज.....प्यार और समाज में गुँथा हुआ हमारा राष्ट्र.....राही जीवन की एक 'ज्योति' प्यार.....संकल्पों के बनते आदर्श..... चलचित्रों की छाया की एक तस्वीर,.....और ऐसे अनेक भावुकतापूर्ण शब्दों की रूपरेखाओं को साथ लेते हुये..... प्रश्नों के प्रश्न.....वही प्रश्न 'प्यार' को लेकर मेरे सामने आ खड़े हुये!

.....दर्पण रूपी जीवन में.....मूर्ति रूप 'प्यार' ऐसा दिखायी देने लगा, जैसे.....वास्तविक सत्य यही हो!

.....जिस सत्य की खोज के पीछे.....आज तक मैं भागता रहा.....वही सत्य आज मेरे सामने था..... सत्य.....जो कि सत्य था.....

.....मगर सत्य का भी क्या कहना.....सत्य के दिखायी देते हुये भी.....मैं उस सत्य को.....सत्य..... मानने के लिये मजबूर-था,.....बार-बार रक्त की धाराओं की ध्वनि यही संकेत दे रही थी.....'यह झूठ है.....यह झूठ है.....झूठ है.....!'

लेकिन मैं इसे कैसे मान लूँ.....। प्रत्यक्ष कविता .....कविता ही रहेगी.....उसे कहानी.....मैं कैसे बना सकता हूँ!.....तभी आत्मा की विभोर..... झनकारें उभर पड़ीं.....जो मेरे जलते दीपक-दिल की..... उफ़नती.....लहराती.....टकराती..... मायूस दिल की अग्नि से बनती चिताओं को शान्त करने लगीं.....यही कहकर.....तुम राही हो, वह राह है, उसकी करुणा.....तुम्हारी आह हैं.....जीवन की रक्तिम लालिमा.....तुम्हारी शान्ति है..... तुम्हारा कर्त्तव्य है.....उसका सुख.....उसका सुख ही..... तुम्हारा सुख है!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

.....और चन्द क्षण में.....प्यार का यह विकर्षण मेरे जीवन का आकर्षण बन गया.....घृणित वातावरण की कृति.....अब मनुष्यत्व आसुरी लक्षणों का मूर्त रूप बन गया.....जो मेरे कदमों को..... साजों की ताल का साथ देने के लिये.....निमन्त्रण दे रही थी..... ।

अचानक बन्द आँखों की पलकों में प्रकाश की ज्योति छा गयी.....जो दीवार पर टंगी घड़ी पर.....समय के कांटों को निहारने लगी.....एक आशातीत किरण के साथ.....अपनी राह ढूंढ़ने के लिये ।

.....शाम के सात बज रहे थे.....रात्रि की कालिख.....कालिमा.....धीरे-धीरे अपने आने की सूचना दे रही थी.....आकाश के उन सितारों के साथ जो गगन में.....दो.....चार.....दस.....पचास... सैकड़ों और असंख्य.....होते जा रहे थे.....यही याद दिलाने के लिये.....जो मुझे उन प्रश्नों में उलझने नहीं देना चाहते थे.....कि वह इन तारों के समान एक.....अतीत का जाल बन जाए ।

.....और इत्तफ़ाक से मेरा हाथ खूँटी पर टँगी पेंट पर चला गया.....जिसको उतारकर मैं पहनने लगा ।.....कमीज की सिलवटों को निकालने का कार्य मेरे दोनों हाथ करने लगे.....जिसको कि मैंने जल्दी ही ठीक कर अपनी पेन्ट को ऊपर के कमरबन्द से कस लिया... और अब कुछ क्षण बाद ही मेरे पैरों ने जूते पहनकर 'अपने कदम दरवाजे के बाहर निकाल दिये..... ।'

.....कुंडी को खिसका कर मैंने.....दरवाजे में ताला लगा दिया । चाबी को जेब में डालकर मैं अपनी राह पर आ गया । अब मेरे कदम.....उसी सत्य को देखने के लिये यथाशीघ्र बढ़ने लगे ।

.....धरती अब घूम रही थी । अपने समय के कांटों को साथ लेते हुये.....उसने अपने कुछ ही क्षण व्यतीत किये थे कि पृथ्वी में भूचाल आ गया, जिसने मनोज की चालों में भी कँपकंपाहट पैदा कर दी..... और वह अपने कदमों को संभाल नहीं पाया !

.....उसके मन के उफनते ज्वार ने, उसके कदमों की आहट को तोड़ दिया, जो उसके पर्दे—रूपी मन पर, यादगारों के उन चित्रों को अंकित करते जा रहे थे !

.....कि वह अपना कर्तव्य करने से पहले..... अपने अधिकारों को मांगे ....।

.....और भरे शादी के मण्डप में जाकर जोर-जोर से यही कहे ! क्या यही तुम्हारे प्यार की राह है.....कि एक राही को अन्ध-राह में भटकाकर.....स्वयं चैन की साँस लो !

'अपने अधिकारों को देने से पहले मुझे मेरे कर्तव्य की याद दिला दो ।'

.....नहीं.....नहीं.....नहीं.....रेखा ऐसा नहीं हो सकता !

.....जो साँसें उसको कुछ समय पहले गति दे रही थीं, अब वही हिलती तस्वीरें, उसकी राह विचलित करने लगीं !

.....टूटते हुये कदमों ने अपनी दिशा बदलने की कोशिश की.....जिससे कि उसके शरीर को सड़क की दाहिनी तरफ मोड़ दिया !

और एक झटके के साथ.....वह धड़ाम से दूर जा गिरा !

उसके सिर से अब भी खून बह रहा था.....और लोग उसे उठाकर कार की पिछली सीट पर लिटाने लगे । कार के दरवाजे को.....सोफिया ने अपने झूमते हाथों से बन्द किया.....और वह अब अपने हाथों से पकड़े हैन्डिल को हिलाहिलाकर.....गाड़ी को अस्पताल की तरफ बढ़ा रहीं थी । गाड़ी की मधुर आवाज अब उसे भद्दी लग रहीं थी.....बस.....अब उसे यही इन्तजार था.....कि कब अस्पताल आये.....और इस गाड़ी की कठोर होती हुई आवाज को वह तोड़ दे !

× × ×

.....गाड़ी तीव्र गति से सड़क पर दौड़ी जा रही थी ।

जीवन की अनोखी.....विडम्बना, आज सोफिया के सामने खड़ी हो गयी ! उसका मष्तिष्क भी गाड़ी की गति से घूमते हुये पहियों के समान भँवर-जाल बन रहा था !

.....उसका हाथ गाड़ी के स्टेयरिंग पर कार्य करने में व्यस्त था । इसी इन्तजार में कि कब अस्पताल आये । और वह अपनी टूटती साँसों को जोड़ सके.....।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

.....सोफिया ने अपने कानों के परदे अज्ञात ध्वनि से लगा रखे थे।.....पीछे के वातावरण से उसे जोर-जोर से साँस लेने की आवाजें, अब भी आ रही थीं।

.....उसकी आवाजें काफी तेज थीं, बेजान संगीत की तरह, जो कभी भी टूट सकती थीं। गाड़ी के शोर ने कुछ समय तक उसके तारों का सम्बन्ध ढीला छोड़ दिया.....और एकाएक उसे ऐसा लगा.....जैसे चलती तस्वीरों की तकदीर बन रही हो!

.....हिलोरें खाती हुई समुद्र की लहरें, उसे अपने में ही मिला लेना चाहती हों, जिसे कि निष्काम आराधना अपनी अजस्र शक्ति से रोके हुई थी....।

घुटते हुये नगर की सीमाओं से लगे हुये अस्पताल जिन्होंने उसके निराश जीवन में साहस भर दिया!

.....और सोफिया ने गाड़ी की गति धीमी कर दी..... !

प्रवेश-द्वार के आने के साथ ही उसने शान्त चार दीवारी में अपनी गाड़ी को प्रविष्ट कर.....मुख्य दरवाजे के सामने लगादी।

.....गाड़ी में से उतरकर सोफिया ने अपने कदम 'कैजुल्टी रूम' के बरामदे में दाखिल कर दिये!

.....और जब वह वापस लौट रही थी.....तब उसके साथ दो आदमी श्वेत वस्त्र पहने, उसके साथ-साथ चल रहे थे, जिनके हाथों में स्ट्रेचर लगा हुआ था, जिसको कि उठाये हुये वे बड़ी फुर्ती से गाड़ी के पास आये!

.....और अब वह कुछ ही घड़ी बाद, रोगी को स्ट्रेचर पर लिटाकर मुख्य वार्ड की तरफ बढ़ रहे थे।

× × ×

.....अस्पताल में सन्नाटा छाया हुआ था..... शान्त वातावरण के साथ..... !

मेरी निगाहें लगे आस पास के रोगियों को निहार रही थीं.....पछतावे की.....एक सच्ची कहानी के साथ, जो मेरी कहानियों से बिल्कुल भिन्न थी..... !

सोफिया की प्रार्थनाओं ने....मेरे जीवन के नये अध्याय की सिफारिशें, अपने क्राइस्ट के पास पहुँचा दी थीं, जिसकी वजह से आज मै अपने को देख पा रहा था..... !

शरीर में कमजोरी आ जाने के कारण मुझे कुछ परेशानी महसूस होने लगी। पीड़ा के कुछ क्षण आराम देने के लिये, मैंने अपनी आंखों में नींद लाने की कोशिश की!

.....और तभी-मुझे अपनी बन्द आँखों में..... इर्द-गिर्द.....सितारों की चमक दिखायी दी..... जिसकी रोशनी में.....मैं, फ़िर उसी कल्पना में पहुँच गया, जहाँ मेरी आत्मा में बैठा हुआ परमात्मा मुझे धीरज दे रहा था..... !

अपने अधिकारों के जिस सत्य की खोज के पीछे, मैं अपने कर्तव्य की सत्यता को भूल चुका था, वही मुझे अपना रूप दिखा रहा था, जिसे मैं समझ चुका था.... !

उसके बाद कुछ खामोशी छा गयी, जिसे कि अचानक सोफिया की आवाज ने तोड़ दिया..... !

.....आँखों के खुलते ही.....मेरी निगाहें उसकी आँखों से टपकते हुये आँसुओं से जा टकराईं!

.....उन आँसुओं से.....जिनमें आराधना का एक मुक्त प्रणय-गीत था.....!

.....वह अब भी हाथ जोड़े, मुझसे क्षमायाचना कर रही थी!

.....उसके माथे पर बनते, रेखाओं के चित्र मुझे दिख रहे थे,.....जिनकी गहराइयों में, मैं डूबता ही गया, फिर वही सुबह होगी' इन्तजार में!

.....साँझ की बढ़ती हुई बेलाओं ने अपना असर और भी बढ़ा दिया।

रात्रि के बढ़ते हुये चरणों को देखकर सोफिया ने मुझसे विदा ली, कल फिर मिलने की प्रतिज्ञा लेते हुये!

.....और अब वह दरवाजे से बाहर निकलकर अपने घर को जा रही थी, जिसको कि मैं, अपने निकट की खिड़की से, देखता रहा।.....जब तक कि वह मेरी आँखों में समाती रही।

.....इसके बाद क्या हुआ मुझे मालूम नहीं।

.....रात्रि के घोर सन्नाटे में, मैं तो क्या..... सारा जगत शान्ति में सो चुका था!

.....अपनी चलती तस्वीरों की तकदीर बनाने के लिये.....'शायद' जो कभी पूरी हो सके.....! □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दो कविताएँ

नरेन्द्र प्रेमी 'राजन'

आंगन के पार

छलक गयी नजर मेरी,
रखते ही कदम
यौवन की दहलीज पर।
क्योंकि·····

सरक आई उम्र की परछाईं
साथ मेरे, सिर्फ
करके पार सोलह कदमों में,
बचपन का आँगन !

आगे इस आँगन के,
ढलती उम्र पर, चढ़ती जवानी की धूप में
देख रही, महकता मधुवन यौवन का।
जिसमें—

काँपते हाथों से माली,
सौंप रहा उस अजनवी को,
लपेट कर उन सोलह पत्तों में
अपने चमन से तोड़, एक कली को।

सोच रही मैं—

इस दहलीज पर आकर आज,
छलक गयी क्यों नजर मेरी,
हसँ कर सोलह सावन !
□

जीवन–सरयू

समय की घाटियों को पार कर
बह रही है, सरिता जीवन की
आज वहाँ से—
जहाँ आकर,

चली जाती है, दूर वे, घाटियाँ
जिनको ओट में छिपी धुँधली यादें,
बना देती हैं सिमट कर
एक धुँधली तस्वीर मेरे बचपन को।
और·····

जीवन—सरयू, सूख रहीं, आकर आज
इस यौवन के मरु में,
जहाँ पर·····

वासना मयो पवन, उड़ा रही तृष्णा की धूल
जा रहा है ढकता, इस जीवन का कूल
सूख जाएगा जल फिर मेरी साँसों का
और

जाएगा एक, प्रवाह, इच्छाओं का मेरो
और फिर, सिर्फ
सूखी झुर्रियों की पत्तों का दामन ओढ़
जीवन-सरयू, जलेगी
अंगारों पर !
□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहानी

वे दोनों

दौलत मधुकर एम. ए. (पूर्वार्द्ध) हिन्दी

मुक्ता ने अंगीठी के पास बैठे कवीश्वर के सामने थाली परोसी और कटोरी में सब्जी डालने लगी—

'क्या बनाया है ?" कवीश्वर ने रूखाई से पूछा।

"जो तुम्हें पसन्द नहीं" मुक्ता का जवाब था—

कवीश्वर ने थाली अपने समीप खींची किन्तु जैसे ही उसकी नजर कटोरी में पड़ी–वह खीज उठा–"तो आज फिर बेसन बनाया है "—

"जी हां·····।"मुक्ता ने इठलाते हुए कहा।

"जब तुम्हें बेसन बनाना आता ही नहीं तो क्यों बनाती हो, कहते हुए उसने बेमन से कौर अपने मुंह में रखा ही था कि उसकी आँखों से चिङ्गारियाँ छूटने लगीं—

मुक्ता खिल-खिला कर हंस पड़ी। उसने मुक्ता पर एक क्रोध भरी दृष्टि डाली और किसी तरह से, मुंह में रखे कौर को निगल कर गिलास की ओर हाथ बढ़ाया।

मुक्ता के होठों पर शरारत भरी परिहास की रेखा उभर आई–उसने कवीश्वर के खीज से भरे चेहरे की ओर देखा और फिर गर्दन झुका कर रोटी बेलने लगी।

"तुमने तो मेरा जीना हराम कर दिया है किन्तु याद रखो मुक्ता, मैं तुम्हारे जीवन का नासूर बन जाऊँगा–तुम अपने आपको सामान्य बनाने का लाख प्रयत्न करो, मैं तुम्हें कभी सफ़ल न होने दूंगा—उसने सामने रखी थाली की ओर देखा, फिर जैसे ही उसकी नजरें मुक्ता पर पड़ीं–उसे लगा जैसे उसके मुंह की जलन बढ़ गई है—और वह थाली को एक ओर हटाते हुए उठ खड़ा हुआ।

'तुम कभी मेरी पत्नी नहीं बन सकतीं—मैं तुम्हें मात्र एक रिक्तता की पूर्ति के और कुछ नहीं समझता—हाथ में गिलास उठाये कवीश्वर ने मुक्ता से कहा।

"तो क्या वीना को मानते हो ?"

कवीश्वर ने क्रोध से मुक्ता की ओर देखा और फिर वह नाली की ओर बढ़ गया।

'वीना !" मुक्ता फुसफुसाई और अंगीठी पर रखे तवे को उतार कर नीचे रख दिया—दहकते अंगारों की रोशनी से उसका सम्पूर्ण चेहरा रक्तिम हो उठा—उसकी बड़ी-बड़ी आँखें अगारों सी नजर आने लगीं—उसने गर्दन घुमाकर कवीश्वर की ओर देखा और परात में से आटा तोड़ कर लोई बनाने लगी।

कवीश्वर की बड़बडाहट धीरे-धीरे सारे वातावरण पर छाती गई—मुक्ता ने लोई को आटे में लपेटा–एक हलकी सी स्मित रेखा उसके होठों पर थिरक उठी—उसने तवे को उठाकर अंगीठी पर रखा और रोटी बेलने लगी–उसके हाथों में एक थिरकन हुई और गर्म होते तवे पर रोटी डाल कर मुक्ता ने एक ठंडी सांस ली। एक बार तो उसे लगा कि अब सब कुछ सामान्य हो चला है– किन्तु तवे पर पड़ी रोटी को जैसे ही उसने पलटा उसकी नजरें अपने पति पर पड़ीं–उसने आटे में अपनी उँगलियाँ डाल दीं—उसे कुछ राहत मिली–उसके चेहरे पर अनायास ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घिरती वेदना की रेखाएँ धीरे धीरे हलकी–हलकी मुस्कराहट में बदल गईं ।

"क्यों जी····· !" जूते के फीते बाँधते हुए कवीश्वर को देख उसने कहा—

क्या है····· ! उससे पहले ही कवीश्वर ने कहा । "ये····तुम नासूर बन गये हो या मैं ?" तवे पर पड़ी रोटी पर रोटी डालते हुए मुक्ता ने प्रश्न किया ।

कवीश्वर ने क्रोध से मुक्ता की ओर देखा—तब तक मुक्ता ने लगभग सिक चुकी रोटी पर अपनी उंगलियों के दबाव से जोर डाल कर भाप निकाली और उसे चकले पर डाल कर घी लगाया और फिर "वो वीना·····" किन्तु जैसे ही उसकी नजरें कवीश्वर की घृणा से भरी नज़रों से मिलीं, वह चुप हो गई ।

कवीश्वर ने एक लम्बी साँस लेते हुए घड़ी पर एक नजर डाली और फिर बरामदे में खड़ी साइकिल की ओर बढ़ गया ।

"सुनिये·····शाम को कब तक लौटेंगे" मुक्ता ने टोका····· "मुझे नहीं मालूम ।"

"तो क्या शाम की लौटने की इच्छा नहीं····· वीना के यहाँ जाने का विचार है क्या ?" सर से खिसक आये अपने आंचल को ठीक करते हुए मुक्ता ने पूछा ।

"तुम्हें इससे क्या ! मैं कहीं भी जाऊँ ।"

"फिर भी मालूम तो पड़े !"

"जहन्नुम में जाऊँगा"—उसने खीजते हुए कहा—"हमें भी ले चलो न—शादी वाली साड़ी पहन कर चलूंगी, वही जो तुमने अपनी वीना के लिये चुनी थी—" अपने शब्द पर जोर देते हुए—लगभग मुस्कराती मुक्ता ने कहा ।

"तुम्हारा यह घर ही क्या कम है, जहन्नुम से" वह झुंझला उठा ।

"तो फिर बाहर जाने की क्या जरूरत है जी—"

"क्या मुसीबत है !"

"मुसीबत नहीं–नासूर कहो नासूर ।"

'क्यों !' अनायस ही कवीश्वर के मुंह से निकला ।

"जब हमारा घर ही जहन्नुम है तो फिर बाहर भटकने की क्या जरूरत !" मुक्ता ने टुकड़ा लगाया ।

"क्यों कि वहाँ यहाँ, से कुछ राहत तो मिलेगी" ।

"तो वहाँ क्या वीना है ! —उसके रहने से तुम्हें सुकून मिलता है न—"कहते हुए मुक्ता ने तवे को उठा कर अंगीठी पर रख दिया ।

कवीश्वर की मुट्ठियाँ कस गईं–उसने बड़ी कठिनाई से अपने आप पर काबू पाया ।

"मुक्ता भगवान के लिये मुझ पर रहम करो"–कवीश्वर ने जेब से सिगरेट निकालते हुए भीगे स्वर में कहा । उसने सिगरेट होंठों के बीच दबाकर सुलगाई और वह जाने ही लगा था कि मुक्ता ने उसे फिर टोका–"जाते-जाते यह तो बताते जाओ कि–नासूर तुम हो या मैं ?

"वह तुम कभी नहीं बन सकतीं" उसने रहस्यात्मक ढंग से धुआँ उगलते हुए कहा । कुटिलता की रेखाएँ उसके होठों पर थिरक उठीं और वह साइकिल लेकर बाहर निकलगया ।

मुक्ता की नज़रें कवीश्वर के द्वारा अपने पीछे छोड़े धुएं पर अटक सी गईं-उसे लगा धीरे-धीरे यह धुआँ गाढ़ा होता-उसे चारों ओर से घेर रहा है और वह अतीत के गर्त में डूबती चली गई—उसके सामने वीना और कवीश्वर के बढ़ते प्रेम की एक-एक छवि उभरती और मिट जाती—वह सिसक पड़ी उसने लाख कोशिश की कि वह किसी भी तरह वीना का स्थान पाले—उसने विचारों में खोये-खोये रोटी पलटने के लिये तवे पर हाथ रखा था कि उसके मुँह से चीख निकल गई ।

अपनी जली उंगलियों को देखते हुए—"अब तो यूंही जलते रहना है" बड़बड़ाते हुए उसने आटे में उँगलियां गड़ा दीं—थोड़ी देर बाद उसने तवे को अँगीठी से उतार कर नीचे रखा और फिर विचारों में डूब गई ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धीरे-धीरे उसके होंठ भिंचते चले गये, उसके चेहरे पर दृढ़ता छाती गई—मशीन की तेजी से उसके हाथ चलने लगे—एक-एक कर उसने घर के सब काम समाप्त कर लिये—बर्त्तन आदि को उठा कर यथास्थान रखा और फिर वह किसी सोच में डूब गई। उसके चेहरे पर चिन्ता की रेखाएँ उभर आईं—उसने बेचैनी से अपने हाथ मले—और फिर एक खोज भरी दृष्टि सामने रखी अलमारी पर डाली—अलमारी में रखे हाट टिफिन थर्मस को देखकर उसकी बाछें खिल गईं—उसने उसे साफ कर उसमें खाना रखा और कवीश्वर के कमरे में उसकी टेबल पर रख आई।

अपने कमरे में लौट कर मुक्ता ने अपना आवश्यक सामान एक सूटकेस में रखा। और वह अपने घर की एक-एक चीज को निहारने लगी—उसकी आंखें भर आईं—उसने आंचल से अपनी आंखें पोछीं और झटके से सूट केस बन्द कर फफक फफक कर रोने लगी।

सूटकेस उठाये हुए मुक्ता कमरे से बाहर निकल आई फिर कुछ सोच कर वह कवीश्वर के कमरे में गई और जल्दी-जल्दी एक चिट्ठी लिख कर उसने थर्मस के नीचे रख दी—उसने घड़ी की ओर देखा—"साढ़े चार" वह बुदबुदाई और जल्दी-जल्दी कमरे से बाहर आ गई—बाहर से दरवाजा बंद कर उसने सूटकेस उठाया और लम्बे लम्बे डग भरती सड़क पर निकल आई—एक दो बार उसने पीछे मुड़ कर देखा—और फिर तेजी से आगे बढ़ती चली गई।

⊙⊙

कवीश्वर ने घड़ी की ओर देखा पांच बज चुके थे—उसने जल्दी-जल्दी अपनी फाइलें बंद करना शुरु किया—किन्तु फिर उसके मन में न जाने ऐसा क्या विचार उठा कि उसके हाथ शिथिल पड़ गये। उसने सीट बंद की और दफ्तर से बाहर आकर साइकिल उठा कर अनमने-अनमने घर की ओर चल पड़ा—धीरे-धीरे वह अपने घर के समीप होता गया—दूर से बंद दरवाजे को देख उसका मन शंका से भर उठा—उसके पैर तेजी से चलने लगे।

उसने साइकिल दरवाजे पर पटकी और तेजी से दरवाजा खोलकर आवाज लगाई—मुक्ता·····किन्तु उसे कोई उत्तर नहीं मिला—उसने घबड़ाते हुए, घर में प्रवेश किया—दोनों कमरों में ताला लगा देख उसकी व्यग्रता बढ़ गई—लगभग दौड़ते हुए वह अपने कमरे के पास पहुँचा। जेब से चाबी निकाल कर ताला खोल, जैसे ही वह अन्दर घुसा उसकी नजरें थरमस के नीचे दबे कागज पर पड़ीं—उसने झपट कर उसे उठा लिया—मुक्ता की चिट्ठी के पहले वाक्य पर ही उसकी नजरें जम कर रह गईं—

"खाना बना कर रख कर जा रही हूँ"—इससे आगे वह नहीं पढ़ पाया-उसकी आंखे भर आईं-उसे लगा मानो वीना की रिक्तता मुक्ता के जाने से और बढ़ गई है—वह सर थाम कर बैठ गया—अचानक वह उठा, सामने पड़े सूटकेस में उसने कपड़े रखे और सूटकेस उठाये कमरे से बाहर आ गया कमरे का दरवाजा बन्द कर ताला लगाया—और फिर बाहर जाने के लिये मुड़ा ही था कि उसके हाथों से सूट-केस छूट पड़ा—दरवाजे पर मुक्ता उसकी साईकिल लिये खड़ी थी—

कविश्वर के मुंह से बस इतना ही निकला "तुम···!"

"मैं तुम्हारी फोटो यहीं भूल गई थी"—कहते-कहते मुक्ता सुबक पड़ी। □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

□ रामधन सौनेय एम. ए. (उ.) हिन्दी

रंग–उत्सव

सड़कों पर
रंग–फुहारें
लाल पीली हरी ।

अट्टहासों के
गुलाब
उल्लास
गंध–सा बिखरा
चारों ओर ।

हुड़दंग
सतरंगे
तन मन ।

एक
मैं ही रह गया
कोरा कागज
ओ मेरे । दूरदर्शी रंग !

सस्ता

बाजार में
कीमतें मुटा रही हैं
गिर रहा है
मेरा भाव ।

अतटस्थ

जब
घिरे हुए गंदले आकाश से
ठीक खोपड़ी पर
बरस रहे हों
जूते
एक छतरी तक
नहीं हो पास
तटस्थता की बात
निरी बकवास है ।

दर असल
आरामदेह मकान में टिके लोगों की
यह सुविधा है ।

तुम कर सकते हो
भाग निकलने की
आसान भूल

पर
जाओगे कहाँ ?
शिकारी कुत्ते-सी-गंध सूंघती यह बारिश
तुम्हारा पीछा करेगी
हर जगह ।

बिलों के मुहाने
सीमेंट से
पुख्ता मूँद दिये गये हैं
क्या तुम
घुटनों में सिर छिपाये
गठरी बनें
उधड़वाते रहोगे अपनी
चमड़ी ?

चीखो
हाँ, चीखो
फेफड़ों की पूरी शक्ति से
देखोगे
कोरस का हिस्सा है तुम्हारी
चीख ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

76235

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आंन्तरिक विस्फ़ोटक–इंजन में ईंधन तथा ईंधन प्रणाली

□ प्रा० ओम प्रकाश गांधी

ईंधन इंजन का भोजन है। ईंधन के जलने से उत्पन्न होने वाली उष्मा से गैस तथा वायु जो सिलिन्डर में भरी रहती है, फैलती है। फैलने से यह गैस पिस्टन को धक्का देती है, जिससे बल उत्पन्न होता है। आंतरिक विस्फोट वाले इंजनों में द्रव ईंधनों का प्रयोग होता है इन इंजनों में ईंधन तथा हवा के मिश्रण का प्रयोग होता है। पिस्टन से शक्ति कनेक्टिंग रॉड के द्वारा क्रेंक शॉफ़्ट को मिलाती है तथा क्रेंक शॉफ़्ट से शक्ति पूली या पहियों को मिलती है।

इंजन के अच्छा कार्य करने हेतु ईंधन में निम्न-लिखित विशेषतायें होनी आवश्यक हैं:—

१. नॉक कैरेक्टरिस्टिक:—(KNOCK CHARACTERISTIC):—पावर स्ट्रोक, अर्थात जब पिस्टन को शक्ति मिलती है, के आरम्भ में ईंधन के मिश्रण में आग जलनीं प्रारम्भ हो जाती है और सिलिन्डर हैड से क्रेंक की ओर जलती हुई चलती है। यह आग स्थिर गति से जलनी चाहिये। पर यदि ईंधन अच्छी प्रकार का न हो तो, यह आग आरम्भ में तो स्थिर गति से जलती है, पर अन्त में स्थिर नहीं रहती। कारण यह होता है कि जली हुई गैसों के दवाव के कारण अन्तिम मिश्रण झटके के साथ दहक उठता है जिससे पिस्टन को झटका लगता है। इसको नॉक कहते हैं। इससे शक्ति की हानि होती है, अत: यह इंजन के लिये हानिकारक होता है। इस लिये ऐसे ईंधन प्रयोग करने चाहियें जो नॉकिंग उत्पन्न न करें। ईंधन का नॉक टेस्ट एक विशेष इंजन द्वारा किया जाता है, जिसे CFRC इंजन कहते हैं। जिसे Cooperative Fuel Research Commitee, U.S.A. ने बनाया है।

२. ऑकटेन नम्बर (OCTANE NUMBER):—किसी ईंधन का ऑकेटेन नम्बर यह प्रदर्शित करता है कि उस ईंधन में कितनी कम या अधिक नॉकिंग होती है। अधिक ऑकटेन नम्बर वाले ईंधन कम नॉकिंग उत्पन्न करते हैं। सब से उत्तम ईंधन का ऑकटेन नम्बर १०० होता है। किसी भी ईंधन का ऑकटेन नम्बर उस ईंधन में आईसो–ऑकटेन (ISO–OCTANE) तथा एन हेपटेन (n-HEPTANE) के मिश्रण (आयतन से) में आइसो ऑकटेन की मात्रा प्रदर्शित करता है। ISO–OCTANE (TRI. METHYL PENTANE, 224 C8 H18) एक ISOMOVE है और इसकी ऑकटेन रेटिंग १०० है। तथा एन-हेपटेन की ऑकटेन रेटिंग ० (शून्य) मानी गई है। अच्छे ईंधनों का ऑकटेन नम्बर बढ़ाने के लिये उन में TEL (TETRAMETHYEL LEAD) 1.5 ml प्रति गेलन मिलाई जाती है। गैसोलीन (ईंधन जो साधारणतया ट्रेक्टरों में प्रयोग होता है) का ऑकटेन नम्बर ८५ होता है।

३. वाष्पीकरण (VOLATALITY):–ईंधन को हवा में सरलता से मिश्रित होने तथा शीघ्र जलने के लिये वाष्पीकारक होना अतिआवश्यक है। ईंधन के वाष्पीकारक होने की चार महत्वपूर्ण विशेषतायें होनी आवश्यक हैं।

(क) स्टार्टिंग कैरेक्टरिस्टिक:–ईंधन का ऊष्मांक कम होना चाहिये, जिससे उसका वातावरण के तापक्रम पर ही वाष्पीकरण हो सके और इंजन सरलता से स्टार्ट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो सके। ईंधन का उष्माँक कम कहने के लिये कभी २ उसमें कुछ रासायनिक पदार्थ भी मिलाये जाते हैं।

(ख) **वेपर लॉक**:–जिस नलि से ईंधन को ईंधन टैंक से कारबोरटर तक ले जाया जाता है, कभी कभी उसमें ईंधन के अधिक वाष्पीकरण के कारण ईंधन का बहाव या तो कम हो जाता या बन्द होता जाता है। इसे वेपर लॉक कहते हैं। अतः ईंधन का उष्माँक इतना कम भी नहीं होना चाहिये, कि वह नलि में वेपर लॉक उत्पन्न कर दे।

(ग) **रनिंग प्रफार्मेन्स**:—साधारणतः चलते ईंजन में ईंधन का पूर्ण रूप से वाष्पीकरण, कम्प्रेशन स्ट्रोक के पूरा होने तक, हो जाना चाहिये। वह ईंधन जिनका वाष्पीकरण उच्च उष्माँक पर होता है, वे हवा से भलि प्रकार मिश्रित नहीं हो पाते। जिससे इंजन की क्षमता कम हो जाती है।

(घ) **क्रेंक केस डाईल्यूशन**:–जब ईंधन का पूर्ण रूप से वाष्पीकरण नहीं हो पाता, तो ईंधन सिलेन्डर की दीवारों पर छोटी छोटी बूंदों के रूप में जम जाता है। अतः वह लुबरीकेटिंग ऑयल के साथ मिश्रित होकर उसको पतला कर देता है, जिस से उसकी लुबरीकेटिंग प्रापर्टी कम हो जाती है।

४. गोंद तथा वार्निश डिपाजिट (GUM AND VARNISH DEPOSIT):—कुछ ईंधनों को जिन में कुछ अशुद्धता हो, (जैसे Reactive Hydro-Carbon आदि) को गोदाम में कुछ समय तक रखे रहने से उसमें गोदं तथा वार्निश एकत्रित हो जाती है। जिस से वाल्व चिपकने लगते हैं अतः भली प्रकार कार्य नहीं करते। इससे इंजन की क्षमता घट जाती है। अतः ऐसे ईंधन प्रयोग नहीं करने चाहिये जिनमें अशुद्धता हो।

५. कोरोशन (CORROSION):—कुछ ईंधनों में गन्धक की मात्रा अधिक होने से इंजन के कुछ भाग कटाव होने से नष्ट हो जाते हैं। अतः ऐसे ईंधन जिनमें गन्धक की मात्रा ०.१% से अधिक हो कभी भी प्रयोग में नहीं लाने चाहिये। ईंधन में गन्धक की उप–स्थिति की जानकारी इस प्रकार हो सकती है। एक चम-कती ताम्बे की पट्टी को ईंधन में तीन घन्टे के लिये 122°F पर रखा जाये। फिर उसे निकाल कर एक दूसरी पॉलिश की हुई पट्टी के साथ मिलाया जाये, यदि ईंधन में पड़ी पट्टी का रंग कुछ उड़ जाये कम हो गया हो तो इस से यह सिद्ध हो जाता है कि ईंधन में गन्धक 0.1% से अधिक है। उसे प्रयोग नहीं करना चाहिये।

ईंधन प्रणाली:—एक आंतरिक विस्फोटक इंजन में ईंधन प्रणाली में निम्नलिखित भाग होते हैं,

१. ईंधन टैंक, २. ईंधन फिल्टर,
३. ईंधन पम्प, ४. ईंधन नली,
५. इनटेक मेनिफ़ोल्ड तथा ६. कारबूरेटर।

इन सभी भागों में कारबूरेटर(CARBURETOR) सब से महत्वपूर्ण भाग है। जिस का वर्णन अति अनिवार्य है।

कारबूरेटर(CARBURETOR):—ईंधन के उचित प्रयोग तथा इंजन के अच्छा कार्य करने हेतु यह आवश्यक है कि ईंधन में हवा आवश्यकता अनुसार उचित अनुपात में मिश्रित हो! कारबूरेटर के भाग वेनचूरी में हवा तथा ईंधन का बहाव इस प्रकार होता है।

हवा का बहाव $W = 123{\cdot}36 \frac{A_2 P_1}{\sqrt{T_1}}$ गुणित—

$$\times \sqrt{\left[\frac{P_2}{P_1}\right]^{1.43} \left[\frac{P_2}{P_1}\right]^{1.715}}$$

जबकि

W=हवा का बहाव पौंड/मिनट में

A_2=वेनचूरी के थ्रोट का क्षेत्रफल वर्ग इन्च में

P_1= ,, के मुँह पर दबाव पौंड/वर्ग इन्च में

P_2= के थ्रोट ,, ,, ,, में

T_1= ,, के मुंह पर ईंधन का तापक्रम F° में

ईंधन का बहाव :—

$$W = 60.2\, ca \sqrt{p}\, \sqrt{h}$$

जबकि :—

W=ईंधन का बहाव पौंड / मिनट में

C=कोफ़िशीयेन्ट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

A = ओरिफ़िस का क्षेत्रफल वर्ग ईन्च में
P = ईंधन की Specific gravity
B = ओरिफिस पर प्रेशर हैड इन्च में

ऊपर की दोनों Equation (समीकरणों) से प्रतीत होता है, कि हवा तथा ईंधन का बहाव आवश्यकता अनुसार रखने के लिये बहुत सी बातों का ध्यान रखना पड़ता है।

हवा ईन्धन अनुपात:—हवा–ईंधन मिश्रण में दोनों का अनुपात गति तथा इंजन पर भार के अनुसार बदलता रहता है। साधारणत: अनुपात १५.५:१ हवा-ईंधन (भार के अनुसार) होता है। अधिक से अधिक हवा का अनुपात २०:१ का हो सकता है। ऐसे मिश्रण को लीन मिश्रण (LEAN MIXTURE) कहते हैं, तथा इनका अनुपात कम से कम ८ : १ होता है जिसे रिच मिश्रण (RICH MIXTURE) कहते हैं। ईंजन के स्टार्टिंग पर रिच मिश्रण तथा अधिक गति पर लीन मिश्रण की आवश्यकता होती है।

कारबूरेटर के कार्य:—

१. हवा तथा ईंधन का मिश्रण बनाना
२. ईंधन का वाष्पीकरण करना
३. हवा-ईंधन के अनुपात को आवश्यकतानुसार बदलना
४. हवा-ईंधन मिश्रण की मात्रा को आवश्यकतानुसार देना।

कारबूरेटर की रचना:—कारबूरेटर में निम्नलिखित भाग होते हैं।—(देखिए चित्र सं. १)

१. फ़लोर चेम्बर, २. मेन जेट,
३. वेनचूरी, ४. चौक,
४. थ्रोटल,

आधुनिक कारबूरेटर में कुछ अन्य भाग होते हैं। (देखिए चित्र सं. २)

१. आइडलिंग (IDLING) जेट,
२. कम्पनसेटिंग जेट ३. एकोनोमाइज़र,
४. एक्सलरेटिंग वैल (ACCELERATING WELL)
५. ड्रेन (DRAIN) (a) ओवरफ्लो (b) प्लेट चेम्बर।

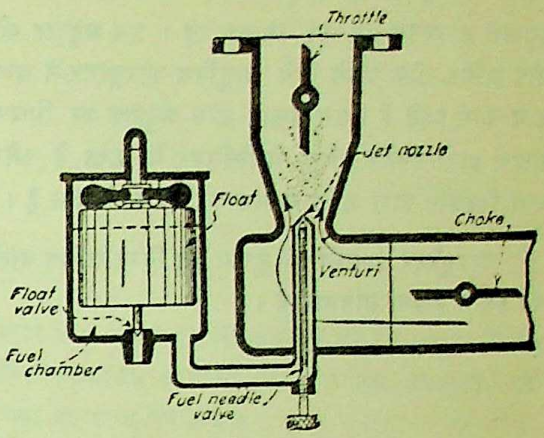

(चित्र–१)

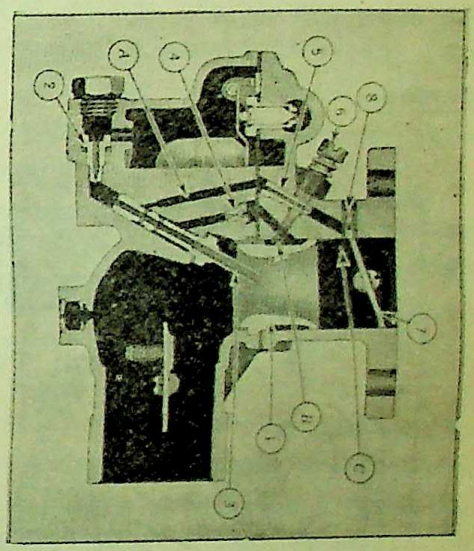

(चित्र–२)

कारबूरेटर का WORKING:—इंजन जब चलता है तो इनटेक स्ट्रोक के समय इंनटेक वाल्व द्वारा हवा ईंधन का मिश्रण सिलन्डर में आता है। यह हवा एयर क्लीनर में से होती हुई चौक के द्वारा वेनचूरी में आती है। जहां पर हवा की गति बढ़ जाती है। अत: वह ईंधन जेट से अपने साथ ईंधंन को फव्वारे के रूप में बाहर निकाल लेती है। इस प्रकार हवा तथा ईंधंन का मिश्रण बन जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारबूरेटर में वेनचूरी तथा जेट एक विशेष अनुपात में बनाये जाते हैं। जिस से हवा ईधंन के मिश्रण में इन का अनुपात आवश्यकतानुसार मिलता रहे। इस अनुपात को और अधिक ठीक रखने लिये आधुनिक कारबूरेटर में अन्य भाग काम आते हैं। इस प्रकार ठीक अनुपात का मिश्रण थ्रोटल द्वारा इनटेक वाल्व से सिलिंडर में जाता है और वहां विस्फोट द्वारा शक्ति उत्पन्न कर इंजन को देता है।

कारबूरेटर प्रणाली की सुरक्षा हेतु निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना अनिवार्य है।

१. सिलिन्डर तथा कारबूरेटर के बीच गेस्केट ठीक रहना चाहिये।
२. इंधन पाइप के सभी जोड़ कसे रहने चाहिये।
३. सेडीमेन्ट बॉल को साफ रखना चाहिये।
४. एयर फ़िल्टर को सदा साफ रखना चाहिये।
५. नीडल वाल्व के ऊपर बाईंडिंग नट भली प्रकार लगा देना लाहिये।
६. इंजन [जब कार्य न कर रहा हो।] को सदा शेड में रखना चाहिये।

□

रामबाबु माथुर द्वितीय वर्ष (कला)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कार्य विवरण

हिन्दी परिषद्

प्रस्तुतकर्त्ता प्रमोद कुमार शर्मा (मंत्री)

हिन्दी-परिषद्, ऐसे साहित्यिक कार्यकर्त्ताओं का संगठन है, जो कि एक ओर तो हिन्दी-साहित्य की उच्च कक्षाओं का शिक्षण प्राप्त कर रहें हैं और दूसरी ओर अपनी सृजनात्मक चेतना से साहित्य की विभिन्न विधाओं में योगदान करना चाहते हैं। वे साहित्य की मूलभूत चेतना से अनुप्राणित हो, साहित्य के अनुसंधान कार्य में रुचि एवं प्रवृत्ति रखते हैं। इस सत्र में जहाँ परिषद् ने विभिन्न साहित्यक प्रतियोगिताओं को आयोजित किया, वहीं एम. ए. उत्तरार्द्ध के सात विद्यार्थियों ने श्रेष्ठ लघु-प्रबन्ध भी प्रस्तुत किये हैं। 'शैली-तत्त्व परियोजना' के अर्न्गत तीन छात्राओं ने क्रमशः 'नदी के द्वीप' का शैलीपरक अनुशीलन, महादेवी वर्मा के संस्मरणों का शैली-तात्त्विक अध्ययन, तथा मीरा की भाषा और शैली पर गवेषणा-कार्य सम्पन्न किया है। इसके अतिरिक्त अज्ञेय के काव्य-बिम्ब, 'लहर' पत्रिका का साहित्यिक योगदान और रांगेयराघव के उपन्यासों में राजस्थान के आंचालिक जीवन की अभिव्यक्ति जैसे विविध एवं बहु-आयामी विषयों पर भी कार्य हुआ है। एक छात्र ने 'राम-काव्य में ग्राम्य वर्णन' पर भी अपना सर्वेक्षण-कार्य प्रस्तुत किया है।

एम. ए. कक्षाओं के विद्यार्थियों ने मीरां-उपनिषद् के अन्तर्गत मीरां के काव्य के विभिन्न पक्षों पर विचार-विनिमय किया। इसी प्रकार बाणभट्ट की आत्म-कथा पर भी अनेक दृष्टियों से विवेचना प्रस्तुत की गई।

इस सत्र में दो बार वन-विहार का कार्य-क्रम भी सम्पन्न हुआ और विद्यार्थियों का एक दल गणराज्य-दिवस पर प्रो. सदाविजय आर्य के नेतृत्व में दिल्ली गया। 'बीर' और 'अजयपाल' जैसे रमणीय स्थानों में हमारे वन-विहार ने न केवल हमारी अनुभूति को ही समृद्ध किया, बल्कि ग्राम्यांचल के निकट सम्पर्क से हम नवस्फूर्ति एवं प्रेरणा भी प्राप्त कर सके।

इस सत्र का उद्घाटन-समारोह डा. सरनाम सिंह शर्मा की अध्यक्षता में सम्पन्न होना था, किन्तु उनके आकस्मिक रूप से ज्वर-ग्रस्त होने के कारण, यह कार्य-क्रम स्थगित करना पड़ा। परिषद् का समापन-समारोह डा. गणपति चन्द्र गुप्त जैसे प्रबुद्ध आलोचक के सान्निध्य में सम्पन्न हुआ।

परिषद् का गठन जनतांत्रिक प्रणाली पर प्रति वर्ष होता है। इस सत्र में श्रीमती चमेली मिश्र, अध्यक्ष के रूप में, श्री विजयचन्द्र शर्मा उपाध्यक्ष के रूप में और प्रमोद कुमार शर्मा, मंत्री के रूप में निर्वाचित हुए।

कार्यकारिणी के सदस्यों तथा अन्य सक्रिय कार्य-कर्त्ताओं के सहयोग से कविता, कहानी एव निबन्ध प्रतियोगितायें सम्पन्न हुईं। इनमें चयनित छात्र-छात्रायें समापन समारोह में पुरस्कृत की गईं। परिषद् के विभिन्न क्रिया-कलापों में हमे प्राचार्य महोदय का संरक्षण प्राप्त रहा है। हिन्दी विभागाध्यक्ष डा. लक्ष्मीकान्त शर्मा, परामर्शदाता डा. रामशरण दास गुप्त तथा विभागीय प्राध्यापकों श्री ओम प्रकाश रैना तथा श्री सदाविजय आर्य से हमें समय-समय पर जो मार्गदर्शन एवं प्रेरणायें मिलती रही हैं उनके प्रति हम अतीव आभारी हैं, और आशा करते हैं कि उनका मार्गदर्शन हमें आगे भी इसी प्रकार मिलता रहेगा।

अन्त में में अपने सहयोगी कार्यकर्त्ताओं के प्रति भी आभार प्रदर्शित किये बिना नहीं रह सकता, जिन्होंने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समय-समय पर अपना अमूल्य सहयोग प्रदान कर परिषद् के कार्य को सुचारू रूप से चलाने में सहायता की है।

हिन्दी परिषद् के सत्रांत समारोह पर, पंजाब विश्व विद्यालय स्नातकोत्तर-केन्द्र, रोहतक के हिन्दी विभागाध्यक्ष डा. गणपति चन्द्र गुप्त ने, परिषद् के सदस्यों एवं हिन्दी-प्रेमियों को सम्बोधित करते हुए भारतीय मानस की हीन-भावना पर प्रकाश डालते हुए कहा: "लोक-भाषाओं के आदिकाल में हम संस्कृत से आक्रान्त थे। मुस्लिम काल में उर्दू फारसी से दबे रहे और ब्रिटिश युग में अंग्रेजी ने हमारी प्रतिभा को उभरने नहीं दिया; किन्तु अब भारतीय भाषाओं और विशेष कर हिन्दी के माध्यम से हमारे जीवन की रुद्ध धारा प्रवाहित हो चली है। अंग्रेजी का जो रूप और प्रतिष्ठा आज है, उसके लिये उसे भी तीव्र संघर्ष करना पड़ा है। इस संघर्ष की अग्नि में से हिन्दी की कंचन-काया निखरेगी और वर्तमान की नई चुनौतियों को स्वीकार करते हुए हम आगे ही बढ़ेंगे।"

इससे पूर्व प्रातः बेला में डा. गुप्त ने रस-सिद्धान्त पर, सौन्दर्य-शास्त्र एवं मनोविश्लेषण के परिप्रेक्ष्य में अपने विचार प्रकट करते हुए कहा: "रस-सिद्धान्त यद्यपि एक प्राचीन काव्य-सिद्धान्त है, फिर भी वर्तमान परिस्थितियों में, बदलते हुऐ परिवेश के अनुरूप हमें इसका संवर्धन करना है। क्रोचे की सौन्दर्यानुभूति और रस सिद्धान्त एक दूसरे के बहुत निकट हैं। रस सिद्धान्त की परम्परा युगानुसार विकास करती रही है। इसके माध्यम से हम नये साहित्य का भी परीक्षण कर सकते हैं। भारतीय प्रतिभा के इस दाय को हमें भुला नहीं देना है, आवश्यकता केवल इतनी है कि हम उसे अद्यतन रूप देते रहें।"

परिषद् का सत्रान्त समारोह, प्राचार्य कृ. रा. वाब्ले की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। ⊙

स्टाफ–क्लब

प्रस्तुतकर्त्ता अमर चन्द अग्रवाल (मंत्री)

इस वर्ष, नए उपाचार्य श्री घी. ला. जोशी की अध्यक्षता में स्टॉफ क्लब का निम्न प्रकार निर्वाचन सर्व-सम्मति से संपन्न हुआ—

प्रा. अमरचन्द अग्रवाल (मंत्री) प्रा. सुकुमार सेन, प्रा. सदाविजय आर्य, प्रा. रमाशंकर दुबे, प्रा. ज्ञानेन्द्र झा, प्रा. कृष्णचन्द्र शर्मा, प्रा. कमलाकर सोपान जोशी, प्रा. आर. के. सिंह, प्रा. वॉय. एस. सिरोही, प्रा. ओम् प्रकाश गांधी, प्रा. हनुमान प्रसाद अग्रवाल (कार्यकारिणी सदस्य)

पाकिस्तान के आकस्मिक आक्रमण के कारण इस वर्ष मनोरंजनात्मक कार्यक्रम स्थगित कर दिए गए किन्तु 'भावात्मक राष्ट्रीय एकता' जैसे विषयों पर पत्र-वाचन (डा.मदनमोहन लवानिया द्वारा) आदि जैसे कार्यक्रम आयोजित किए गए।

सुरक्षा कोष के निमित्त समस्त अध्यापकों के सहयोग से ११००) रु. एकत्रित किये गए।

इस वर्ष सेवा-निवृत्त प्राध्यापक श्री आर.एस. वर्मा (अध्यक्ष, अंग्रेजी विभाग)को भाव भीनी विदाई दी गई तथा कई प्राध्यापकों के अतिरिक्त प्राचार्य वाब्ले जी ने भी उनकी कर्त्तव्यनिष्ठ सेवाओं की मुक्तकंठ से प्रशंसा की। सेवा-निवृत्त प्रा. माधव प्रसाद शर्मा (अध्यक्ष, हिन्दी-विभाग) के आक-स्मिक निधन पर शोक प्रकट कर, संतप्त आत्मा की सद्-गति के लिए प्रार्थना की गई।

भूतपूर्व प्राचार्य श्री दत्तात्रेय वाब्ले की स्मरणीय, रचनात्मक सेवाओं के लिए, एक अभिनंदन समारोह आयोजित कर अध्यापकों की ओर से एक भव्य अभिनंदन पत्र भेंट किया गया। इस कार्यक्रम में प्राचार्य कृष्ण राव वाब्ले, उपाचार्य घी. ला. जोशी, प्रा. रमेशचन्द्र शास्त्री, डा. म० मो० लवानिया, प्रा. म. कृष्ण मारवाह, डा.महेश नारायण निगम ने श्री दत्तात्रेय वाब्ले की योजना, ठोस दूरदर्शिता पूर्ण कर्त्तव्य निष्ठा की भूरि-भूरि प्रशंसा की तथा प्रा.सदाविजय आर्य ने अध्यापकों की ओर से अभिनंदन-पत्र प्रस्तुत किया जिसे स्टॉफ क्लब के अध्यक्ष श्री घी. ला. जोशी ने श्री वाब्ले जी को भेंट किया। कार्यक्रम के उपरान्त सम्मिलित प्रीति-भोज का भी आयोजन किया गया था।

वार्षिक-भोज के अतिरिक्त इतिहास के प्राध्यापक श्री सुरेश चन्द्र राजवंशी को (काशीपुर में कॉलेज के प्राचार्य-पद पर नियुक्त होने के उपलक्ष्य में) विदाई देने का कार्यक्रम करने की योजना है। ⊙

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राध्यापक मंडल

प्राचार्य

श्री कृष्णराव वाव्ले

दयानन्द कॉलेज, अजमेर

कला संकाय

राजनीति विज्ञान	1. श्री दत्तात्रेय वाव्ले	एम. ए. (राजनीतिशास्त्र तथा इतिहास) एल-एल. बी.	विभागाध्यक्ष
	2. श्री श्रीनिवास राव वि. घुले,	एम. ए. (राजनीतिशास्त्र तथा इतिहास)	प्रवक्ता
	3. श्री वीरेन्द्रकुमार शर्मा,	एम. ए. (राजनीतिशास्त्र तथा इतिहास)	प्रवक्ता
	4. श्री मानसिंह राणावत	एम. ए. (राजनीतिशास्त्र)	प्रवक्ता
इतिहास	1. श्री कृष्णराव वाव्ले,	एम. ए. (इतिहास)	विभागाध्यक्ष
	2. श्री श्रीनिवास राव वि. घुले,	एम. ए. (राजनीतिशास्त्र तथा इतिहास)	प्रवक्ता
	3. श्री वीरेन्द्रकुमार शर्मा,	एम. ए. (राजनीतिशास्त्र तथा इतिहास)	प्रवक्ता
	4. श्री सुरेशचन्द्र राजवंशी	एम. ए. (राजनीतिशास्त्र तथा इतिहास) एल-एल. बी.,	(सा. ज्ञा.) प्रवक्ता
	5. श्री ज्ञानेन्द्र झा,	एम. ए. (इतिहास तथा राजनीतिशास्त्र),	(सा. ज्ञा.) प्रवक्ता
	6. श्री हरचन्द जे. मंगलानी	एम. ए. (इतिहास)	प्रवक्ता
	7. श्री हरीशमोहन सक्सेना	एम. ए. (इतिहास)	प्रवक्ता
समाजशास्त्र	1. डॉ. मदनमोहन लवानिया,	एम. ए. (समाजशास्त्र, इंगलिश, इतिहास), पी-एच. डी., एल-एल. बी.	विभागाध्यक्ष
	2. श्री अर्धेन्दुकुमार गुप्ता,	एम. ए. (समाजशास्त्र)	प्रवक्ता
	3. श्री बुद्धिप्रकाश आर्य,	एम. ए. (समाजशास्त्र तथा हिन्दी)	प्रवक्ता
इंगलिश	1. श्री शान्तिस्वरूप शर्मा,	एम. ए. (इंगलिश तथा इतिहास)	विभागाध्यक्ष
	2. श्री महाराज कृष्ण मारवाह,	एम. ए. (इंगलिश)	प्रवक्ता
	3. श्री मनमोहनसिंह रिखी	एम. ए. (इंगलिश)	प्रवक्ता
	4. श्री उपेन्द्र शर्मा,	एम. ए. (इंगलिश)	प्रवक्ता
	5. श्री इंदुभूषण अबरोल	एम. ए. (इंगलिश)	प्रवक्ता
हिन्दी	1. डॉ. लक्ष्मीकान्त शर्मा,	एम. ए. (हिन्दी), पी-एच. डी.	विभागाध्यक्ष
	2. श्री ओमप्रकाश रैना,	एम. ए. (हिन्दी)	प्रवक्ता
	3. श्री विजयकुमार आर्य,	एम. ए. (हिन्दी)	प्रवक्ता
	4. डॉ. रामशरणदास गुप्त	एम. ए. (हिन्दी) पी. एच. डी.	प्रवक्ता
संस्कृत	1. श्री दिनेशचन्द्र शास्त्री,	एम. ए. (संस्कृत तथा हिन्दी)	विभागाध्यक्ष
	2. श्री रमेशचन्द्र शास्त्री,	एम. ए. (संस्कृत)	प्रवक्ता
अर्थशास्त्र	1. श्री बिशेश्वरनाथ कश्यप,	एम. ए. (अर्थशास्त्र)	विभागाध्यक्ष
	2. श्री दाऊदयाल शर्मा,	एम. ए. (अर्थशास्त्र) एम. कॉम.	प्रवक्ता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भूगोल	1. डॉ. महेशनारायण निगम,	एम. ए. (भूगोल) पी-एच. डी.	विभागाध्यक्ष
	2. श्री शरदविनायक कापड़े,	एम. ए. (भूगोल)	प्रवक्ता
	3. श्री प्रभातीलाल जोशी,	एम. ए. (भूगोल)	प्रवक्ता
	4. श्री राधावल्लभ उपाध्याय,	एम. ए. (भूगोल), एम. एड.	प्रवक्ता
	5. श्री श्यामलाल शर्मा,	एम. ए. (भूगोल, चित्रकला), बी. एड.	प्रवक्ता
	6. श्री कान्ताप्रसाद शर्मा,	एम. ए. (भूगोल) बी. एड.	(स्थानापन्न) प्रवक्ता
	7. श्री ओमप्रकाश छींपा	एम. ए. (भूगोल)	कारटोग्राफर
चित्रकला	1. श्री रतनाकर विनायक साखलकर	बी. एस-सी., बी. टी. जी. डी. (कला), ए. एम.	विभागाध्यक्ष
	2. श्री रामअवतार जैसवाल,	एम. ए. (चित्रकला), डिप्लोमा फाईन आर्टस (लखनऊ)	प्रवक्ता
	3. श्री ओमप्रकाश अग्रवाल,	एम. ए (चित्रकला), ए. एम. टी. (लखनऊ)	प्रवक्ता

वाणिज्य संकाय

1. श्री घीसालाल जोशी,	एम. ए. (अर्थशास्त्र) एम. कॉम. एफ. आर. ई एस. (लन्दन)	**उपाचार्य** विभागाध्यक्ष तथा संकाय भारसाधक
2. डॉ. कैलाशनारायण गुप्त,	एम. कॉम. पी-एच. डी., एल-एल. बी.	विभागाध्यक्ष लेखशास्त्र एवम् सांख्यिकी
3. डॉ. जयप्रकाश गुप्त,	एम. कॉम. पी-एच. डी.	विभागाध्यक्ष, व्यावहारिक अर्थशास्त्र
4. श्री सुधीरकुमार सेन,	एम. कॉम.	प्रवक्ता
5. श्री कृष्णविहारीलाल माथुर,	एम. कॉम.	प्रवक्ता
6. श्री रामेश्वरप्रसाद शर्मा,	एम. कॉम.	प्रवक्ता
7. श्री राजकुमार यादव,	एम. कॉम.	प्रवक्ता
8. श्री रामशंकर दुबे,	एम कॉम., एल-एल बी.	प्रवक्ता
9. श्री जीवाराम शर्मा,	एम. ए. एम. कॉम.	प्रवक्ता
10. श्री शिवशंकर शर्मा,	एम. कॉम.	प्रवक्ता
11. श्री सतीशचन्द्र जोशी.	एम. कॉम.	प्रवक्ता
12. श्री गुरुशरण भटनागर	एम. कॉम.	प्रवक्ता
13. श्री कृष्णगोपाल गोयल	एम. कॉम.	प्रवक्ता

विज्ञान संकाय

गणित	1. श्री ओंकारप्रसाद मित्तल,	एम. एस-सी. (गणित एवम् सांख्यिकी)	विभागाध्यक्ष
	2. श्री बृजकिशोर शर्मा,	एम. एस-सी. (गणित)	प्रवक्ता
	3. श्री विजयपालसिंह	एम. एस-सी. (गणित)	प्रवक्ता
रसायन विज्ञान	1. श्री अजयसिंह पुरुषोत्तम बैस,	एम. एस-सी. (रसायन)	विभागाध्यक्ष
	2. श्री ओमप्रकाश कुलश्रेष्ठ,	एम. एस-सी. (रसायन)	प्रवक्ता
	3. श्री श्रीगोपाल शर्मा.	एम. एस-सी. (रसायन)	प्रवक्ता
	4. श्री गणेशकुमार मित्तल,	एम. एस-सी. (रसायन)	प्रवक्ता
	5. श्री विमलप्रसाद अग्रवाल,	एम. एस-सी. (रसायन)	प्रवक्ता
भौतिक विज्ञान	1. श्री पुरुषोत्तम परांजपे,	एम. एस-सी. (भौतिकी)	विभागाध्यक्ष
	2. श्री सत्यनारायण गौड़,	एम. एस-सी. (भौतिकी)	प्रवक्ता
	3. श्री अमरचन्द अग्रवाल,	एम. एस-सी. (भौतिकी)	प्रवक्ता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

	4. श्री महेन्द्रसिंह वर्मा,	एम. एस-सी. (भौतिकी)	प्रवक्ता
	5. श्री रामकुमारसिंह,	एम. एस-सी. (भौतिकी)	प्रवक्ता
जन्तु-विज्ञान	1. श्री सुधीरकुमार भार्गव,	एम. एस-सी. (जन्तु विज्ञान)	विभागाध्यक्ष
	2. श्री गोपालनारायण टण्डन,	एम. एस-सी. (जन्तु विज्ञान)	प्रवक्ता
	3. श्री चन्द्रकांत द० खांडेकर	एम. एस-सी. (जन्तु विज्ञान)	प्रवक्ता
वनस्पति-विज्ञान	1. श्री कृष्णचन्द्र,	एम. एस-सी. (वनस्पति विज्ञान)	विभागाध्यक्ष
	2. श्री सतीश वर्मा.	एम. एस-सी. (वनस्पति विज्ञान)	प्रवक्ता

कृषि-संकाय

1. डॉ. जयनारायण टण्डन,	एम. एस-सी. (कृषि सस्य विज्ञान)	अध्यक्ष
	पी. एच. डी. एफ. आई. सी. एस.	कृषि विभाग
2. श्री महेन्द्रसिंह छोंकर,	एम. एस-सी (कृषि)	पशुपालन तथा दुग्ध विज्ञान
3. श्री कृष्णदास सक्सेना,	एम. एस-सी. (कृषि)	कीट विज्ञान
4. श्री राधाकान्त चतुर्वेदी,	एम एस-सी. (कृषि)	वनस्पति विज्ञान
5. श्री कमलाकर सोपान देव जोशी,	एम. एस-सी. (कृषि)	वनस्पति-विज्ञान
6. श्री कल्याणसिंह खांगरोट,	एम. एस-सी. (कृषि)	उद्यान विज्ञान
7. श्री रामअवध सिंह,	एम. एस-सी. (कृषि)	अर्थशास्त्र
8. श्री ओमप्रकाश गांधी		कृषि अभियांत्रिकी
9. श्री महेन्द्रपाल त्यागी		कृषि रसायन
10. श्री योगराज सिंह सिरोही,	एम. एस-सी. (कृषि)	सस्य विज्ञान
11. श्री विजयकुमार गोयल,	बीवी. एस-सी.	पशु चिकित्सा विज्ञान
12. श्री रामप्रीत पांडे,	एम. एस-सी. (कृषि)	प्रसार विज्ञान

विधि संकाय

1. श्री दत्तात्रेय वाब्ले	एम.ए. (राज. तथा इति.) एल-एल. बी. (स्थानापन्न)	विभागाध्यक्ष
2. श्री हनुमानप्रसाद अग्रवाल	एल-एल. एम.	प्रवक्ता
3. डा० मदनमोहन लवानिया	एम. ए., पी-एच. डी. एल-एल. बी.	प्रवक्ता
4. श्री रामशंकर दुबे	एम. कॉम., एल-एल. बी.	प्रवक्ता

क्रीड़ा तथा खेलकूद

1. श्री श्रीधर अग्निहोत्री,	एम. ए., (राज., हिन्दी) डी. पी. ई.	पी. टी. आई.

मेडीकल ऑफीसर

1. डा० फूलचन्द शर्मा,	बी. एस-सी. एल. पी. सी. पी. (लन्दन) एम. आर. सी. एस., (इंग्लैंड)एम. डी. (कोल)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिपिक वर्ग

1. श्री निर्विकार गुप्त,	शिक्षा विशारद, साहित्यरत्न	लेखा अधिकारी एवम् प्रधान लिपिक
2. श्री जवाहर लाल हालाखंडी		कार्यालय अधीक्षक
3. श्री जयदेव शर्मा	बी. ए. डिप्लोमा (पु. वि.)	पुस्तकाध्यक्ष
4. श्री रामकिशन सेजरा		इंजीनियरिंग एवं कृषि विभाग
5. श्री ठाकुरदास		स्टोर कीपर
6. श्री रवीन्द्र कुमार		लिपिक
7. श्री बनवारीलाल भार्गव		लिपिक
8. श्री श्यामलाल अग्रवाल		भारसाधक, शुल्क तथा विद्यार्थी सम्पर्क अनुभाग
9. श्री तुलसीदास आसवानी		लिपिक
10. श्री राजकुंवर शर्मा		लिपिक
11. श्री श्यामसुन्दर सिंह		लिपिक
12. श्री बालकृष्ण माहेश्वरी		लिपिक
13. श्री जगदीशप्रसाद गोयल		लिपिक
14. श्री श्रीनिवास वा० हर्षे		लिपिक

प्रयोगशाला—सहायक वर्ग

1. श्री गोविन्द राम
2. श्री कन्हैयालाल
3. श्री गोपाल स्वरूप सक्सेना
4. श्री चन्द्रशेखर रानाडे
5. श्री मदन लाल डूहनवाल
6. श्री पुरुषोत्तमसिंह
7. श्री रतनसिंह भडाना
8. श्री महेशचन्द गौड़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वार्षिक चित्रावली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आधुनिक भारत के निर्माता

महर्षि दयानन्द सरस्वती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दयानन्द कॉलेज—भवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारे नवीन प्राचार्य

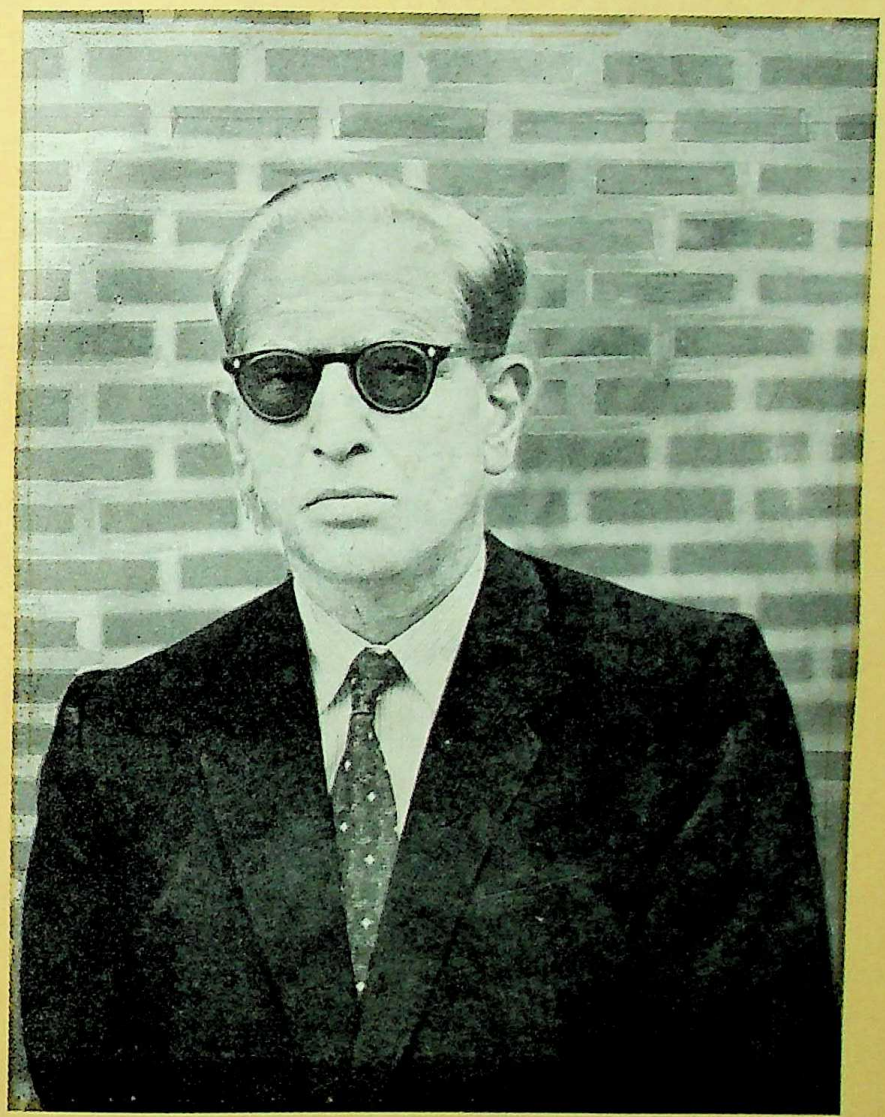

श्री कृष्णराव वाब्ले

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

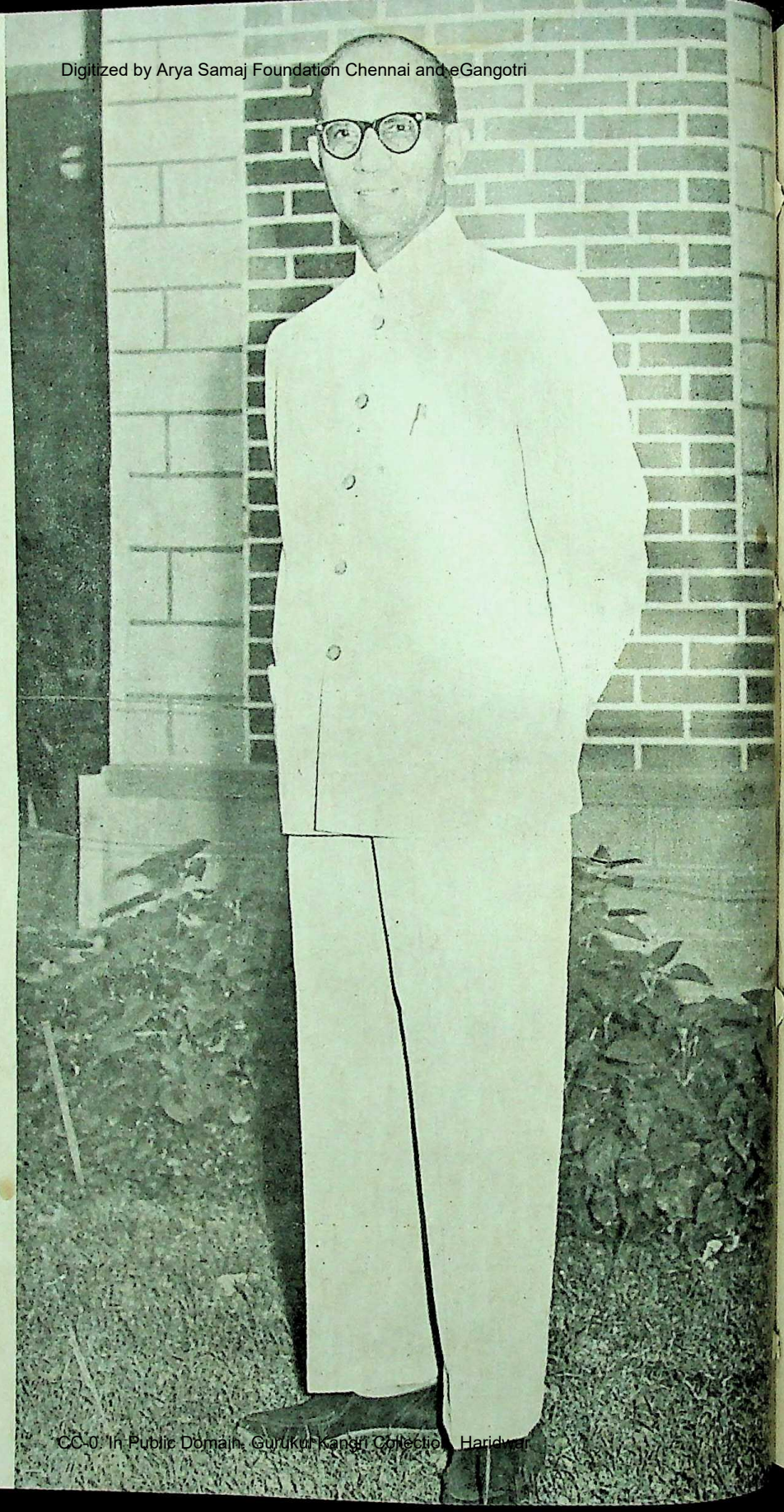

त पच्चीस वर्षों से
लिज के
मुखी विकास
निरन्तर
थक परिश्रम
उपरान्त
चार्यपद से
वानिवृत्त

ी दत्तात्रेय वाब्ले

क कर्मठ व्यक्तित्व]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

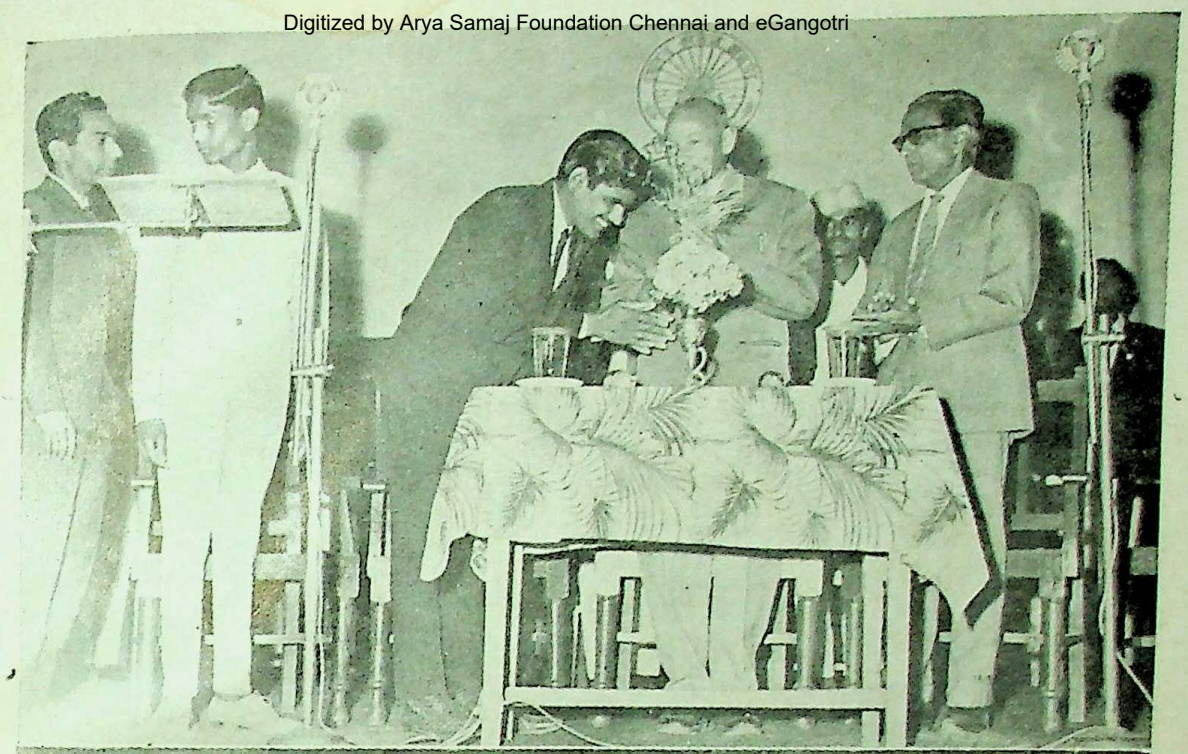

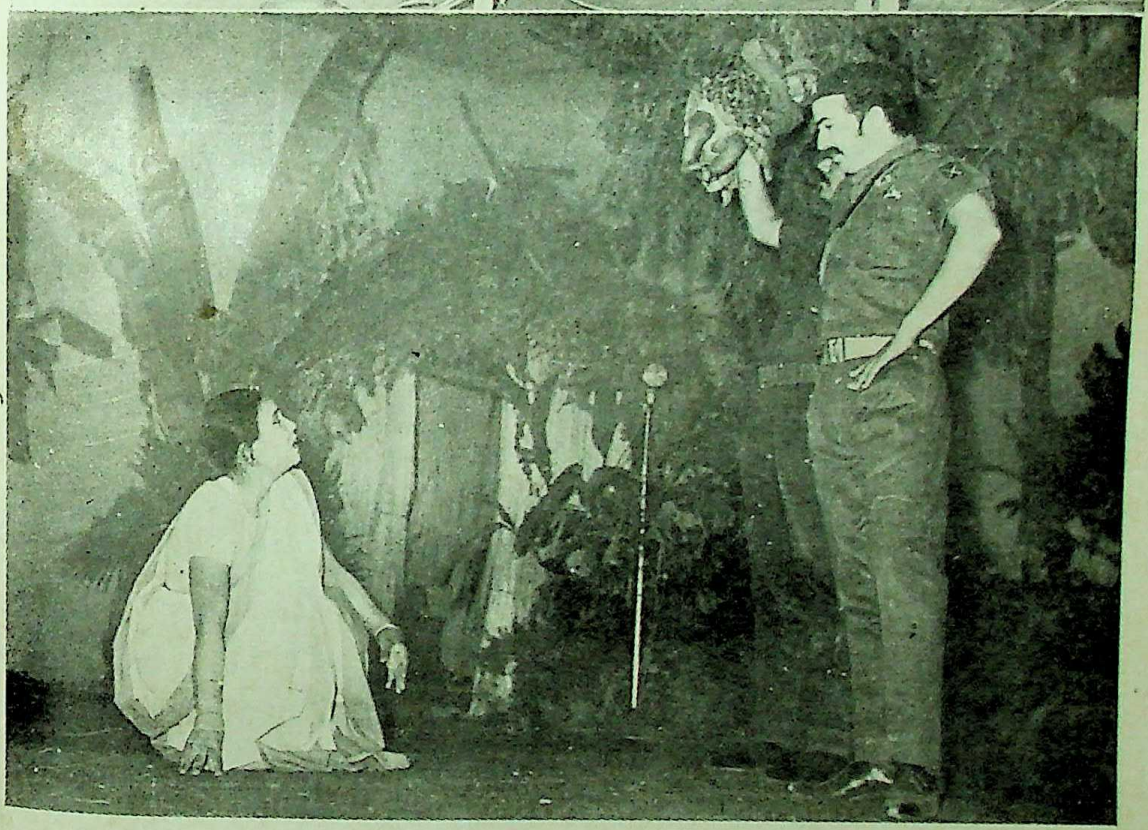

दयानन्द कॉलेज छात्र-संघ : दो समारोह

(ऊपर) उद्घाटन समारोह के अवसर पर—(बाएँ से) सर्वश्री अ. कु. गुप्ता (परामर्शदाता), विष्णुकान्त खंडेलवाल (मंत्री), आनन्द सिंह भाकर (अध्यक्ष) भीमसेन जी (मुख्य अतिथि) तथा प्राचार्य कृष्णराव वाब्ले. (नीचे) सामाजिक सप्ताह के अन्तर्गत प्रस्तुत 'जागो बांग्ला' नाटक का एक दृश्य—पाकिस्तानी सैनिकों के अत्याचार.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भूतपूर्व प्राचार्य राजकीय महाविद्यालय अजमेर श्री भीमसेन जी, दयानन्द कॉलेज के प्राचार्य श्री कृष्णराव बाल्ले एवं छात्र-संघ के परामर्शदाता प्रा. अ. कु. गुप्ता के साथ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

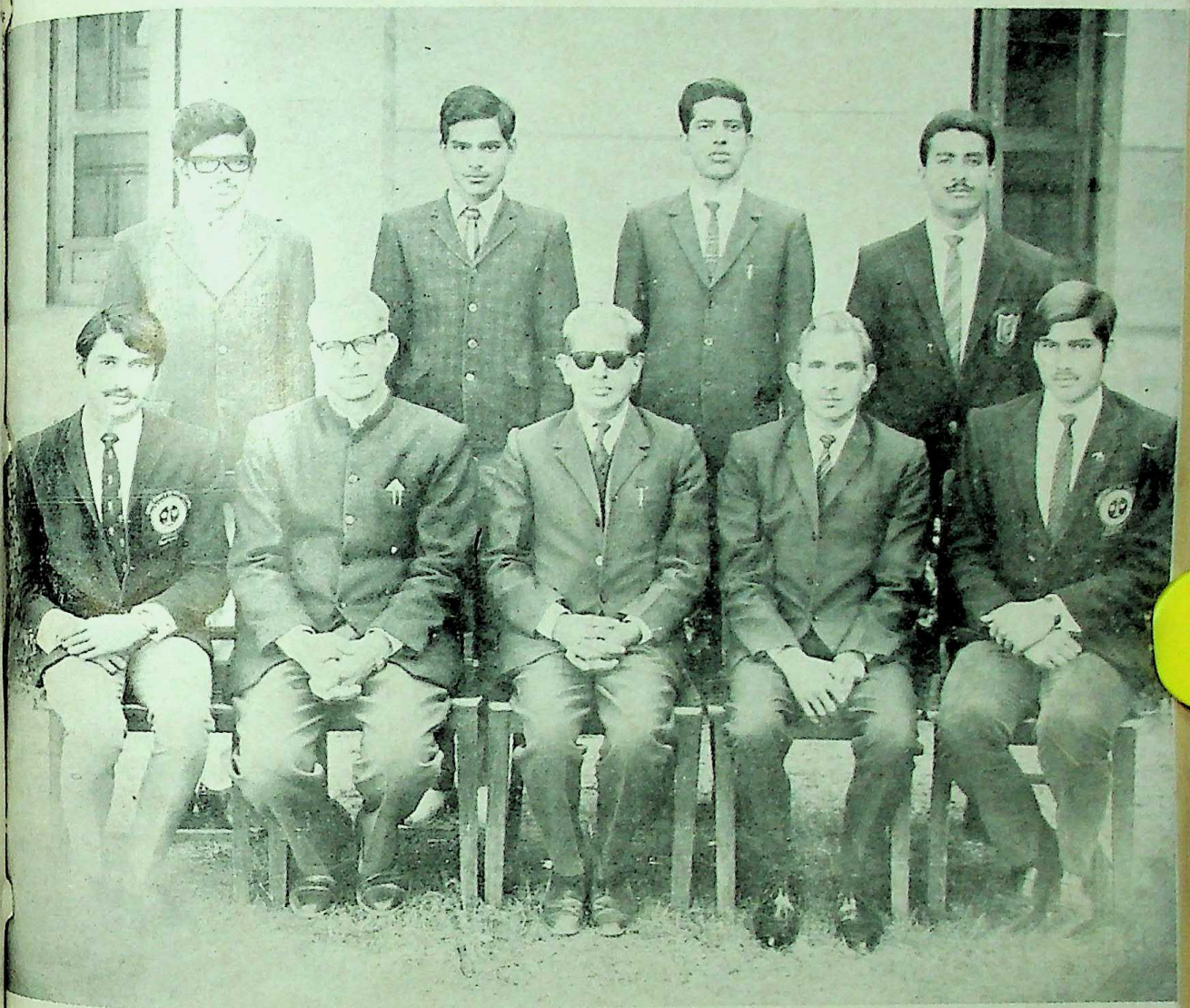

कॉलेज तैराकी दल

ों पर (बाएँ से)

ेश्री कैलाशचन्द्र, डॉ० जयनारायण टण्डन, प्राचार्य कृष्णराव वाब्ले, श्रीधर अग्निहोत्री (शारीरिक शिक्षा निर्देशक), सुरेन्द्र गोयल (कप्

ड़े हुए (बाएँ से)

ेश्री पी. आर. एन. रेड्डी, बृजराज, अशोक कुमार चौधरी, अमरसिंह जोधा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुरस्कार वितरण समारोह

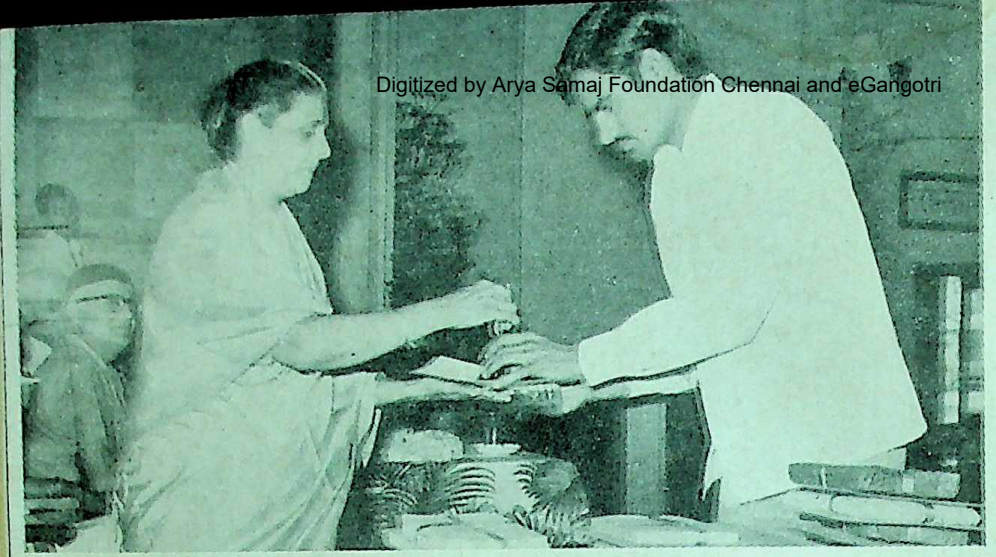

श्रीमती हूजा पुरस्कृत छात्रों को पुरस्कार देते हुए.

समारोह में उपस्थित सर्वश्री डी. कुमार, श्रीकरण शारदा, दत्तात्रेय वाव्ले, सुश्री मुक्ता भटजी आदि, प्रतिष्ठित अतिथि श्रोता

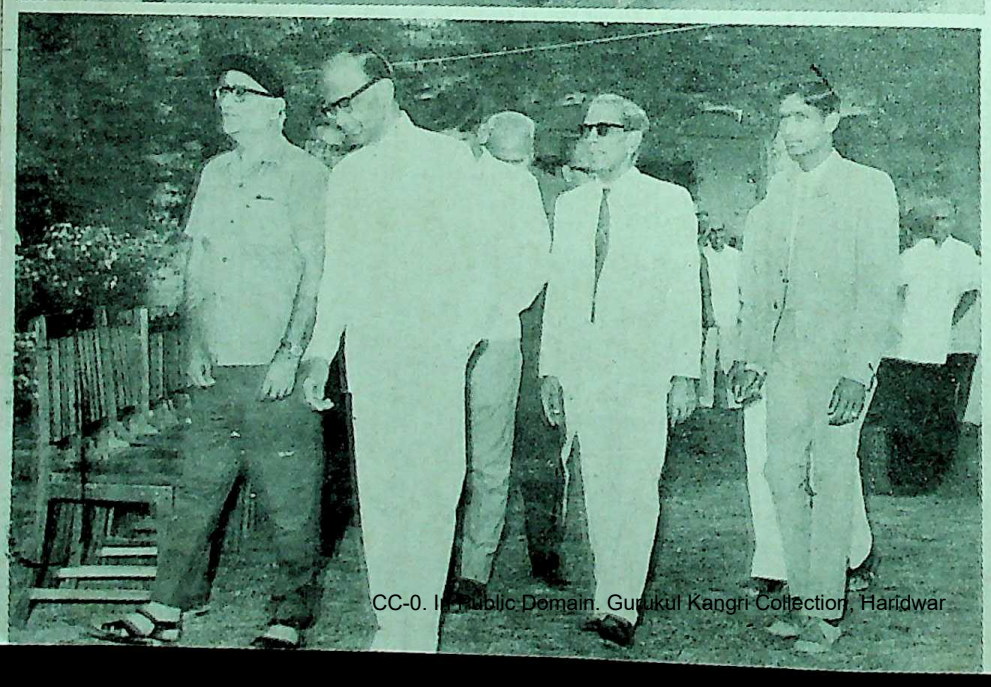

कॉलेज उद्यान में मुख्य अतिथि श्री जी. बी. के. हूजा, (अध्यक्ष राजस्व मंडल), भू. पू. प्राचार्य वाव्ले, प्राचार्य कृष्णराव वाव्लें तथा छात्र-संघ मंत्री विष्णु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

भावी गौरव

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाएँ से दाएँ—

श्री सुरेन्द्र भाटिया कॅडेट कैप्टन
[एन. सी सी. जहाजरानी]

श्री जोएल ज़ोसफ़ कॅडेट कैप्टन
सर्वश्रेष्ठ कॅडेट, [5th Raj. Arty. Bty. 1971-72]

श्री नवल किशोर कॅडेट कैप्टन
[एन. सी. सी. जहाजरानी]

श्री प्रेम कुमार जैन कॅडेट कैप्टन
[एन. सी. सी. आर्मी]

श्री जहूर बक्ष कॅडेट कैप्टन
[एन. सी. सी. आर्मी]

श्री अम्बालाल यादव कॅडेट कैप्टन
[एन. सी. सी. आर्मी]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

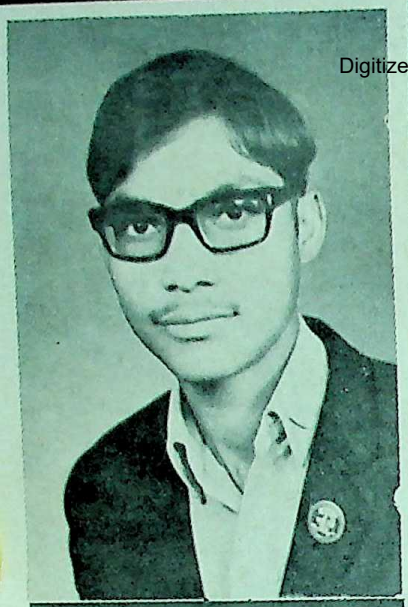

बाएँ से दाएँ—

श्री मोहनसिंह तृतीय वर्ष (कृषि) [जनरल कप्तान, एवं राजस्थान विश्वविद्यालय के हॉकी तथा फुटबाल दल के 'कलर' प्राप्त सदस्य]

श्री आनन्द सिंह भाकर
[अध्यक्ष, छात्र-संघ]

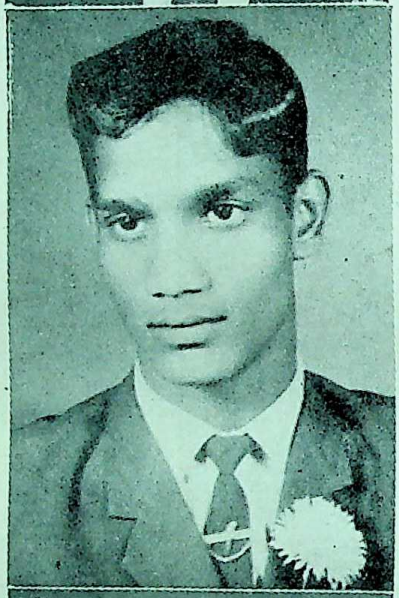

श्री सुरेन्द्र कुमार गोयल तृतीय वर्ष (कृषि) [कप्तान तैराकीदल तथा राजस्थान विश्वविद्यालय तैराकी दल के 'कलर' प्राप्त सदस्य]

श्री विष्णुकान्त खंडेलवाल
[मंत्री, छात्र-संघ]

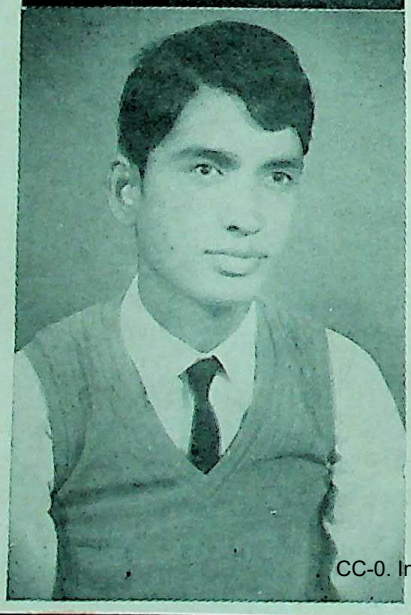

श्री कैलाश चन्द्र शर्मा प्रथम वर्ष (कृषि) [राजस्थान विश्वविद्यालय तैराकी दल के 'कलर' प्राप्त सदस्य]

श्री दिनेश कुमार शर्मा द्वितीय वर्ष (विज्ञान) [जिसने राजस्थान विश्वविद्यालय की प्रथम वर्ष विज्ञान (गणित) की परीक्षा १९७१ में 75% अंक प्राप्त किए]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रतिभाशाली छात्र

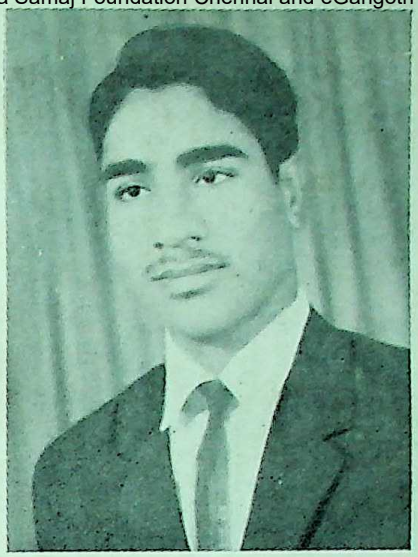

श्री मिलापचन्द पोरवाल ने बोर्ड व विश्वविद्यालय की समस्त परीक्षाएँ प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण कीं. एम ए. भूगोल की १९७१ की परीक्षा में सर्व प्रथम रहे संप्रति राजकीय महाविद्यालय गंगानगर के स्नातकोत्तर भूगोल विभाग में प्राध्यापक.

श्री नरूला ने सत्र 1970-71 में एम. ए. समाज शास्त्र परीक्षा में प्रथम श्रेणी में प्रथम स्थान प्राप्त कर राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर का स्वर्ण पदक प्राप्त किया।

श्री राजीव गर्ग द्वितीय वर्ष (विज्ञान) ने दयानन्द कॉलेज की खेलकूद प्रतियोगिता में सर्वाधिक अंक प्राप्त कर सर्वोच्च स्थान प्राप्त किया.

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

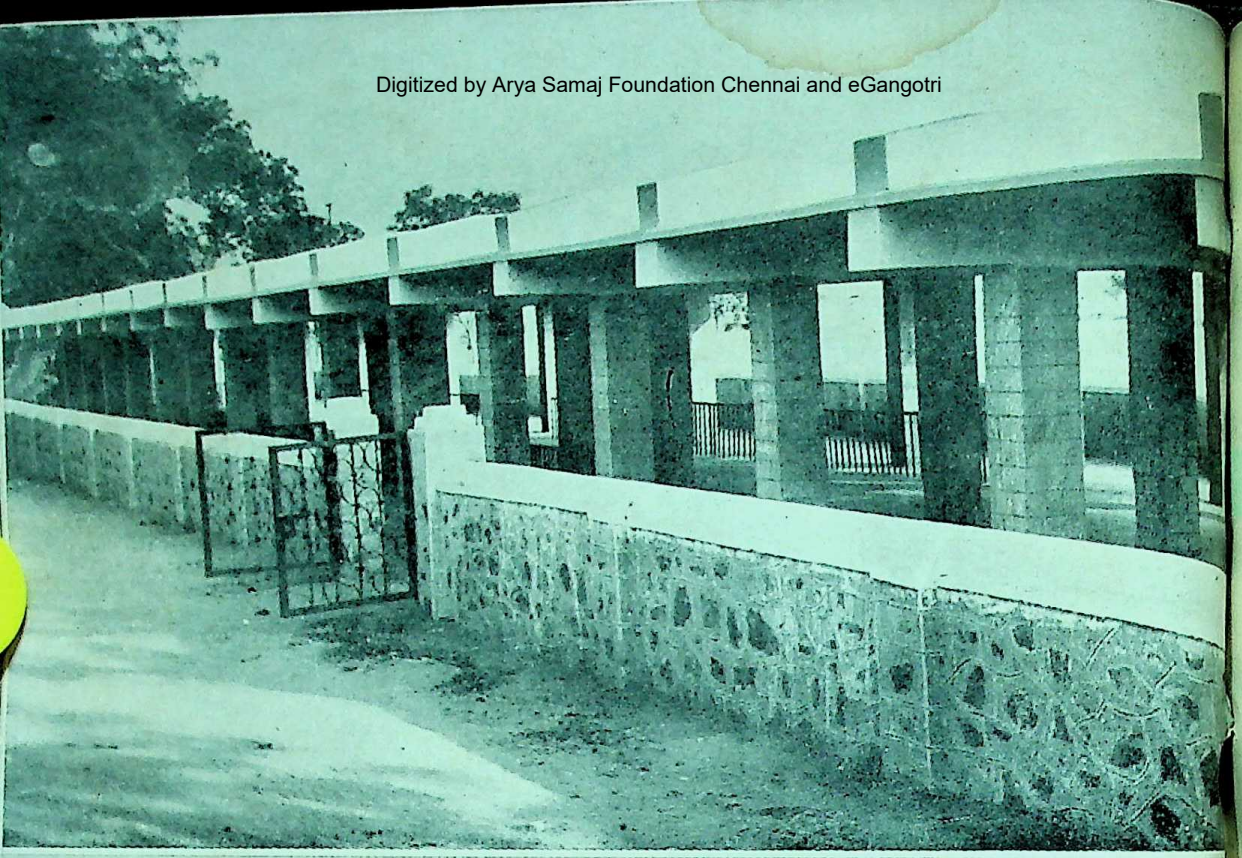

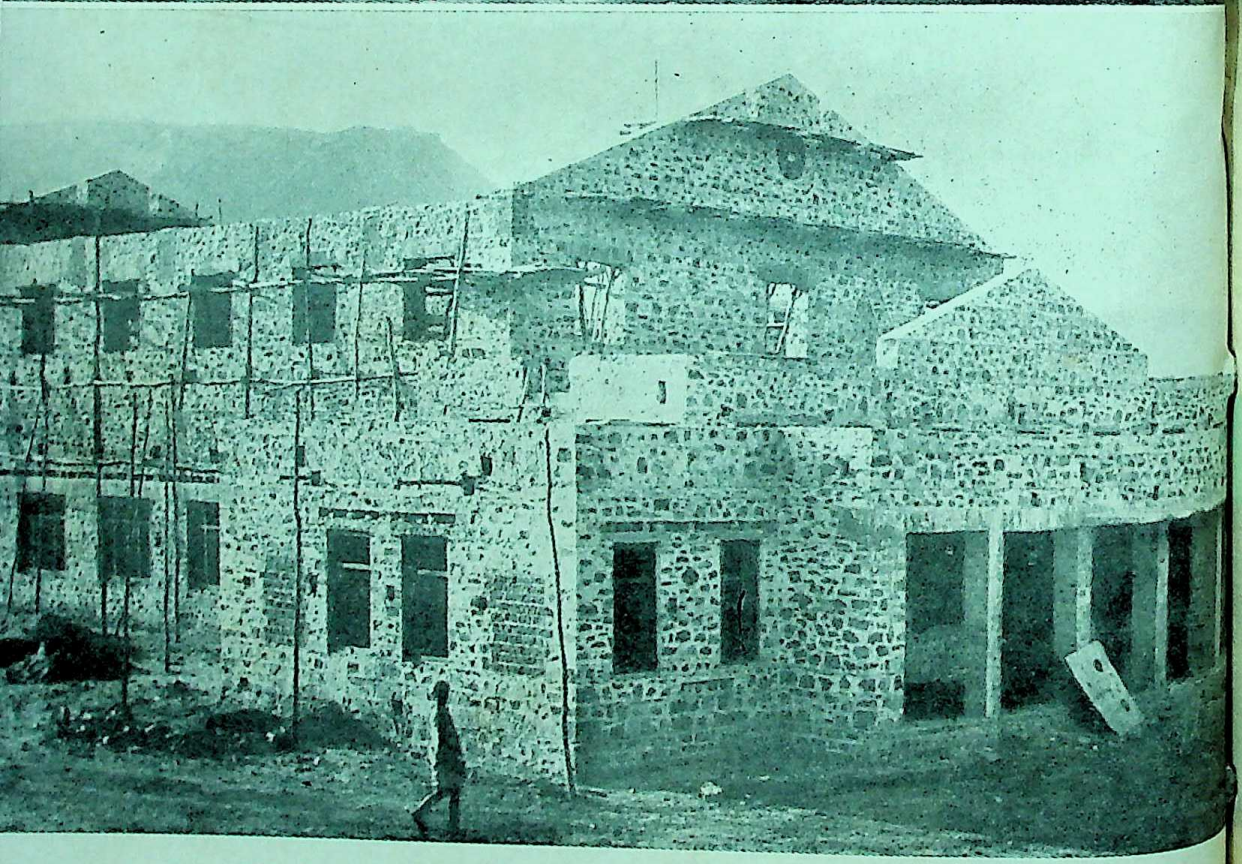

प्रगति के नए चरण : दो भवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

ऊपर : नवनिर्मित 'साइकिल शेड' जिसमें आठ सौ साइकिलें रखी जा सकती हैं.

76295

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ENGLISH SECTION

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

In way of an Editorial

M. K. Marwah

The case for Indian English as distinct from British English needs to be seriously considered. We know there are today Canadian English, Australian English and American English, all different from British English. If there can be Canadian English, Australian English and American English, why shouldn't there he an Indian English, different from British English, conforming to the genius of the soil on which it is used ?

Any living language is influenced and conditioned in its syntax and enunciation by the people who use it, who in turn are influenced by their socio-enonomic and geo-political environments. That is why Canadian French is different from Parisian French and Canadian English different from Queen's English. So this argument leads us to the apparent conclusion that Indian English will be different from British English because the socio-economic and geopolitical environments of the Indians are different from those of the British. But this conclusion is misleading.

Why do we use English in India ? Do we use it for the same reasons that the Americans use it ? The Americans use it because most of them come of the English—speaking British stock. When they emigrated to the U. S. they brought the English language with them. Those people who emigrated from Europe and elsewhere had to speak English outside their homes because everybody else spoke English. As the socio-economic and geo-political conditions there were different from those in England, English spoken there developed a distinct national identity.

In India we have our own highly developed languages which we speak at home and outside. We have rich literatures which reflect our national aspirations and identity. We don't come

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

of the English-speaking stock and we learnt English for reasons which are no longer lvalid. But today we use the English language for purely utilitarian reasons. We need English not as a national language, but as a foreign language which should serve as a window to the world. If we want to learn what is happening in the world, what is being thought and done, we need foreign language. There has been an explosion of knowledge, and we need to keep abreast of the latest developments. Hence the need for foreign languages. For historical reasons we have spent vast human and material resources in learning English. So besides learning other foreign languages like French, Russian and Chinese, we have to learn English.

Since we have no use for the English language as a national language, and use it as a foreign language, it follows that the English we use must be internationally understood. For use amongst ourselves our own languages are sufficient. If we can't use English so as to be internationally understood, we will be defeating the purpose of learning a foreign language. It appears we have already reached the limits of intelligibility. In late fifties an English-speaking delegation visiting India were taken to the Visitors Gallery in the Lok Sabha. When Prime Minister Nehru intervened in a debate, they delightedly remarked, "Ah, the Prime Minister uses English in the House." It had to be explained to them that all other speeches they had listened to were also in English.

How is it that English spoken in India has fallen below the level of international intelliglbility ? The written English despite peculiar Indian mistakes is easily understood. When we give benefit of doubt, take up cndgels for, go to dogs, are on the defensive, add fuel to fire, or give an advice, talk about a cant, cannot stand a competition, give a serious consideration, or extend our halping hand, earn our honest living, it is not hard for the English speaking people to undesstand what we wish to convey. But when most of us speak an English sentence, we are not understood at all. What is the reason ?

The reason is not far to seek. Learning of a language, ones own or foreign, consists in acquiring four basic skills, namely, understanding, talking, reading and writing. The

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

natural way of learning a language is to aequire these four skills in the order given above. To deviate from this order is to place hurdles in the way of effective learning of a language. A language is essentially something spoken, so speaking skill must precede reading and writing skills. Teachers concentrate their efforts on teaching the written word before teaching the spoken word. This change in the priority of skills results in bad though intelligible written English but totally unintelligible spoken English.

Most Indian teachers of English appear to be ignorant of the fact:that some of the sounds they make in the class-room have no similarity to the sounds they are expected to make. The difficulty is that in English there are many more vowel-sounds than we have in our own languages and some of the consonantal sounds in English too have no exact equivalents in our languages. So the teacher makes do with the nearest sounds available in his own language and consequently, the word spoken by him bears no similarity to the word spoken by a native speaker.

It is interesting to note how different people speaking diff erent languages speak the English language. Let us see how a Punjabi speaking person speaks English. Owing to the influence of the Punjabi language he has some difficulty in speaking such words as have two initial consonantal sounds, e. g., school, station, stick. He slips in a vowel sound between the two consonantal sounds and the words become 'suchool', 'sutation' and 'sutick'. The influence of the Punjabi language makes the pronunciation of such words as hall, mall atrocious. The Hindi—speaking person also finds it difficult to speak a word with two initial consonantal sounds. He solves the difficulty with a glide vowel, so school, station and stick become 'ischool', 'istation' and 'istick'. His pronunciation of words like 'plan', 'grievance' is atrocious. In Rajasthan people make no difference between short vowel sound and long vowel sound; so the differnece between 'ship' and 'sheep' is eliminated. The glide vowel is used very extensively in South India. There, people find it difficult to pronounce l, m, n initially. For them these sounds are 'yel'; 'yem' and 'yen'; cousequently, such words as 'elegant' 'eminent' and 'entice'. become 'yelegent,' 'yeminent' and 'yentice'. The confusion of short vowel sound and long vowel sound is wide—spread among Bengali—speaking

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

people also. They make no distinction between 'bird' and 'bard' nor between 'heard' and 'hard'.

Those who speak of Indian English in fact speak of Punjabi English, Hindi English, Bengali English and so on. Punjabi English is not exactly intelligible to people professing Tamil English, nor Hindi English to people professing Bengali English. Of course, none of these brands of English reaches the level of international intelligibility. So, what is the use of these types of English at all ?

We need English primarily as a window to the world. We need English to communicate with the English—speaking communities. So, the English we use must reach the level of international intelligibility. This is not to suggest that we in India should try to acquire the Oxonian accent or Harvard accent. It is neither practicable nor desirable. The Indian speaker of English who strains himself to speak English in an Oxonian accent cuts a sorry figure. His self-conscious servility makes him ridiculous. There is no reason why Indian speakers of English should not sound like Indians. Indians will speak with an Indian accent, but care must be taken that what they speak is understood not only in *whole India* but is internationally acceptable and intelligible also.

How can we bring about this very desirable situation ?

First, we need to have an authority of reference. We must adopt the English used by the All India Radio as the norm.

It is hoped when this position of responsibillty is given to the A. I. R., it will look about itself and take energetic steps to improve its services. Some of the present news readers in English and script writers will be sent home or given jobs more suited to their talents. The A. I. R. will strengthen their services to teach the English language and will function as an authority of reference to people in different parts of the country.

Second, as English is not an Indian language, specially trained teachers in English phonetics should be appointed to teach English as a foreign language. School syllabii should be revised to ensure that the English language is learnt in the natural manner. Speaking skill should have priority over the reading and writing skills; oral drills should precede reading and writing. English should be taught as a foreign language in a scientific manner. Very useful work is being done in this direction by the Central Institutes of English at Hydrahad and various institutes in States. This work must be taken in hand in all earnest by Teachers Training Colleges also.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

The Element of Solitude in Wodsworth's Poetry

M. S. Rikhy

Wordsworth has been called a worshipper of Nature, a philosopher of human mind and a child of Revolution. This great Romantic poet of the 19th century, a contemporary of Coleridge, affected by Rouseau's philosophy was deep in love with liberty, equality and fraternity. In most of his poems there is an element of solitude which he liked and preserved. De Quincy says that Wordsworth's attachment to Natune grew out of solitude and the character of his mind. Nature, the manifestation of God, esatblished a communion in solitude and there rose a harmonious imagery in his mind's eye. He could feel a joy divine in the various beauteous forms of Nature. The sounding cataracts, murmuring rivers, shimmering lakes were a joy to him but the element of stillness is there and one finds his emotions recollected in tranquillity.

Even in his early poems like 'Daffodils' he wanders lonely as a cloud over hills and dales and feels immense pleasure in the company of the dancing daffodils beside the lake. In 'The Solitary Reaper' he beholds a lonely Highland lass reaping and singing by herself in the field. He has the integrity of his imagination and single-minded devotion in delineating the impact of Nature on human mind. His imagery is lively for imagination is the essence of highest intellectual activity. The daffodils out did the dance of the sparkling waves and the melodious strain of the reaper surpassed the sweet songs of the nightingale. Such scenes providing spiritual wealth still flash upon his inward eye and that he says 'is the bliss of solitude; 'Lucy' is altogether a poem of solitude. He felt a presence that disturbed him with joy and elevated thoughts. Michael the shepherd, Leechgatherer in 'Resolution and Independence' and the Waggoner are solitary figures.

Even in his philosophical poems like 'Tintern Abbey', 'Ode on Immortality' and later in 'The Prelude', an autobiographical poem, one comes across the grandeur of solitude. 'The Prelude' revealing his mind's growth shows his persistent love for solitude. He speaks of solitary hills and goes to the small island where survive in solitude the ruins of a shrine. When in France during the Revolution he thinks of the officer and says 'Often in solitude with him did I discourse about the end of civil government...' Wordsworh thinks of Spenser and Milton and says, 'Far better had it been to exalt the mind by solitary study.' He would like to sit within some solitary wood and brood over the silence of the starry sky. His poetic imagination is creative and spontaneous. He would like to steal along the silent road under the dark blue vault and

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

feel the mysterious power in that peace and solitude. The desolute moor or the solitary figure of the Leechgatherer or solitary shores of Grasmere remain fresh in the memory of the readers and he could drink visionary power and give philosophic thoughts in the environment of solitude. Really the poet had a great love for loneliness because he was taught to feel perhaps too much the self-sufficing power of solitude. Wordsworth wanted to be silent and to be alone and in seclusion in some natural surroundings. What a sublime thought he gives !

We are laid asleep
In body and become a living soul.
Dust as we are, the immortal spirit grows
Like harmony in music!

□□

A beautiful woman should break her Mirror early.

—**Gracian**

Good nature will always supply the absence of beauty but beauty cannot long supply the absence of good manners.

—**Unknown**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Guru Gobind Singh : A National Hero

Amarvir Singh Ghuman

Thomas Carlyle, an eminent Victorian thinker, conceived of a hero as a divine being, a poet, a preacher, a literary man and a king. According to his conception, Guru Gobind Singh is a hero par excellence, because he fulfils all these roles magnificently.

As a young prince he practised the art of swordmanship, archery and hunting. Then as a great general, he was always ahead of his soldiers ready to bear the brunt of the attack. Again, he was an excellent poet, whose poetry has contiuned to infuse vigour in people.

As for his divine mission Guru Gobind Singh himself explains the purpose of his life in his autobiography, 'Bichitra Natak,' thus,

"For this purpose was I borne, understand all ye pious people; to uphold righteousness, to uplift the good, to destroy all evildoers, root and branch."

Few have been cases in the annals of history where a person has sacrificed his all—his father, his mother, sons and thousands of beloved followers who were dearer to him than his own children. As a mere child of nine, he voluntarily courted orphanhood by sacrificing his father. This fact alone has no parallel in the history of mankind.

The great Guru came in a period of darkness and despair, when India was hopelessly divided by feuds of religion and caste. On top of all, she was being ground under the heel of tyranny. Aurangzeb, the bigoted Mughal ruler, thought he could winHeaven by spreading Islam and that too throngh forcible conversion. The objective that the Guru aimed at was, therefore, great and laudable. It was the emancipation of his nation from oppression and persecution and the means he adopted were such as a comprehensive mind alone could have suggested.

His creation of a new society where 'Bhakti and 'Shakti' have been blended together, is also unique. His dramatic show of an unsheathed sword and demanding heads from the gathered congregation was a complete depearture from the previons cult of baptism.

The story of how five common men went forward and how the Guru administered baptism to them is too well known to be told here. The point that needs special mention is that having bestowed upon such dedicated souls the uniqne gift of 'Amrit' (divine water) the Guru himself knelt before these chosen ones and received the same divine boon. Such was his humility. It is difficult to find another instance of the foundation of a society under

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

such trials and difficulties; the society founded on the principles of liberty, equality and fraterinty, which broke forever all caste prejudices.

Guru Gobind Singh was no ordinary warrior. He did not wage war against any sect or religion. In fact Pir Budhashah, the Muslim divine, sacrificed all his four sons for the Guru. Guruji sang repeatedly in his Bani:

"That mosque and temples were the same, that the Hindus and the Muslims and in fact, men of all denominations were the sons of one Heavenly Father and as such brothers; and that their salvation lay in love, amity and concord".

His war was against tyranny and not for the purporse of establishing a worldly kingdom. Such was the impact of his dynamie personality that sparrows were emboldened to swoop down upon hawks and the mute masses were trans formed into lions whose roars shook the very skies.

Undoubtedly, Guruji accupies a shining place in the galaxy of heroes. Three centuries have passed since he wrought the wonder of his life. A brother of the poor and persecuted, he became a symbol of strength and hope to the down-trodden. He is really the greatest national hero India has ever known.

□ □

THE RAPE OF BANGLA DESH

The genocide, I was to find out, was the "cleansing process" the military regime intended as a solution of the political problem. Hand in hand with it would go an equally brutal colonisation of the province.

"We are determined to cleanse East Pakistan once and for all of the threat of secession, even if it means killing off two million people and ruling the province as a colony for 30 years", I was bluntly told in the 16 Division Headquarters at Comilla.

This was the military regime's "final solution" of the East Bengal problem. Not since Hitler has there been anything so diabolical.

—Anthony Mascarenhas

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

BATTLE OF SIDI REZEGH

Shrikant

War-tactics and means have always been changing and advancing since the first mention of battle in history. A great achievement in war-means is the invention of battle-tanks. Tanks were used by the Germans, for the first time, in the World-War I. Since then, they have played a major role in attack as well as defence in battles. In the recent Indo-Pak War, three historic tank battles were fought at Longewala, Shakargarh and Bagantar. These battles played a lion's part in our victory over Pakistan. It will be very interesting to deseribe a tank battle which became the turning point of the North-African field in Second World War and aquired victory for the allied Forces-the Battle of Sidi Rezegh.

In the first half of the year '41, Rommel, the most publicised of all German generals, had achieved success after success with his famous Panzar-Tank Divisions. He had occupied the left-half of the North-African front, besieged Tobruk and cut the communication-line between Tobruk and Alexandria at Halfaya Pass and Fort Capuzzo. Gen. Wavell of allied forces was a failure in Africa and he exchanged his post with Gen. Auchinleck, G.O.C. of British forces in India. Allied Forces in Africa were renamed The Eighth Army to fight against German and Italin Desert Corps.

All the land supplies to Toburk garrison were cut off and it was difficult for Navy and Air Force to restore them. Gen. Auchinleck gave the task of neutralizing the enemy siege to Lt. Gen. Cunningham. The allied forces had 30th and 13th British armoured divisions, one Newzealanders and one Australian fighting division, one S. African Brigade, one Indian Armoured division plus several other British troops and two other Armoured divisions. The S. African Brigade and Indian Armoured Division were placed south of Sidi Barani to prevent the Germans from attacking Alexandria. Newzealanders were placed at Gambut. All plans were made, the operation was named 'Crusader' and it was decided to advance towards Tobruk from the south-east on 18th November. Rommel's power consisted of 5th Light and two other Panzar Divisions, some other independent Armoured Brigades, Italian motorised Divisions and their 21st Corps, 90th Light Division plus other infantry units. With all preparations, the Eighth Army attacked on 18 November with initial success. For the first four days the 30th and 13th divisions fought brilliantly. But the trouble followed at Sidi Rezegh and the Panzers proved superior.

There, for the first time since 18th. the allied forces met with heavy losses inflicted by Panzers with 7th Armoured and 1st S. African division stampeding in all directions. The 30th corps was throwh in complete disorder Gen. Cunningham wanted to retire to

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Egypt. But fortunately Churchill arrived at the A. H. Q. on 24th. replaced Cunningham with Gen. Ritchie and ordered the continuation of the offensive. This was certainly one of the great dicisions of the war.

The battle-field of Sidi Rezegh and around was in chaos. For a few days, each side struggled for the advantage in confused fighting. Auchinleck was convinced that the German Armour was hit in the same number as the British and the Germans were always inferior in numbers. The only thing was that the Germans had some clean effective guns which they had converted from 88 mm. Anti-aircraft to Ati-Tank Guns.

So the attack was continued, the position of the African corps gradually became so bad that Rommel put himself at the head of the 21st Panzar and drove into the forward line with his staff. Allied dispatch-riders, British Auchinleck tanks and American-built trucks were moving around his truck but none of them had any suspicion that the hightest officers of the Panzar Group were sitting in a captured command vehicle.

On 27th November the 19th Newzealander battalion got success in linking up with the Tobruk garrison, taking the support of the Valentine tanks of 44th Royal Tank Regiment from the Gambut-line. The dog-fight round Sidi Rezegh ended with the Eighth Army on top and Rommel ordered a general withdrawl.

Tobruk was relieved and remained in the charge of Allied Froces. It was the center of the African battle-field and an important fort Secondly, Hitler's plan to capture Egypt and Suez canal and to cut the life-line to the United kingdom was defeated. This had a great effect on Hitler's general war-plans.

□□

Learning without thought is labour lost, thought without learning perllons.

—Confucius

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Every man is the architect of his own luck

Kailash Sharma
II Yr. Arts

"I am the master of my fate, I am the captain of my soul—Henley. There is a destiny that shapes our ends. Rough hew them how we will."

—**Shakespeare**

Every body is familiar with the belief in fate or predestination. Indeed, at every failure a man cries out "This was fated to be". This is exactly what Shakespeare says above. But people have grasped only half the truth, and half-truths are most dangerous. The Hindu Philosophy says that while man's present birth is predestined or fixed beforehand according to his previous life, he has the free will to make or mar his future. So the future is in the hands of man himself. He is the master of his own fate and he is the captain of his own soul. Success or failure in life can be ascribed to the good or bad deeds of man himself. He himself makes his fortune but calls it fate or luck.

It is foolish to look up to others for help or recommendation. Even God is reluctant to help him who sits with folded hands. 'God helps those who help themselves'' One should put one's own shoulder to the wheel, and then Hercules is sure to lend a helping hand. Courage, patience, perseverance and determination bring success, otherwise the end is failure. So it is not destiny but one's own honest efforts that shape one's end. It is foolish to bewail one's unhappy fate.

Sometimes it is said that inspite of the best efforts one is unable to achieve success in life. In such a man's case it may be assesrted that there is something wrong in his methods of working out his fortunes. By the naked eye the fault may pass unnoticed, still the fault is there and it proves a stumbling block to him. So some weakness in the man himself, should not be mistaken for the evil influence of some stars.

Says Kipling:—

From beginning to end,—
My very worst friend,
By the blood of a mouse, was myself;.

Here then is the real cause of failure—the man himself and none other. At first sight some piece of work might frighten one away. But where there is a will there is a way and so nothing is impossible for one who has the will to do it. Opportunities do not always come, and it is but proper to make the best use of them when they do. On this depends success or failure. Anyway every one is the architect of his own fate—good or bad.

□□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Colour and Structures of Organic Molecule

Madhu S. Mathur, II Year Sc. Maths

Colour :

When a white light, which consists of seven colours, falls on a substance, the light may be totally reflected or totally absorbed. When totally reflected, the substance appears white and when the substance absorbs whole of the fallen light, it appears black. If a portion of light is absorbed and the rest reflected, the substance has the colour of the reflected light. If only a single band is absorbed the substance has the complementry colour and if the substance absorbs all visible light except one band, which it reflects, the substance will have the colour of that reflected light (band). Thus a substance can appear blue, either because it absorbs all the visible light except blue, or because it absorbs the yellow portion of the spectrum only. The shades, however, may be different.

Appa rently, no dye gives shade by reflecting only one band of light but reflects some other bands also. So it gives complementry colour.

Relation between colour and constitution:

Many organic compounds are colourless. One isomer of a substance, having the same moleculer formula, may be coloured, while the other one may be colourless. This suggests that the phenemenon of colour exhibited by organic compounds is in some way closely related to the structure of the molecule possessed by any substance.

Many attempts have been made to formulate the laws, govering the relationship between colour and constitution. But so far it has not been possible to predict with precision from the structure of the organic molecule, whether the compound would be coloured or what the shades of the colour would be. Even then a careful study of the constitution of coloured organic compounds reveals a general relationship between the structure of the molecule and the appearance of the colour.

Theories :

Following theories have been proposed to embody the observed relationship existing between colour and constitution :

(A) Chemical Theories: i. Witt's Theory
ii. Armstrong's Quinoide Theory

(B) Physical Theories: i. Klartley's Theory
ii. Dutt's Theory

(A) Chemical Theories: Witt was the first man to point out the relationship between colour

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

and constitution in 1876. The essential features of this theory are:

I. Colour usually appears in an organic compound when that compound contains suitable combination of unsaturated groups, or to be more correct, groups with 'multiple bands'. Witt called these groups Chromophore. Some of the more important Chromophone are:

NO_2 (Nitro), $-N=N$, Azo, $C=S$ Thionyl. $VC=O$ Carbonyl $-NO$ (Nitrso) etc.

Chromophores may be dependent or independent. The dependent ones produce colour only in combination with themselves or with other chromophores, while the independent ones produce colour easily only by themselves.

II. The compounds which contain the chromophores are coloured, and are called chromogens.

III. Witt also pointed out that the presence of certain other groups in the chromogen deepen the colour, but they are not chromophores. These groups are called Auxochromes. the forming groups may be acedic or basic; the examples are as follows: $-NHR$, $-NR_2$, $-NH_2$, $-SO_3H$, etc.

IV. Radicales which bring about deepening of coloer are known as bathachrome groups and these which bring about the opposite effect are called hypsochromic groups. Deepening of colour means the change in colour as follows:

Yellow, > Orange, > Red, > Purple, > Violet, > Blue, > Green.

V. Increase in moleculer weight or in the number of founding deepens the colour.

VI. The production of colour is also conditioned by the closeness of the chromophores.

VII. A chromogen becomes a dye, when it contains in addition to the chromophores a second group i.e. an auxochromic, which being acedic or basie, enters directly or indirectly into reaction with fabrics.

Auxochromes also intensify the shades of the colour and make the compound to attach itself to the fabric in such a way that it is fast to light, soap and water.

This Witt's chromophores theory has been of greast use in giving guidance for the production of suitable shades by suitable modification & the structure of the dye molecule.

B. Armstrong's Quinoid Theory:

In 1885 Armstrong suggested that all colouring matters of known structure could generally be represented by a quinoide structure. Therefore if the quinoide structure is present the substance would be coloured and if absent, then culourless, Though this view was accepted quickly yet this was also shown that the quinoide formulae could not be given to some coloured compounds.

But it is important to note that the compounds contain conjugated (alternate) double bonds.

Armstrong's quinoide theory was very useful since it further worked on the problem of the relation ship between colour and constitution. As it has some limitations, it is said that presence of a mere quinoide structure is not sufficient to account for the colour but some other factors also play their part.

By cosidering the above theories it is quite clear that colour of the substence is releated to its structure i.e. consitution and the changes in the colour and shade might be brought about by making suitable changes in the structure of the compounds.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Social Work Approch to Public Health

Raghunatha Reddy, B. Sc. (Ag.) Final

Public health is concerned with the knowledge of body and creates the conditions conducive to good health. It aims at prevention and treatment of health problems. Public health requires mass approach and can be tackled only through organised public efforts.

Social Work Approach

Social work, as a profession, helps the people in individual, group and community setting, directly or indirectly, through an agency so as to enable the individual to make better personal, social and emotional adjustment. For this a social worker is to be equipped with specefic skills and professional code of conduct. The objectives of social work are as under :

1. Amelioration of the existing conditions causing ill health,
2. Prevention of social evils and promotion of socio-psychological conditions conducive to health of individuals.
3. The social worker may directly deal with individuals. He adopts different treatment measures to solve these problems and he has to keep in mind his limitations and his plan of action is determined accordingly.
4. He continuously endea vours to help enlighten public opinion combating prejudices through various formal and informal educational media.

Publice Halth Conditions in India

Insite of development in other fields India has a low standard of public health. Indians are ill-fed and under-nourished.

Data collected through national sample survey show that in rural areas about 73% of the houses are Kachha & about 2% Pucca, in urban areas they are 25% and 8% respectively. The rest are mixed type partialy Kachha and pertialy Pucca. Density per room in rural area comes to 2.4 & in urban areas 2.2; 47% of the house—holds in urban areas don't have tap facilities and 30% depend on wells, tanks & ponds.

It is the social worker's responsibility to concentrate on the health problems and to study the unhygeinic practices of the ecommunity. He is to educate the public on the importance of health and how certain factors are responsible for affecting their health. The social worker can play a significant part in the prevention of mental illness. The mental illness is the result of social stresses creating psycholgical complication and inner stresses creating social maladjutsments.

The family planning worker is also a vital link in the field of public health. He advocates different measures of birth control. Finally the social worker may be helpful in the developement of public health standards by conducting different researches. He may direct the attention of the community and the state to various health problems of the community and suggest different plans of action. Thus the social worker has a pivotal role in public health.

□□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

MATTER AND ANTIMATTER

A. P. Bais

In sipte of its being the only entity tangible enough to be felt by the crude senses,our ancient philosophers came to the conclusion, as a result of their wonderful capacities for clear, logiacal reasoning,that in the universe matter was unreal (an illusion, *maya*) and the real thing was something else which could not be perceived by our crdue senses and process of thinking. It was, indeed, remarkable that they should have come to this conclusion by pure meditation: clear, logical thinking in ideally peaceful natural surroundings after having freed themselves from worldly worries and cares as will as from any bodily ailments due to the 'vitiated' surroundings of the civilized world.

By a system of extremely fine experimental techniques, a system of consolidating the results; and by a process of deductive and inductive reasoning (followed by further waves of the same processes, *ad infinitum*) the twentieth century scientists have arrived at the same remarkable conclusion: that even the most solid pieces of matter are less than airy nothings: As you progress towards investigation of the ultimate structure of matter you are more and more baffled with the strange and contradictory conclusions your experimentation and reasoning lead you to. They are forced to say in the words of our ancient philosophers: matter is neither this, nor that, nor indeed the other thing: it is all these and none. As regards the 'ultimate nature', source and cause of the universe, both the ancient philosophers and modern scientists have reached the same conclusion by two different paths of investigation.

It is propsed here to trace briefly the scientist's version of this story so far as 'dead' matter is concened.

Let us begin with the gases (the 'airy nothings'). By confining these tenuous bodies in strong vessels with airtight tops capble of sliding up and down (pistons) scientists in the eighteenth and nineteenth centuries had studied how gases changed their volumes when their pressures were changed and when their temperatures were changed. The rates at which gases passed through porous partitions or through a tiny hole (e. i., they leaked out) were also studied during this period. The rules or laws of this behaviour of the gases were formulated and stated.

Useful as these rules of gaseous behaviour were in practical science, industry and manufacture,they also gave much food for thought to the thinkers amongst the scientists and by the time the nineteenth century drew to an end, these thinkers had come to the conclusion that gases behaved as if they were made up of

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

tiny invisible marbles of different weights (mass-ses, they preferred to call them) put having very small volumes compared to the volumes occupied by the gases. And these tiny pieces of 'marbles' were rushing madly about banging against one another and against the walls of the vessel containing the gas. Just what made them move about (or perhaps more relevently, what started them to move about) they could not guess, put the hotter the gas the faster the tiny balls appeared to move, as was evidenced by the increase in gas pressure with heating, when the tiny balls seemed to bang harder against the container walls giving a higher pressure.

These hypothetical tiny balls were called molecules (tiny masses). As any gas was cooled, its volume under a given pressure was seen to get less, and less, due apparently to the slower motion of the molecules, until, at a given temperature for each gas under a given pressure, the gas condensed to a liquid. This caused the bulk or volume of the gas to dwindle suddenly to the less than a thousandths of the volume of the gas just before, so that the gas originally filling the whole vessel is now reduced to a small volume presenting a surface. Since a liquid is much less compressible than a gas, it would appear that the madly moving molecules had came to almost touch each other in the liquid.

The molecules in a liquid, however, still appear to be moving and some of them, moving too fast to be held back in the body of the liquid, shoot off into the space above the liquid. that is why the space in vessel above a liquid always contains some vapour of the liquid. The bulk of the molecules remaining together in the body of a liquid in a vessel not quite filled to the top were pictured by the scientists to be held together by some attractive forces between them-- attractive forces similar to the gravitational attractive forces tending to attract all bodies in the universe towords one another. The molecules in a gas were imagined to be moving too fast for these attractive forces to hold two molecules together except very transiently.

The molecules in the body of the liquid were, however, pictured to be moving about freely (if more slowly, because the temperature was lower), becouse each is, on the average, attracted by those surrounding it equaly on all sides. As the liquid is cooled, the molecules move more and more slowly and tend to arrange themselves in patterns (due to the attractions between them), only to be kicked off by others banging against them. As cooling proceeds, however, a point comes at which the molecules are not moving fast enough to knock others out of patterns. At this point most of the molecules arrange themselves into geometrical patterns and the liquid freezes to a solid. If at this point cooling is done slowly, the pattern persists in large bulks of the solid and crystals are formed. In most cases, however, the cooling is too rapid for the formation of visible crystals. Microscopic crystals are, however, found in most solids, including even smooth, shining metals. Moreover, experiments can be performed to demonstrate the regular arrangement of the molecules in even those solids which show no microscopic crystals. One class of solids, the glasses, are found to have no regular arrangement of molecules.

In all solids the molecules are fixed in the body of the matter (whether in geometric patterns or not) but around this position, they can vibrate and this vibration becomes less and less energitic as the temperature is further lowered.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

The above is a rather detailed description of what the scientists thought happened as a piece of matter in the form of gas was slowly cooled so as to first condense to a solid. The molecules were thought to be so small that a single gram of any substance contained so many molecules that to write this number we must use no less than 24 digits (1 followed by 23 zeroes in the case of iron, for example). It was this very large number and very small size of the molecules which gave matter in bulk its properties, some of which we have described above.

The above changes in matter (gas to liquid and liquid to solid) are called physical changes. When a gas changes to a liquid or a liquid to a solid, the molecules themselves remain unchanged. What changes is only their relative average distances and arrangements in space. Another class of changes matter undergoes are called chemical changes. Here two or more forms of elementary matter combine to form a new kind of matter, or some kind of matter breaks down into two or more forms of elementary or simpler kind of matter.

At about the time when physicists were experimenting with and thinking over the results of physical changes, chemists were studying and trying to find out the rules or laws according to which chemical changes took place. Thinking over these laws, they were led to the conclusion that substances were made up of minute indivisible particles which remained unchanged during these chemical changes. Because of their indivisibility, they were given the name of atoms (meanting 'which cannot be cut') and further experimentation and thinking led to the conclusion that these were not the particles of mater found in the free state (the molecules inferred from the study of gases) but were constituents of molecules. Most of the molecules were made up of two or more atoms, either of the same kind (as in elementary substances—elements) or of two or more different kinds (in substances formed from combination of two or more elements—compounds).

It thus appeared that substances were made up of constantly moving or vibrating molecules and that these molecules were themselves made up of smaller indivisible particles, the atoms, there being as many different and unrelated kinds of atoms as there were elements. Further investigations showed that all substances were made up of some 90 kinds of elements, either singly or in combination. Thus there should be about 90 kinds of atoms.

At first it was assumed that the atoms of the different elements were entirely different entities. But this view had soon to be changed. A careful tabulation and comparison of the behaviour and properties of the elements revealed a wonderful regularity in their properties. While it was difficult to calculate the *actual* weights of the atoms, methods were soon devised to find their *relative* weights. The element hydrogen was found to have the lightest of atoms and the weightes of all the others were compared with it. The number of times the atom of an element is heavier than one atom of hydrogen is called its atomic weight. It was found that if the elements are arranged in the order of increasing atomic weights, their properties are periodically repeated. Thus, leaving out hydrogen itself (whose properties seem to be not too much like those of any other element), the properties repeat themselves after the eighth (in the order of atomic weights) element. The nineth element has properties like those of the first (after hydrogen), those of the tenth

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

element like those of the second. and so no. The same kind of regularity is repeated after the sixteenth element: the seventeenth having properties like the nineth and the first, and so on. This is expressed by saying that we have at first two *periods* of eight elements each. The next two periods are of eighteen elements and the next two of 32 elements each.

This periodic regularity in the properties of the elements was discovered by Newland in England and by Mendeleef in Russia a after the middle of the nineteenth century. Mendeleef arranged the elements in the form of a table with horizontal rows the lengths of the periods and writing elements with similar properties in vertical columns. The rows consisted of two (to include hydrogen with the next heavier atom, helium) eight, eight, eighteen, eighteen and thirty two elements. The remaining six of the naturally occurring 92 elements were placed in the last row as part of an incomplete period of presumably thirty two elements. The arrangement described above in its later more complete from is know as the periodic table and is standard reference for all chemists even today.

In Mendeleef's original periodic table there were many gaps many of the elements had not then been discovered and it goes to the credit of the great chemist that with painstaking experimentation based on reasoning on the basis of the periodic table itself the gaps were slowly filled in to almost completion as each of these missing elements was purified and its properties studied and tabulated. And more fantastically, as secrets of the structure of the atom, originally thought to be indivisible, were revealed, the periodic table was extended beyond Elements No. 92 by artificially preparing new elements not found in nature, until today the last row has 20 elements, requiring only twelve more to complete this period. Also, the only remaining two gaps in the earlier part of the table were also filled with artificially made elements.

Let us now review the situation as it stood as the nineteenth century passed into the twentieth. It was surmised that all gases were made up of tiny madly moving molecules which on cooling condensed to liquids and finally solids. Since for each kind of substance there was a particular temperature at which it changed from gas to liquid and from liquid to solid, at any given temperature some substances were gases, others liquids and still others solids. The molecules themselves were made up of two or more (sometimes only one) still smaller particles, the atoms, and there were a limited kind of atoms one for each of the 92 elements (the rest of the 105 elements now known were later creations). Since the elements themselves could be arranged according to their properties in a compact periodic table with columns of up to seven elements with similar properties while the elements got themselves arranged according to their atomic weights, it was but natural to think that the atoms must have structure—they must be made up of still smaller parts. This idea, however, took time in taking root because the ancients as well as the great chemist John Dalton (who has been called the father of modern chemistry) had both declared that atoms were indivisible—that they were created independenly of each other, right at the start. Even Mendeleef refused to explain the regularity in the properties of the elements as seen in his periodic table. The experimental evidence was all there, but furthor theoretical advance took several decaedes (from the time Mendeleef published his periodic table.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

76295
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

What was required was the discovery of a material particle smaller than the smallest of atoms : the hydrogen atom. This was discovered in gases through which an electric discharge was passed. Gases ordinarily do not allow an electric current to pass through them the way metallic bodies do. However, if a gas is enclosed in a tight vessel and then most of the gas is drawn off by means of a suction pump, the remaining gas at a certain low pressure begins to conduct electricity. This discharge of electricity is accompanied by a glow when the gas strikes the glass walls of the containing vessel, although (at this pressure) nothing is seen in-between. Since the glow seemed to be caused by some invisible rays starting from the negative electrode (cathode) in the sealed glass globe containing the gas, the rays were called cathode rays. Further experiments revealed that the rays were actually particies with a negative electric charge with a mass only about 1/2000 the mass of the hydrogen atom. And no matter what gas was present in the glass tube or what the electrodes were made of, the same particles were always produced. These particles were called electrons (because they were electrically charged). Thus was found one of the constituents of matter—present in all matter (all kinds of atoms) and much lighter than the lightest of atoms—hydrogen.

Since the atom as a whole must be electrically neutral (all matter in the ordinary state was neutral) there must also be a positively charged component. Just as the electrons were found to be shooting out of the cathode in the exhausted gas tubes (discharge tubes), it was natural to imagine that the positively charged components of the atoms may be coming out of the anode (the positive electrode). No glow was however found on the wall of the tube opposite the anode. May be, the rays struck the cathode just opposite the anode and so could not be detected. To remedy this the cathode was perforated (holes were drilled into it) and the tube extended more behind the cathode. Sure enough, positively charged rays were found behind the cathode. These were called positive rays or canal rays the latter because they were found behind the channels (German 'Kanal'). A study of these revealed that they were made up of particles almost equal in mass to the mass of the atoms in the gas. The charge on these positive particles, however was the same in magnitude but opposite in sign (positive) to that on an electron, or exactly two or three times this. It was thus obvious that these positive particles were formed by stripping an atom of one or more electrons (which formed the cathode rays already discovered and studied).

The atom itself was thus made up of negatively charged electrons and a positively charged part, the magnitudes of both the charges being equal. The positively charged part thus has almost all the weight (or mass, as the scientists prefer to call it) of the atom. The atom with the smallest mass is that of hydrogen. The positively charged massive part of the hydrogen atom was called the proton (from a Greek word meaning 'first' or smallest) and the massive parts of the heavier atoms were assumed to be made up of a number of protons making up the heavier mass. One proton was assumed to have the same magnitude of charge as the electron but of opposite kind, and since opposite charges attracted each other, the protons attracted the electrons causing the formation of the atom.

As the electrons could easily be obtained from almost any kind of gaseous matter in the discharge tubes, they were assumed to maintain their identity in the atom. The proton

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

could, however, be obtained only from the hydrogen atoms, so it was assumed that protons lost their identity within the atoms. Presumably a number of them fused together in the atom. Since the atom as a whole was electrically neutral, the number of electrons and protons in an atom were equal.

If the above reasoning is correct, the number of protons in an atom must be equal to the atomic weight of the element. With progress of science, it soon became possible to estimate this number. The results gave a surprise, however. Except for hydrogen, the lightest of the elements, all the other atoms had only about half, or even fewer, protons than required by the atomic weights. Since the electrons contributed a negligible mass to the atom, the problem was, where did the rest of the mass come from ? The oxygen atom, for instance, had only eight protons (and eight electrons), but its atomic weight was 16. To account for the extra weight, a new kind of fundamental paritcle' (as the parts of atoms came to be called) was invented-the "neutron." As the name implied, the neutron was assumed to be an electrically neutral particle. Its mass was assumed to be same as that of the proton. It goes to the credit of the fertile imagination of the scientists that several years later the neutron was actually indentified in the laboratory, again with the help of the discharge of electricity through rarefied gases.

The picture that thus emerged showed the atom to consist of a number of (negatively charged) electrons and an equal number of (positively charged) protons together with a number of (neutral) neutrons just enough to make up the atomic weight of the atom. Thus oxygen, with its eight electrons and eight protons was assumed to have eight neutrons to make up the atomic weight of oxygen (16).

As already mentioned, all the elements can be arranged into a neat periodic table in which they are arranged essentially in the order of their atomic weights in horizontal rows two, eight, eight, eighteen, eighteen, thirty-two and 20 of the remaining thirty-two elements, each, respectively. The vertical columns thus formed have elements with similar properties in them. The serial number of an element in the periodic table is called its atomic number. When it became possible to estimate the number of electrons and protons in an element, it was discoverd that the number of protons (or electrons) was equal to the atomic number of the element. Thus the first ten elements in the periodic table, each, had one, two, three, four, five, six, seven, eight, nine and ten electrons, respectively, and so on down the table. Oxygen is No. 8 and it has 8 electrons and 8 protons.

The neutrons, like the protons, were also assumed to lose their indentity inside atoms, because they too could not be easily isolated from atoms.

The next problem to settle was, what kept the three kinds of fundamental particles together in the atom ? According to the laws of electrically charged bodies, like charges repel one another and unlike charges attract, so that two electrons would repel each other and so would two protons, but an electron would attract a protons. In the atom, something had to keep the electrons from falling into the protons and at the same time bring a number of protons together so that they lost their individual indentities. Also a number of electrons must remain in a small space together and maintain their indentities.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Between the period of 1911 and 1915, three scientists, Ernest Rutherford of England, Niels Bohr of Denmark and A. Sommerfeld of Germany, after carefully studying the properties of matter, performing experiments and then using their creative imaginations, pieced together a model (imagined structure) for the atom. According to this Bohr-Sommerfeld model of the atom, in the centre of the atom there is a small positively charged nucleus made up of a number of protons (equal to the atomic number of the element) and neutrons (enough to make up the atomic weight). The material of the nucleus must be very dense, indeed, as it has in its small volume all the mass of the atom. The electrons were pictured as *rotating* round the nucleus, somewhat like the planets around the sun, and at comparable distances, size for size. While the sizes of the orbits of the planets around the sun do not appear to follow any rules or laws, the electons can orbit only in predetermined, mathematically calculable distances. Given the number of electrons in an atom, you can precisely predict the paths along which each of them is going to orbit in the ground (unexcited) state of the atom. In an excited state (i. e., on heating strongly to vaporize the substance), the electrons jump into one of the higher 'vacant' orbits, from which they jump back down into lower orbits as they cool, giving off a definite amount of energy in the form of a definite colour (wavelength, or frequency), which can be calculated from the sizes of the two orbits.

The reason the electrons were given an orbital motion by the scientists was that if they were imagined to be statianary, they would fall into the nuclei and merge with them, just as a planet would fall and merge with the sun if it were not rotating. The difference in the two pictures is that while the sun and the planets are electrically neutral, the necleus and the electrons are oppositely charged. Now, according to the classical (scientifically speaking, not historically) theory of electricity and magnetism, a system of electrically charged rotating bodies cannot remain stable—the electrons must fall into the nucleus in a spiral orbit in a very small fraction of a second, giving out a continuous stream of light (and other similar radiations) of varying colour (wavelength). In the atom, therefore, the scientists had to imagine an unnatural system of rotating electrically charged bodies which gave out light of a fixed wavelength only when they changed from an excited state to a 'less' excited one. So long as the electrons kept to their orbits they were as stable as the orbiting satellites of planets or the planets themselves around the sun.

Some of these predetermined orbits around the atomic nucleus were circular and others eccentric, with varying degrees of eccentricity and, depending on exactly which orbit an electron in an excited atom left and which orbit it fell into, various fixed frequencies of radiations were given out by the atoms. The whole set made up a spectrum of light (which identified the atom—element—as uniquely as a signature or fingerprint identifies a person), when light coming from the hot material was passed through a prism. The spectrum of hydorogen in particular and spectra of the elements in general were explained very well on the assumption of electron jumps and the capacity of chemical combination of the various elements and their compounds were also explained satisfactorily by the number and arrangement of the electrons, as envisioned by these scientists.

What they could not explain was why electrons in atoms could orbit only in certain 'permitted' orbits which endowed them with fixed

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

energies, which could be expressed by simple mathematically expressible relationships, not at arbitrary distances from the nucleus as the planets, or now artificial satellites, can do. The mathematical expressions for the fixed allowable energies of the electrons in orbit involved the use of a set of whole numbers, which were called quantum numbers as the difference between the energies expressed by the mathematical equations represented the quanta (singular: quantum) of energy that could come out of the atom when it gave out light. The set consisted of four kinds of quantum number and their permissible values were interdependent and related in a simple manner with one another. This interdependence could predict the arrangement of the elements in the periodic table in rows of increasing length. But apart from the periodic table (which was based on the observed properties of the elements) there was no reason why the quantum numbers should have just the interdependent values they actually had.

As the properties of the electrons themselves were studied, it became clear that they also behaved as if they were waves, and not particles. For instance, just as two light beams under certain conditions interfere with each other to produce alternate bands of light and darkness (interference patterns), so did two beams of electrons. This interference was explained on the wave-nature of light, as electrons also were waves. But they were particles, too, as they had a definite mass and size which were determined long ago.

Thinking over this dual character of electrons, scientists (notably the French scientist Louis de Broglie) thought up a new model of of the atom, where the electrons consisted of (or, were "guided along," or were "associated with") waves, and electrons within atoms were supposed to consist of stationary or standing waves wrapped around the atomic nucleus. In flat (two dimensions) these may be considered as vibrating strings around the nucleus, the vibrations dividing the strings into two, four, six etc. parts (nodes), depending on the state of excitation of the atom. The more distant the orbit of the electron on the older orbiting electron (Bohr-Sommerfeld) model, the greater was the number of nodes on the new wave-model (de Broglie model).

Up to the time de Broglie suggested these wraparound waves for the electrons in atoms, all known kinds of waves had to have a medium in which the waves formed. As we have already seen, a string can act as a medium to form waves. Sound consists of waves in the material which is struck or bowed to produce the sound—bits of reeds in reed musical instruments, etc. Sound traveles from one place to another as waves of compression and rarefaction in the air. Light consists of waves in space with no apparent medium, but we know that the waves are electro-magnetic potentials (potential states of electrification and magnetisation) traveling in wave-pattern in space. If they meet a metallic object, these waves charge it in a rising and falling wave pattern. That is how our radios pick up the electromagnetic waves sent by distant broadcasting stations and magnify them to reproduce the programmes.

What kind of waves were the de Broglie electron waves ? The answer is that they are the waves of the probability of finding the electron at a given point near the nucleus of the atom. At any given instant, the scientists say, the electron may be anywhere in space, right from the centre of the nucleus to near the star

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Arcturus, thousands of light years away ! But every point in the universe has a difinite probability of the electron being at that point. And this prohabitity can be expressed in the form a of mathematical equation of the same form as for a wave, from which all the rules about the number of electrons in various 'orbits', electron jumps from one orbit to another to producethe characteristic spectra of the elements, and the behaviour of the atoms can be predicted. In this way, the electron, a constituent of matter, has been reduced to an unimaginable 'probability wave',

Turning now to the protons and neutrons forming the heavier (nuclear) part of the atom, these, too, produce interference patterns like light beams or electron beams. Thus, waves are associated with these, too.

As already mentioned the fundamental particles (proton and neutron in the nucleus and electrons as stationary waves outside) constitute the atoms of which all matter is composed. This simple picture was soon complicated by the discovery of other fundamental particles which come out of nuclei of atom as they are subjected to bombardment at very high speed in apparatus called the cyclotron and other particle-accelerators. These cause electrically accelearated protons to bang against the nuclei of various atoms and the resulting 'debris' usually contains some of these new fundamental particles. There number has now reached a hundred and thus the atom has become quite a complicated thing. These founamental particles can be paired into 'particles' and 'antiparticles·' One of the first antiparticle to be discovered was the 'antielectron' which has a *positive* charge equal to the negative charge of an electron but it is as light as the electron. This particle has been given the special name of the 'positron'. An electron and a positron are always produced in pairs and when a positron meets an electron, 'Bang!' they are reduced to nothing but a flash of energy ! The antiproton was also discovered which was as heavy as the proton, but with a negative charge. Even the uncharged neutron has its antiparticle, the antineutron, which has no charge and mass equal to that of the neutron. In some subtle way, however, the two particles are different. When any particle meets with its antiparticle, they anihilate each other and their mass is converted into energy. Now, according to Einstein's celebrated theory of relativity, matter can change into energy and energy into matter. While *part* of the matter could change into energy in the atomic and hydrogen bombs and in atomic reactors, this was the first example of matter completely changing into energy.

Just as in the heavier atoms (all except hydrogen) protons and neutrons combine to form the nuclei of these atoms, can the antiprotons combine with the :antineutrons to form the heavier antiatoms ? One kind of antinucleus that has been thus successfully synthecised corresponds to the nucleus of heavy hydrogen, called the deuteron—the antideuteron. This success has spurred the imaginations of the scientists. Just as a particle and its antiparticle are always produced in pairs and when they meet they change into energy, they have imagined that energy itself must be convertible into a particle and its antiparticle. They have thus speculated that corresponding to the kind of matter we are familiar with, an equal amount of antimatter must also have been produced at the time of the creation of matter, if matter *was* created suddenly (the "big-bang" theory). Alternately, if matter is being continuously created all over the universe (the theory of continuous creation), all the

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

particles must be produced in pairs (a particle together with its antiparticle) and then driven apart (perhaps aided by antigravilty which would cause a particle and its antiparticle to be repelled from each other). In this way, parts of the universe would be made up of matter and parts of antimatter. At a distance there is nothing to tell between matter and antimatter. The only test is that when they are forced together, they end up in a lot of energy. Thus, carried by their imaginations, the scientists visualize antistars, antisuns, anti-earths and antianimals and antiman in some distant part of the universe. An antiman has only to shake hands with a man for both to disappear with a huge flash of energy. There are heavenly bodies in the sky giving out such huge amount of energies that one way to explain their source is to think that two heavenly bodies, one made up of matter and another of antimatter must be in a process of collision. This is a serious scientific theory and not just a poet's imagination.

It will thus be seen that starting with solid-as-rock matter, scientists have ended up with waves of energy as the ultimate structure of matter. Is it very different from our ancient rishis '*maya*', or illusion as description of all material things ?

❑❑

I choose my friends for their good looks, my acquaintances for their good characters and my enemies for their good intellects. A man connot be too careful in the choice of his enemies.

—Oscar Wilde

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ON TELLING LIES

Upendra Sharma,
Deptt. of English

Beauty is truth, truth beauty,–that is all-ye know on earth, and all ye need to know."

This is how Keats adores the virtue of truth the soul of beauty. For him truth and beauty are identical; complementary to each other. All religions and their upholders have ceaselessly regarded truth as the surest and the most sublime link between mortals and the immortal God. There is perhaps no surer and shorter route to heaven than truth; nay, 'truth itself is God.' The essence of all religions is truth implies that it is the greatest religion. Like mercy, truth is a divine virtue.

Much has been said and said emphatically about truth. We nave been preached so much about truth that it has come to appear too noble an ideal to be aspired for by man. Even in this age when 'the world is too much with us,' Gandhi, lived and died for truth. His 'Satyagarahas' i.e. an urge for truth did bear fruitful results but it all ultimately concluded in placing him on the traditional saintly pedestal. He is now an ideal; too great an example to be followed by ordinary men.

It is indeed strange that numberless lessons so laboriously taught about truth are either never understood or are soon forgotten whereas one learns telling lies without any schooling. Love for lie and falsehood may seem natural yet it cannot be assumed that it is easier to tell lies than to speek truth. For truth means feeling saying, seeing and doing what one actually feels, knows, says and does. There is no problem of playing double role. The road of truth is straight whereas the street of lies is not only narrow but all zigzag. What is there in descriping a thing you have seen and a person you know ? Where lies the art in picturing a thing exactly as it. Camera does the same and therefore its product is regarded less artistic than a painting. Plato not only condemned poetry but insisted upon vanishing poets mainly because they sing and write about things that do not exist. They excite emotions and in a excited state one is liable to forget or overlook realities. From Plato's view the thought contents, for example, of 'Ode To a Skylark' are all indulgence and what we call its poetic beauty is all false. How could the 'Reaper' sing better than a nightingale or a cuckoo ? How can the heart of a man leap into his mouth at the sight of a rainbow ? How his heart could dance with daffodils ? Is it not all falsehood ? All lie ? A Plato may ask. Plato accused poetry of falsehood because it is all imagination and an exaggerated account of realities. Like lovers and lunatics poets live in a utopia. What do they know of truth and realities of life ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Leaving aside these utopians let us ask ourselves why people tell and multiply lies when they know it is something bad. It is looked down upon as a sin. Can we not get along without telling lies? It is quite difficult to answer such questions. Infact, lie is multicoloured and it reflects itself in various hues. It is said that a child learns the first lesson of his or her education in the lap of the mother. And even the sincerest mother often fails to help threatening the angry and crying child by mentioning the dreadful ghosts and devils whom she never has had the chance to see. Once an irritated crying child not only peevishly refused to feel content with the reflection of the 'Chanda Mamma' (the Moon) in water but also accused his mother of telling lies. A child often lies due to some fear or some temptation and it continues along with his growth. Lie is an infection and it easily victmises a growing mind. That is why teenagers are usually prone to lies and they pratise them smartly. When they miss and truth gets unmasked, they become more cautions and tactfully employ their lie-inventing faculty next time. The process, other things being equal, continues and by the time a young boy steps into the worldly life he starts feeling convinced that one cannot get on successfully without using the crutches of lies and falsehood. It is rightly observed that a so-called wordly wise and successful man often counts on lies for his success. We often regret that we have to tell lies because we are surrounded by liars and breathe in an atmosphere of lies. Truth does not help. Strange it is that though we are never trained in telling lies, contrary to it we are warned against its grave consequences and we find people suffering due to falsehood, yet we cannot help following the examples of liars and leave our own examples for others.

Like 'Art for art sake' some people tell lies for the sake of telling lies. They practise 'whitelies' i. e. well-meant lies. But there are people who tell lies and stick to falsehood not only to serve their purpose but also to harm others. 'Harmless lie' is a lie that people tell to impress others, to win favour, to impose their superiority or to hide inferiority and ignorance. They sometime lie to prove themselves honest when people go on speaking high of themselves and their relatives and friends and claim intimacy with the highly placed and rich people they do so to impress others. They feel flattered and try to create awe and illusion for others. One of the beste xamples of harmless lies is a woman who carefully lies about her age. One feels amused when she brings her growing age to a 'stand still' by maintaing the same figures for years together. Similarly women are known for keeping the figures of their husband's and son's salarly fluctuating according to the man and the occasion. It is often alleged against them that they are better liars than men. They hide facts, invent lies and multiply them. They make things personal and the false notion of personal and social prestige presses them to add and curtail things They are by nature more sensitive than men and they do their best to hold their heads high in the society. It is the art of telling lies that maintains their glamour in the vanity fare.

Women are more intersted in words than deeds. Two rings repeatedly promised on phone flatter them more than one actually around their finger. A lover can hardly win a woman's heart if he believes in deeds and says to her just what he feels about her. You have to flatter her to entire satisfaction and continue it and one who accuses you of telling lies must be a rejected lover and poor judge of woman-nature. He has yet to learn the trick of the trade. One

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

will hardly come across a greater liar than a husband who, on occasions, frankly admits and convinces his spouse that no other woman is better and more beautiful than her and that she is the sole queen of his heart and home. Words mere words of lies, work effectively. Even the tears caused by your frequent late returns at night and the highly offensive habit of praising somebody else of her sex, are then and there wiped off. In minutes anger melts and the usual smile returns to her lips. This is the blessing of telling lies. Beloveds and wives may, on such occasions, maintain their show of anger and accuse you of befooling them still they wish you to repeat it. Contrary to it, the most genuine praise of cooking, knitting or any thing else, chiefly of beauty, of some other woman from a husband's mouth works like a drop of lemon in sweet and tasty milk. The true and earnest admiration of some other woman in the presence of your wife will deprive you of her faith in you and poison the happiness of your home. A husband who claims to enjoy perfect peace in his home; who prides in having never quarrelled with his peace loving wife and who has never been accused of entertaining fancy for other woman is the clever husband who has specialised in the art of telling lies.

The seed of 'harmful lies' is malice, ill-will. It goes hand in hand with jealousy and revenge. Courts of justice are indeed the courts of law and experience shows that law also fails in finding truth and punishing injustice caused by complicated lies. The interpretation of a lawyer does not necessarily rest on facts and truth. The parctice of a lawyer thrives if he is able to twist and misrepresent the facts in favour of his client. Sometimes the force of arguments establishes lies as truth. A witness often says not what he exactly knows and feels but what he is tutored and what the twists of arguments lead him to say. Truth gets lost in the fog of lies and falsehood. If it had not been so, poetic justice would not have been a mere term of literature only.

People not only hide and twist facts but they get lost in the thick mist of lies and falsehood. Some get known by applying confidence They stretch their fancy to any extent. Palmists and astrologers who use this science as a convenient means of gaining popularity and earning bread, employ the tactics of applying confidence. They are seldom able to probe into the net of lines on your palm or the stars that govern you. They do not say what they actually come to know. They have a ready-made sets of sentences. They know how to twist things and say what you want to hear. Similarly a very great number of merchants and shopkeepers bank on a colour'ful variety of lies and falsehood. The plate displaying 'fixed price' and 'honesty is the best policy' is infact, the caution that should warm a clever customer that these two things are totally absent in practice. Successful salesmanship, they say, is nursed by lies and falshood. It is again the art of telling lies that makes the tongue of beggers so oily. They get charity for telling lies. They are pitied and helped for the endless variety of falsehood they maintain. Deceit, fraud, hyprocrisy, conceit and all such things that obscure truth and blur honesty either spring from lies and falsehood or mother it.

For some lies become an ornament of their talk. They just cannot help telling lies. They rather get addicted to it. Those who are able to refrain from telling lies and can avoid

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

falsehood are, indeed, possessed of strong-will. But they are often misunderstood and misrepresented. They are called outspoken and become unpopular. They pass through difficult trials and are made to suffer. People seem to have understood more seriously than needed the saying of Shaw that he who tells the whole truth is bound to be hanged. No doubt on certain occasions, it is better to tell a sweet and pleasing lie than the truth that may cause harm. The man who, having sheltered a woman being chased by ruffians, exhibits his ignorance and strongly refuses to have even seen her is better than that truth-lover who hands her over to them. But such occasions are rare. It is worth remembering that glory of human life goes with truth and glamour depends on lies.

The perfect liar is one who claims to have never told a lie.

□□

The first symptom of love in a man is timidity, in a girl, it is boldness.

—Victor Hugo

The dictionary is the only place where success comes before work.

—Berman

Unhappiness is not only painful; it is mean and ugly.

—William James

The public is merely a multiplied 'me'.

—Mark Twain

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

HOW DO WE LEARN ?

S. Ishrat Ahmed
I Yr. Science

In order to get along in our modern world, we must keep on learning something new every day. When we learn, something happens inside the brain which will affect our behaviour. We have already discovered that human beings learn through habit formation and conditioning. There are other ways of learning.

How Animals Attack A Problem

A scientist decided to find out how a hen a dog, and a child would attempt to solve a simple problem. A small pile of corn was placed on one side of a short wire fence, and a hen on the other side. As soon as the hen saw the food, she moved toward it but was stopped by the wire fence. She kept pushing against the wire, without success. Finally she gave up the struggle and began to walk away. Looking back, the hen again saw the corn and ran toward it. This time there was no fence to stop her. The hen used the method of trial and error in attacking the problem. No intelligence was used. She obtained the food purely by accident.

In the case of the child, a toy was placed on other side of the fence. The child looked over the situation and quickly walked around the fence to pick up the toy. The child did not rush blindly at the wire fence the way hen did. She calmly studied the whole situation, and found that only a short section of fence separated her from the toy lying there. She then walked around the fence to get her reward.

These experiments show the value of stopping to "Think it over" when we are faced by a problem. Most animals must depend on the trial-and-error method of solving their problems. Unless a lucky accident occurs, they face defeat. They never stop to think.

Reasoning

We too, sometimes use the trial-and error method of learning. You may have used it yourself when, for example, you tried to unlock a door with an unfamiliar bunch of keys. This is a slow and uncertain method. If you were to look at the loc kand then study the keys you would find the right one much sooner. This better method is commonly known as "reasoning." Reasoning means studying the whole situation calmly until we find the right answer to our Problem.

Not many animals are able to reason. Man's ability to use his reasoning power has made him the master of all other living things. We do not know exactly what happens when we reason. It seems to involve the making of complicated connections among the billions of nerve cells in the brain. Some people seem to be able to do this better than others. The ability to reason can be improved by training.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Since it is important to all of us, we should try to devlop our ability to reason to the greatest possible degree.

Memory

If we improve our reasoning power, we should first try to improve our memory. In some unknown way we are able to store up memories of our experiences in the brain. We may think the brain as a kind of telephone switchboard. When we reason, we "plug in" on some memories that help us to solve our problem. If some fact is important enough to remember, we make a real effort to make the memory stick. Most of the things we forget are really notl earned to begin with. We cannot remember a person's name unless we pay attention and really try to remember it when we are first introduced to him *"The secret of a good memory is to make a strong mental connection at the right time."*

Developing Your Learning Ability

We all know two people of equal intelligence may show great differences in learning ability. This is true in the class room. Would you like to be more successful in school and college and in the world ? Some of theidea listed below will help you.

A good automobile mechanic must keep his mind on his work when he tries to discover what is wrong with an engine. Daydreaming does not help when you are trying to study. Make a good study plan and study in a quiet place. You will find that your grades will improve quickly.

When you study from a book, learn to use the headings of the units, problems, and paragraphs. Outline your work so that you can understand what you are studying.

You can develop your learning ability if you apply these tried and tested ideas. You should devlop a desire to learn because of the value of the knowledge you will store up in your brain. You should organize your work so that it will mean something to you. If you concentrate, you will learn more quickly and you will remember what you have learned. Set aside a definite time and place for study and do not allow a day to go by without your "study practice." Studying, like baseball. takes plenty of practice if you expect to get results.

□□

A friend is one soul abiding in two bodies.

—Aristotle

Music is for the development of the soul, as gymnastics are for the body.

—Plato

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

The glory of India

Sohan Singh Chauhan

The glory that was India is well known. She was the teacher (Guru) of the world. Many westerners came to India to learn and carry the knowledge abroad. They used to come to get something from this sacred country. It was called the "golden bird" of the East." People were anxious to visit this nation. They used to be grateful to this country if they were given a chance to see it. We are still proud of our country. If only the present generation of India recognises the glory of our past, there is no need to bow to the West. We are fond of the westerners, but the westerners are also very fond of India.

This is the same country which produced the Vedas. This is the same country which gave the Mathematics the concept of Zero. It is the same land which gave so many other things to the world.

A French writer Jecaliat was inspired by India and he wrote in his book "Bible in India":—

"Land of ancient India ! Cradle of Humanity, Hail ! Hail revered motherland whom centuries of brutal invasion have not yet buried under the dust of oblivion. Hail fatherland of faith, of love, of poetry and of science. May we hail a revival of thy past in our western future".

We have the duty to maintain the same glory for ever. Today we go to the west to gain knowledge. But if he read some of our ancient books we shall realize that it is not all that necessary to go out to become scholars, that our own land can offer us enough scholarship.

Again a famous German writer Max Mullar who spent years of his life in the study of the Vedas, wrote, "If I were to look over the whole world to fiind out the country most richly endowed with all the wealth, power and beauty that Nature can bestow, I shall point to India.

If I were asked under what sky the human mind has most fully developed some of its choicest gifts, has most deeply pondered on the greatest problems of life and has found solution to some of them which well deserved the attention even of those who have studied Plato and Kant, I should point to India.

And, If I were asked myself from what literature we have in Europe, we who are nurtured almost exclusively on the Semetic race, the Jewish, may draw their corrective which is most wanted in order to make our inner life more perfect, more universal, in fact more truly haman, a life not for this life only, but a transfigured and eternal life, again I should point to India".

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

—India : what can it teach us.

Prof. Heeren wrote : "India is the source from which not only the rest of Asia but the whole western world derived their knowledge and their religion".

—History Research vol II P. 45

Thus we should be proud of our past, and even present. Numbers of brutal invasion could not destroy its greatness. This country bore all the invasions but preserved its culture inspite of them.

Our nation is great and it will always remain great.

□□

A rich but unwise man bought a costly imported car. The manager advised the man, "Sir, be careful, the drivers generally change the parts and replace them with indiginous ones". After a couple of months while the man was travelling in the car, his driver wanted to reverse it. Suddenly the man asked his driver, "What are you doing, man ?" The driver said, "I am changing the gears." The man immediately caught hold of his collar and said, "You are changing parts of my imported car and that too in front of me ?"

O. P. Gandhi

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Book Worm

Anand Sagar Mehta
B. Sc. Ag.—Final Year

Anatomy :

Surface anatomy can be drawn by looking at their rooms. They can be identified easily by a sharp glance at their window curtains and doors.

Extent :

They occupy their rooms near calm places, where they may not be disturbed. Therefore they are found extensively in corner rooms of second or third storeys of hostels.

Origin :

They originated from book worm Chrauosomes XB YW.

Insertion :

They are inserted into Medical colleges and Engineering colleges and I. A. S. and Allied Services.

Relations :

Anterior— Various books, pen, note-books, rough copies etc.

Posterior— Wall of room or easy chair.

Lateral — Books and copies.

Below — Chair.

Above — Whirling fan.

Nerve Supply— Sawatic Monitary Nerves and vitanain M is needed— They are supplied by their parents and their guardians.

Arterial Supply—Supplied enormously by new editions of various text books.

Fuuctions:

(1) They increase the percentage of marks obtained in various examinations.

(2) They increase the source of income of authors.

Physiology:

General condition— Pale yellow, lean and thin like fibre.

There are two types of bookworms:

(1) Micro bookworms.

(2) Macro bookworms,

Composition— Hydrogen, Oxygen. Carbon and Nitrogen are found in less quantities.

Phosphates— low; calcium—low;

Fats— low; Glucose—low.

Reaction— very gentle but become angry when someone requests them to leave the class room or laboratory.

Microscopic structure—

No erythrogenic activity in bone marrow. No oestoblasts in bone but lots of oestoclasts, white hair. Eyes myopic or hypermetropic jaundice. Frontal sulci very deep, yellow, pale, skin, loss of appetite sometime nausea, vomiting, dizziness may be seen.

Small deeds done are better than great deeds planned. **Peter Marshall.**

□□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

News From The Campus

M. K. Marwah

The Year of Wonders :

India's 'tryst with destiny' on 15 August 1947 took place amidst international conspiracies. Her material and moral resources and her ancient heritage entitled her to a position of eminence in this part of the world. Parts of her territory in North and East were detached and formed into a separate state of Pakistan and a plot was hatched to do her out of her rightful position in South East Asia. The hostile state of Pakistan was used as a counter-poise to India. The cancept of balance of power has never been so cynically used anywhere in the world as in this sub-continent. Pakisthani leaders sustained a hate-India campaign for quarter of a century and thrived on it. Pakistan's entire state policy was based on confrontation with India. Massive foreign aid was pumped into Pakistan who threatened India on one pretext or the other. Not content with threats she committed aggression against India thrice.

India had to divert substantial resources to the needs of her defence against an implacable enemy. Money that should have been spent on economic reconstruction had to be spent on building defence forces. Consequantly, the war on poverty, the real enemy of people, had to he slowed down. But 1971 has shattered the concept of balance of power and opened up great possibilites for India.

Pakistan Humbled :

The details of Pakistan's oppression of East Bengal over the years and its pre-emptive air strike against India in the first week of December 1971 are too well known to bear repetition. The Indians rose like one man and retaliated against the insolent enemy. Our gallant defence forces stood like rocks against the enemy onslaughts and broke the enemy war machine. The enemy was licking the dust in 14 days.

On 16 December 1971 Lt-General Aurora of Indian Army accepted the formal surrender of Lt-General Niazi of Pakistan Army and put an end to an era of colonial exploitation bestiality and genocide in Bangladesh. The same day Prime Minister Indira Gandhi offered cease-fire to President Yahya Khan and brought to a successful close the bitter 14-day war. The birth of a sovereign, secular, socialist and democratic Bangladesh and humiliation of Pakistan armed might have far-reaching implication for India.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

A Challenge for India :

For the first time in ages we are set on the road that leads to greatness. The road is difficult, strait and beset with hurdles. Shall we negotiate it ? Here is a challenge and an opportunity to prove the stuff we are made of. We have had a great past, let us resolve to herald a great future. Let us dedicate ourselves to honest, hard work !

Principal Dattatray Vable :

Principal Vable laid down the reigns of administration of this college this year. This wrings down the curtain on thrill-packed dramatic events of 25 years. He has raised a High School to a six—Faculty College with 11 post—Graduate departments. His has been a success story. But his colleagues know how much planning and hard work have gone into this success.

We in this college are happy that his great energy, talents and wisdom continue to be available to us.

New Regime :

Shri Krishnarao Vable and shri G. L. Joshi took over as Principal and Vice-Principal respectively this year. Expansion in any field brings problems in its train. Our college is no exception. Shri Krishanrao Vable has kept himself busy in creating a self-executing machinery to solve the problems of an ever-expanding college. This mild-mannered soft-spoken gentleman has steely determination in him to come to grips with the problems. What a contrast to his illustrious brother who has all these years hidden 'milk of human kindness' behind a forbidding exterior !

With his translation to the office of 'Chhota Saab,' if anything, there has been an accession to the already formidable popularity of Shri Joshji with the staff. "When in trouble make a bee—line to 'Chhota Saab" appears to be the done thing these days.

M. A. in Economics :

We have added M. A. classes in Economics. There was a great rush for admission. We know how pained Prof Kashiap was to say 'No' to some hopefuls.

New Construction :

In the year under review we have constructed a cycle stand with the capacity of 800 cycles, costing Rs. 52,000/- ; and a Gynasium costing Rs. 1,10,828/-.

We give below an account of how, in our own modest way, we have served the community in the year 1971—72 : Enrolment :

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

CLASSWISE RESULT 1970–71

S No.	Name of class	Faculty	No. of students admitted in the class	No. of stu. appeared	No. of stu. passed	DIVISION I	DIVISION II	DIVISION III	Without Division	Total	Result in Percentage
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
1	I Yr. TDC.	Arts	136	125	36	—	—	—	36	66	28.8
2	II Yr. TDC.	Arts	96	78	37	—	—	—	37	37	54.41
3	IIIYr. TDC.	Arts	70	64	35	—	9	26	—	35	54.69
4	M.A Draw.P	Arts	8	7	7	—	—	—	7	7	100
5	,, ,, F	Arts	5	5	5	2	3	—	—	5	100
6	,, ,, Soci. P	Arts	8	7	6	—	—	—	6	6	85.7
7	,, Soci. F	,,	15	8	8	1	5	2	—	8	100
8	Pol. Sc. P	,,	45	34	28	—	—	—	28	28	82.35
9	,, ,, F	,,	14	14	14	—	2	12	—	14	100
10	Hindi P	,,	25	21	19	—	—	—	19	19	86
11	,, F	,,	16	15	15	—	13	2	—	15	100
12	Geograpny P	,,	35	27	27	—	—	—	27	27	100
13	,, F	,,	25	24	24	3	19	2	—	24	100
14	History P	,,	25	23	23	—	—	—	23	23	100
15	,, F	,,	19	17	15	—	7	8	1	15	88.23
16	Sanskrit P	,,	7	7	6	—	—	—	6	6	85.71
17	,, F	,,	2	2	2	1	1	—	—	2	100
18	LL.B. I Yr.	,,	59	36	30	—	—	—	30	30	100
19	P.P. Ag.	Agriculture	43	37	18	—	13	5	—	18	48.68
20	I Yr. Ag.	,, ,,	25	23	23	—	—	—	23	23	100
21	II Yr Ag.	,, ,,	44	44	43	—	—	—	43	43	93.18
22	IIIYr Ag.	,, ,,	64	62	58	5	51	2	—	58	95
23	I Yr. TDC.	Commerce	157	145	80	—	—	—	80	80	55.17
24	II Yr. TDC.	,, ,,	115	85	20	—	—	—	20	20	23 53
25	IIIYr. TDC.	,, ,,	70	58	31	2	10	19	—	31	53.45
26	M.Com.B.Ad.	(P) ,,	18	16	14	—	—	—	14	14	87.5
27	,, ,, Accts.	(P) ,,	36	33	30	—	—	—	30	30	90 9
28	,, ,, Eco.	(P) ,,	9	7	6	—	—	—	6	6	85.7
29	,, ,, Final	,,	58	42	29	4	17	8	—	29	68.57
30	I Yr. TDC.	Science	261	213	43	—	—	—	43	43	20.18
31	II Yr. TDC.	,, ,,	111	93	21	—	—	—	21	21	22.58
32	IIIYr. TDC.	,, ,,	66	59	28	—	21	7	—	28	47 44

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Students in Meritlist in University of Rajasthan 1970–71

Position in University	Exam. R. No.	Name	Max. Marks	Marks Obtained
I	43	Paras Mal Jain	1750 (Agriculture)	1165
III	3	Ashok Kumar Mariwalla	,,	1118
IV	25	Kartikay Kumar Mathur	,,	1115
V	63	Vishnu Chand Nawal	,,	1079
IV	6	Brahma Nand Vyas	,,	1067
I	864	Kirpal Singh Narula	Scciology M.A.	569
II	975	Ram Lal G. Lalchandani	M.A. Drawing	505
III	973	Miss Asha Gupta	,,	499
I	821	Milap Chand Porwal	M.A. Geog.	700
II	50	Gyan Chand Jain	M.Com (B.Adm.)	596
V	56	Rameshwar Lal Gupta	M.Com (B.Adm.)	578

S. No.	Name of Scholarship	Amount	No. of Scholarships awarded.
1.	Merit cum need	2700	3)
		2400	5)
2.	National Loan Scholarship	8460	10
3.	National Scholarship	2695	4
4.	Scheduled Caste & Scheduled Tribes	58525	74
5.	Political Sufferers Scholarships	500	2
6.	I. C. A. R. Scholarships	9000	8
7.	Lower Income Group	2459	4
8.	Deceased Govt. Servant Scholarships	200	1
	Others.	180)	3
		150)	
		87269	112

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Students Union Report :

The election for the students union of the college was held during the month of september in which the following office-bearers were elected for the session 1971-72 :

President : Annand singh Bhakar, LL.B. (Final).
Vice-President : Ramesh Joshi, B. A. (Final).
Secretary : Vishnu Kant Khandelwal, M. Com. (Final).
Joint-Secretary : Bhola Shanker Agarwal, B. Com. (Final).

The highlight of elections this year was the adoption of a systematic election procedure both at the level of the election of class representatives and at the level of the election of the office-bearess as per the modifications incorporated in the union constitution last year. This provided a better opportunity to the student community to have a better understanding of the democratic process of electioneering.

The formal inauguration of the union activities was considerably delayed this year due to late elections and the declaration of national emergeney in the wake of Pakistani aggression. However, the union was inaugurated by Shri Bhimsen, ex-Principal Maharna Bhopal College, Udaipur on 4th Dec. 1971. Prof. Bhimsen in his inaugural address advised the students to be strong for he believed that strong oungmen would make a strong nation and no nation would have the courage to cast an evil eye on a strong nation. He also appealed to the students to be prepared to make sacrifices for the country. The tea party which was to have followed the function was cancelled in view of national emergency and the president of the union on behalf of the students donated the whole amount of Rs 201/- earmarked for the tea party. The formal function of inauguration was followed.by a lively symposium on 'Bangla Desh in the international situation' in which a number of students and professors participated.

It would be noteworthy to mention here that the students of this College under the leadership of their representatives contributed their bit in national defence effortsby helping the local authorities in matters of civil defence, blackout, blood donation and financial contribution toward N. F. The students, and the staff of the college contributed Rs 6000/- for the N. F.

As usual the union organised a number of literary and cultual activies from time to time which included debates in Hindi and English, symposia an current topics of interest, and talks by emminent persons. Besides, the union also celebrated certain natoinal days such is Independence and Republic days.

During the College Social week the union organised essay competition in Hindi and English, debates in Hindi and English, General knowlege competition, Drawing and painting Exhibition. Facy dress and mono acting competitions and cinema shows. The major event of of the social week celebration was the production of a Hindi way 'Sonar Bangala' under the masterly direction of Prof. A. K. Gupta. The play-a trcat to watch-was a novel experience

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
on the college stage not only from the point of view of its theme but also due to its stage craft. Santosh Mishra as Sheikh Mujeeb, Smt. Meena Mukherjee as a victim of Pakistani oppression in Bangladesh and Pramod Hora as the Commander of the Mukti Bahini gave fine display of their histrionic talents. The juvenile artist Baby Meeta and Master Asit received much applause from the audience for their talented performance. The play secured best direction and best acting awards besides being adjudged one of best plays in the winter drama festival of the Western Railways.

As usual the union in its annual budget earmarked Rs 500/- for giving scholarships to the bright and needy students of the college.

The annual function of the union was held on 17th March, 72 with Shri G. B. K. Hooja, Chairmrn, Rajasthan Revenue Board as the chief guest. In this function Mrs. Hooja gave away the prizes for academic performances, various culltural and literary activies, games and sports. The follwing were the prize winners of the various literary and cultural activilies organised by the union during the social week :—

Dayanad Gold Medal :

(Best allround student of the college). Sh. Milap Chand Porwal.

1. *Hindi Eassy Competition :*	I	Bhanwer lal Panwar N. Cam. (F).
	II	Balu Ram Cheeha B. Sc. Ag. (F).
	III	(Bracketed) satya Narain Tripathi I yr. Art. Radhey Shyam Pareek M. A. Econ. (P). Amba Lal II yr. Com.
2. *English Essay Competition :*	I	Satya Narayan Sharma B.CE. Ag. Pt. II
	II	Dhanveer Singh II yr. Com.
	III	Bhanwer lal Panwer M. Com. (F).
3. *Hindi Debate :*	I	Shyam Sunder Bhatt. M. A. (P). Geog.
	II	Rameshwar Lal Randar M. Com. (P).
	III	Pramod Kumar III yr. Arts.

4. *English Debate*, Consolation Prize:– Arun Kumar Singh B. SC. Ag. (F).

5. *Gen. Knowledge Competition :*	I	Pradeep Chaudhary II yr. Sc. Maths.
	II	Manmohan Arya II yr. Arts.
	III	(Bracketed) Raj Gopal Bansal B. Sc. Ag. (F). Gul Krishna Khanna II yr. Com.

6. *Fancy dress Competition :* Best— Ram Lal

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

7. *Hindi Drama :* Best Actor : Santosh Kumar Mishra M. A. (P.) Econ.
Best Actress : Smt. Meena Mukherjee.
II (Male) : Pramod Kulsresth, M. A. (P) Drg.
II (Female). : Baby Meeta Gupta.
III (Male) : Pramod Hora, B. Com. II yr.
IV (Female) : Miss Namita

8. *Consolation Prizes :* 1. Tara Chand M. A. (Drg) Prev.
2. Asit Gupta.

The credit for the good work done by the union goes to the team work of the office-bearers under the guidance of their energetic adviser, prof. A. K. Gupta. Principal Vable extended all support without which the adviser would not have been able get so much work done.

Games and Sports :

Our college provides facilities in various games and sports. Our collage took part in football, swimming weight-lifting, wrestling, hockey and athletics in the University of Rajasthan Inter Collegeate Tournaments. Our teams put up good show in all the games. Some of our boys have been selected to represent University Team for All India Inter-Varsity Tournaments.

Our college swimming team also took part in Distt. and State Swimming Competitions. In these comptitions our swimmers won prizes and were awarded certificates. In the University Swimming Competitions our college was placed third and our boys got certificates. Two of our swimmers Sri Surendra Kumar Goyal II Yr Sc. and Sri Kailash Chandra Sharma I Yr Ag. were selected to represent Rajasthan University in the All India Inter University Swimming Championship. They were awarded university colours and certificates.

In hockey and football Sri Mohan Singh III Yr Ag. was selected to represent Rajasthan University, and he was given University colour and certificates. Sri Mohan Singh and Sri Amar Singh were selected to represent Distt and State Junior foot-ball tournaments. One of our students Shri Birbal Singh Gajraj II Yr Law was selected to represent the University volley-ball team.

Our college annual Sports Meet was organised on 26th Jan. 72. The Meet was opened by our worthy Principal Sri K. R. Vable. About 45 Atheletes took part Sri Raju Garg II Yr Sc. was declared Individual Champion. In 4×100 Relay race Agriculture faculty stood first. In this Meet Agriculture faculty secured first position.

The inter-faculty competitions in foot-ball, hockey, kabaddi, cricket and volly-ball were also held. In these competition the positions of the different faculties were asfollows:

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

The Agriculture Faculty won the foot-ball, hockey and cricket; Arts won Kabaddi and Law faculty was winner in Volley Ball

Agriculture faculty won the General Champion-ship defeating the Faculty of Arts holders for move than 10 years. The Agriculture Faculty secured highest points, *Seventy Nine* fallowed by Arts Faculty with *36 points* and followed by Science, Law and Commerce with, *Ninteen, fifteen,* and *Eleven* points respectively.

Shri Mohan Singh student of III Yr Agriculture was nominated General Captain for this year. The following players were awarded college colours and certificates.

1. Shri Mohan Singh, III Yr Ag. General Captian Foot-Ball.
2. ,, Surendra Kumar Goyal, II Yr Sc. Swimming.
3. ,, Kailash Chandra Sharma, I Yr Ag. Swimming
4. ,, Birbal Singh Gajraj, II Yr Law. Volleyball
5. ,, Rajeev Garg, II Yr Sc. Atheletics.
6. ,, Amar Singh Jodha, I Yr Ag. Footballl.

The credit for the success of the Sports Day and for the progress in the sports and games activites in the college goes to Dr J. N. Tandan and his co-workers.

N. C. C.

We have three wings in N. C. C. Artillary, Battery and Navy. As usual the recruitment to all the wings was very satisfactory. The officers with the help of their staff gave sound training to the cadets.

Captains K. N. Gupta, V. K. Sharma and Lt. K. C. Sharma have done excellent jobs of the training programmes.

Social Service

Some students who were exenpted from the N. C. C. joined the Social Service Squad. They did some useful work in levelling ground and removing earth under the supervision of Dr Lavania.

Geographical Society :

As usual the annual elections of the society were held quite peacefully, but with great zest and excitement on 4th Sept 1971, and the following students were elected the office bearers of the executive committee for 1971—72 :—

President	:	Shri Randhir Yadav, M. A. Final
Vice President	:	Shri Surendra Kumar Soni, M. A. Prev.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Secretary	:	Shri Ramesh Chand Joshi, III Yr. Arts
Joint-secretary	:	Shri Narendra Singh Chandrawat, I Yr. Arts
Treasurer	:	Shri Bajarang Lal Teli, M. A. Prev.
Cultural-Secretary	:	
Library management	:	Shri Anil Kumar Misra, M. A. Final
		Ram Bilash Parmar, M. A. Prev.

Dr. M. L. Mittal lecture series :

The society arranged lectures of Shri Vishnu Dutta Sharma, Member of Rajasthan Public Service Commission. Shri P. D. Kudal, Member, of Revenue Board, Shri Yashu Deo Sharma, Secretary, R. P. Sc. and Dr. B. L. Sukhawal, lecturer Wiseonsin U. S. A.

Discussing the language problem in the light of geographical factors Shri Vishunu Dutta Sharma commented that Hindi was bound to be accepted as the link language of India. Criticising existing methods of survey used by Patwaris in the villages, Shri Kudal advised the students of Geography to help in conducting the land utilisation survey to make proper use of the land possible.

Activities :

The society in order to provide necessary impetus to the young students held several competitions, viz, debate, map drawing, paper writing, model making and geographical knowledge The society organised symposium on 'Bangla Desh;' students and staff of geography Deptt. participated in it.

It is a matter of pleasure to mention that a detailed survey of *Rushan* settlement was undertaken by the students of Geography Department. A camp was organised in December 1971 for a week and the whole town-ship of Pisagan was surveyed with the help of suitable survey instruments and a layout plan was prepared. It may be remarked that a detailed survey with a view to preparing a map had never been undertaken for Pisagan town-ship. Another important feature was that this big work was completed in record time of seven days. The department is also planning to prepare other useful maps later to suggest the master plan for this *rushan* centre. It may be mentioned that such a work was believed to be done only by students of Geography. Thus the department was able to show the worth of geography students (for wider interest) through this work.

The society also publishes a Research Journal named 'Ajmer Geographer.' Vol. 3 of Ajmer Geographer is proposed to be published in March, 1972.

Library :

The society has a library of its own in which there are hundred and thirty five volumes

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

and a dozenj ournals. We have a system that fifty percent of total budget of the association is used for the purchase of books.

Commerce Association :

This Association is doing very useful work for the commerce students. It has its own library which is very beneficial for students. The Association organised many debates, and essay-writing competitions in which a large number of students took part.

The Prize-Giving was presided over by Shri Vishnu Dutt Sharma, Member Rajasthan Public Service Commission.

The credit for the good work done by the Association goes to all teachers of commerce, especially to Prof G. L. Joshi and Dr. K. N. Gupta.

□□

2. *One day, the driver of a car was repairing it. The screw drtver broke. He went to his master and said, "Sir, I need a screw driver". The master got furious and said, "Mr, it is difficlt for me to pay for one driver in there days. How can I afford to keep another driver" ?* **O. P. Gandhi**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संस्कृत-विभाग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारत-प्रशस्तिः

☐ श्री रमेशचन्द्र शास्त्री

[१]

गुरु गौरवेणास्ति यो विश्ववन्द्यः ।
समग्रैः जनैः पूजनीयः सुनन्द्यः ॥
प्रभा भाति यस्य प्रकाशस्य लोके ।
स देशः सदा वर्धतां भारताख्यः ॥
निज गौरव से गुरु सबका जो वन्दनीय है ।
सकलजनों का पूजनीय अभिनन्दनीय है ॥
फैली जिसकी अखिल लोक में प्रभा प्रखरतर ।
सदा बढ़े वह भारत जग में उन्नति-पथ पर ॥

[२]

सुवीरैः सुधीरैः सुधन्यैः वदान्यः ।
समस्तेषु लोकेषु रम्यः सुमान्यः ॥
सदैवार्य-मर्यादया योऽस्ति युक्तः ।
स देशः सदा वर्धतां भारताख्यः ॥
वीर धीर बहु धन्य पुरुष जिसमें रहते हैं ।
सभी लोग जिसको सुरम्य पूजित कहते हैं ॥
आर्यजनों की मर्यादा में जो है तत्पर ।
सदा बढ़े वह भारत जग में उन्नति पथ-पर ॥

[३]

पुराणेतिहासादिषु ख्यातिमान् यः ।
गुणानां गणे सर्वथा प्रीतिमान् यः ॥
महादुर्धरे संगरे नीतिमान् यः ।
स देशः सदा वर्धतां भारताख्यः ॥
जो पुराण-इतिहास आदि में अति प्रसिद्ध है ।
गुण-समूह में जिसकी प्रीति सदैव सिद्ध है ॥
नीति न जिसने त्यागी रण में बर्बर बनकर ।
सदा बढ़े वह भारत जग में उन्नति-पथ पर ॥

[४]

समुद्धूयते यस्य कीर्त्तेः पताका ।
बलाकेव रम्या प्रकामं दिशासु ॥
निशा भान्ति यस्येन्दुभासा हसन्त्यो ।
स देशः सदा वर्धतां भारताख्यः ॥
अखिल विश्व में उड़ती जिसकी कीर्ति-पताका ।
उड़ती जैसे नभ में सुन्दर श्वेत बलाका ॥
हंसतीं नित्य निशायें जिसकी ज्योत्स्ना से भर ।
सदा बढ़े वह भारत जग में उन्नति-पथ पर ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[५]

वसन्ते जना यस्य भूमौ वसन्तः ।
लभन्ते रसं सौरभं मोदमानाः ॥

पिकानामनल्पैः कलैर्हृष्यमाणाः ।
स देशः सदा वर्धतां भारताख्यः ॥

ऋतु वसन्त में जिसमें रहने वाले मानव ।
होते पाकर अति प्रसन्न रस सौरभ अभिनव ॥

हर्षित होते और मधुर कोकिल–रव सुनकर ।
सदा बढ़े वह भारत जग में उन्नति-पथ पर ॥

[६]

हिमाद्रिः स्वयं यस्य रक्षां करोति ।
स्वकीयैः समुत्तुङ्गभङ्गैः सुशृङ्गैः ॥

समुद्रोर्मि–प्रक्षालितौ यस्य पादौ ।
स देशः सदा वर्धतां भारताख्यः ॥

अपने ऊंचे–ऊंचे सुन्दर शिखर उठाकर ।
स्वयं हिमालय जिसकी रक्षा में है तत्पर ॥

धोता जिसके चरण तरङ्गों से नित सागर ।
सदा बढ़े वह भारत जग में उन्नति-पथ पर ॥

[७]

लसन्त्यो लताः पुष्पिता यत्प्रदेशे ।
अधःकृत्य शोभाकरान् रत्न-हारान् ॥

समालिङ्गनं यस्य कुर्वन्ति नित्यम् ।
स देशः सदा वर्धतां भारताख्यः ॥

हंसतीं पुष्पलतायें जिस के भू-प्रदेश पर ।
रत्नजडित हारों की शोभा को नीचा कर ॥

आलिङ्गन करतीं जिसका निर्बाध निरन्तर ।
सदा बढ़े वह भारत जग में उन्नति-पथ पर ॥

[८]

वसन्तेषु भृङ्गाः कुरङ्गा विहङ्गाः ।
भ्रमन्तः स्वलीला-विलासं किरन्तः ॥

समृद्धिं विशेषां प्रकुर्वन्ति यस्य ।
स देशः सदा वर्धतां भारताख्यः ॥

ऋतु वसन्त में भृङ्ग, कुरङ्ग, विहङ्ग घूमते ।
निजलीला-विलास में भरकर जिसे चूमते ॥

करते जिसको नव समृद्धि से वे समृद्धतर ।
सदा बढ़े वह भारत जग में उन्नति पथ पर ॥

[९]

विदेशीयविज्ञा जना यस्य कीर्तिम् ।
पुरा ज्ञान–विज्ञानयो वर्णयन्ति ॥

सुवृद्धः, सुसिद्धः, समृद्धः, प्रसिद्धः ।
स देशः सदा वर्धतां भारताख्यः ॥

पुरा ज्ञान–विज्ञान-विषय में मन्त्रमुग्ध बन ।
गाते जिसकी कीर्ति विदेशी—वर्य विज्ञ जन ॥

नवनिधियों से ऋद्ध, सिद्ध क्षितिपर प्रसिद्धतर ।
सदा बढ़े वह भारत जग में उन्नति-पथ पर ॥

[१०]

चतुःषष्टि-विद्यासु यो लब्धकीर्तिः ।
समस्तासु लेभे यशो यः कलासु ॥

उदारः सदातिथ्यधर्मे सदैव ।
स देशः सदा वर्धतां भारताख्यः ॥

चौंसठ विद्याओं में जिसको कीर्ति मिली है ।
सभी कलाओं में जिसकी यशबेलि खिली है ॥

रखता जो आतिथ्य-धर्म में सतत समादर ।
सदा बढ़े वह भारत जग में उन्नति-पथ–पर ॥

□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छात्र-जीवनं राष्ट्रस्य आधारः

□ सन्त लच्छराम–रामस्नेही "मधुप" एम० ए०
पूर्वार्द्ध (संस्कृत)

छात्र-जीवन मतीव सुखकरं भवति । अस्मिन्नेव जीवने आगामि-सुखस्य आधार-भूमिः स्थिता । इदं जीवनं दर्पणवत् निर्मलं निश्छलं च भवति । यथा शिशुः सर्व-प्रकारेण प्रसन्नः चिन्ता-निर्मुक्तः स्वात्मलीनः परमानन्द-युक्तः भवति, तथैव छात्रोऽपि विद्याध्ययनतत्परः स्वतंत्र-जीविकाजाल-निर्मुक्तः स्वस्थश्च भवति । छात्राणां जीवने भ्रमणं, शयनं, वार्ता, क्रीडा इत्यादयः सर्वेऽपि भावाः विनोद-युक्ताः सुखकारिणश्च भवन्ति । शास्त्र-सुधा-पानेन तृप्तान् छात्रान् न काचित् चिन्ता बाधते । ते सदैव श्रवणं, मननं, निदिध्यासनञ्च कुर्वन्ति । प्रायः विचार-शीलैः मर्मज्ञैः विद्वद्भिः इदं कथ्यते, यत् छात्रेषु इमानि तत्त्वानि आवश्यकानि । यथा—"काक-चेष्टा बक-ध्यानं श्वान-निद्रा तथैव च, अल्पाहारी गृह-त्यागी विद्यार्थी पंचल-क्षणः ।।" यदि एतल्लक्षणं स्वजीवने छात्रः अनुसरेत्, तर्हि तस्य जीवनं सफलं भवेत अन्यथा अनुपयुक्तं स्यात् । यतो हि छात्राणां जीवनं संयमस्य जीवनमस्ति । छात्राः तपस्विनः भवन्ति । ते यावद्विद्याध्ययनं कुर्वन्ति तावत् तपः कुर्वन्ति । अत एवोक्तम् "छात्राणामध्ययनं तपः" इति । संयमेन विना विश्वामित्रस्य इव तस्य तपोभंगः भवति । विषय-वासना-रूपिणी मेनका असंयमिनां छात्राणां पतनं करोति । अतः भोजने, शयने, श्रवणे, दर्शने, सर्वत्र संयमः कार्यश्छात्रैः ।

सरलेन सौजन्य-युक्तेन व्यवहारेण गुरवः पितरः अन्ये च ज्येष्ठाः वन्दनीया जनाः प्रसन्ना भूत्वा छात्रेभ्यः सद्विद्यां प्रयच्छन्ति । आलस्यं तु छात्रैः कदाचिन्न करणीयम् । छात्र-जीवने तु सुखस्य कल्पनापि हानि-युक्ता । विद्या महता तपसा साध्यते । अतः—'सुखार्थिनः कुतो विद्या, विद्यार्थिनः कुतः सुखम्" इति सत्यमेवोक्तम् । गुरुभक्तिः, श्रद्धा, अनुशासनञ्च छात्रेषु परमावश्यकम् । छात्राणां श्रद्धया व्यवहारेण च प्रीता गुरवः तेभ्यः "सर्वे वेदास्ते प्रतिभासन्ताम्" इत्येवमाशिषं ददति । एतादृशाः गुरुभक्ताश् छात्राः "गुरुर्ब्रह्मा गुरु र्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः" इति गुरु-विषये श्रद्दधानाः स्वजीवनं यापयन्ति । त एव गुरोराशिषा महान्ति कार्याणि कुर्वन्ति । महाराजः छत्रपतिः शिवबीरः गुरोः समर्थ-रामदासस्या-शिषमवलम्ब्य स्वराष्ट्र-निर्माणं कृतवान् ।

गुण-ग्राहितापि छात्रेषु परमावश्यकी । ते यत्र कुत्रापि गुणान् पश्येयुः तान् ग्रहीतुं सततं प्रयतेयुः । यथा मधु-मक्षिका क्षणशः पुष्पेभ्यः बिन्दुशः रसं सचिन्वन्ति तथैव छात्रा अपि विद्यां संचिनुयुः । उक्तमपि—"क्षणशः कणशश्चैव विद्यामर्थञ्च चिन्तयेत् ।" गर्व-राहित्यं, मितव्ययिता, शुचिता, इत्यादयोऽन्येऽपि छात्राणां गुणाः सन्ति । उक्त-गुण-विशिष्टाः समुन्नतिप्रवणाः छात्राः सर्वदा विद्यानां पारमवलोकयितुं प्रभवन्ति ततः परं ते राष्ट्रनिर्मातारो भवितुमर्हन्ति ।

वस्तुतः छात्राणां जीवनं यदि संयतं, निर्मलञ्च भवेत् तर्हि राष्ट्रस्योन्नतिः ध्रुवा । यतः त एव भाविनः कर्णधाराः अस्माकं देशस्य गण्यन्ते । अतः सत्यमेव जीवने सुखस्याधारभूमिः छात्रजीवनम् ।

□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"संस्कृत-भाषा भारतीय-गौरवस्य प्रतीकम् अस्ति"

□ मौजीलाल मीना एम. एः [संस्कृत]

संस्कृत-भाषा सर्वासु भाषासु प्राचीनतमा सर्वोत्तमा सहित्य-संयुक्ता चास्ति। संस्कृत-भाषाया आवश्यकता अधुनापि एतस्मात् कारणाद् अस्ति यत् एषैव सर्वासां भाषाणां उत्पत्ति-स्थानं अस्ति। सर्वभाषाणां मूलरूप-ज्ञानार्थं एतस्या आवश्यकता भवति। प्राचीनकाले इयम् भाषा लोक-प्रचलित-भाषा आसीत्। इयम् सर्वासु आधुनिकासु आर्यभाषासु सरला सुबोधा चास्ति।

संस्कृत-भाषायाः संसारस्य सुदूरदेशेष्वपि व्यापकः प्रसारः अस्ति। इयम् विश्वस्य अनेकानां भाषाणां उत्पत्ति-मूलम् अस्ति, अतएव विद्वज्जनाः "संस्कृत-भाषा सर्व-भाषाणां जननी" इति वदन्ति। एकः ग्रीक-विद्वान् इमाम् सहित्यिकदृष्ट्या "समृद्धा अस्ति" इति कथयति। एकः अन्यः जर्मन-देशीयो विद्वान् अकथयत् "संस्कृत-भाषा लैटिन-भाषावत् मृता भाषा नास्ति। अस्या महत्वं प्रकटीकृत्य महात्मागाँधी अस्यै 'भाषा-गंगा" इति नाम अदात्।

संस्कृत भाषायामेव विश्व-साहित्यस्य सर्व प्राचीनग्रन्थाः चत्वारो वेदाः सन्ति, येषां महत्त्वं अद्यापि सर्वोपरि वर्तते। वेदानां व्याख्यानभूता ब्राह्मणग्रन्थाः सन्ति। अध्यात्म-विषय-प्रतिपादिका उपनिषदः सन्ति। यासां महिमा पाश्चात्यैरपि निःसकोचं गीयते। ततश्च भारत-गौरव-भूताः षड्दर्शनग्रन्थाः सन्ति, ये विश्व-साहित्ये अद्यापि सर्वमान्याः सन्ति। महर्षि-वाल्मीकि-कृतं रामायणं, व्यास-कृत महाभारतं इत्येवमादयो ग्रन्थाः संस्कृत-भाषायामेव सन्ति। येषां महत्त्वं निखिल-विद्वद्विदितमस्ति। सर्वप्रथमं स्फुटीभूतस्य कवित्वस्य, प्राकृतिकसौन्दर्यस्य, नीतिशास्त्रस्य च दर्शनं संस्कृतभाषायामेव भवति। कौटिल्य-सदृशः अर्थशास्त्रकारः भास-कालिदास-अश्वघोष-भवभूति-दण्डि-सुबन्धु-बाणभट्टप्रभृतयो महाकाव्यकाराभरत-प्रभृतयो नाट्यकाराश्च संस्कृत भाषायामेव अभवन् येषां जन्मलाभेन न केवलं भारतभूमिरेव अपितु एतत् समस्तं विश्वं धन्यं अस्ति। श्रीमद्भगवद्-गीता, पुराणानि, स्मृति-ग्रन्थाः अन्य-विषयक च सर्वं साहित्य संस्कृतस्य महत्तामं माहात्म्य-मेव उद्घोषयति। वस्तुतः संस्कृत-भाषा भारतस्य प्राण-भूता भाषा अस्ति। भारतीय गौरवस्य रक्षणाय संस्कृत-भाषायाः प्रचारः प्रसारश्च सर्वैरेव कर्तव्यः। इति □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महाकविः श्री हर्षः

□ पी. आर. एच. 'मनोज' एम. ए. प्रथम वर्षस्थ

प्रथितस्य नैषधीय-चरितस्य महाकाव्यस्य प्रणेता महाकविः श्रीहर्षः संस्कृत-साहित्ये सम्माननीय स्थानमधिकरोति । असौ नहि केवलं सर्वोत्कृष्टो महाकविरेवासीत् स प्रकाण्डः पण्डितोऽपि । पाण्डित्य-वैदग्ध्ययोः श्रीहर्षोऽनुपमं निदर्शनमस्ति । यः श्रीहर्षः काव्यकलाया अप्रतिमं शृङ्गारभूतं नैषधीयचरितं काव्यम् अगुम्फयत् स एव पाण्डित्यस्य चूडान्तं निदर्शनरूपं-खण्डन खण्डखाद्यम् अपि अरचयत् ।

कान्य-कुब्जेश्वरो महाराजो जयचन्द्रः श्रीहर्षाय ताम्बूलद्वयं आसनं च समर्प्य सम्मानयति स्म । 'ताम्बूलद्वय मासनं च लभते यः कान्यकुब्जेश्वरात्' इति कृतोल्लेखेन अयं निर्विवादं ईशवीय द्वादश-शतकस्य उत्तरार्धे ख्यातिमातनोत् ।

नैषधीय-चरित-महाकाव्यस्य समीक्षया ज्ञायते यत् काव्यक्षेत्रे भारवेः समयात् या कला-प्रधानताप्लुता शैली प्रवृत्ता तस्याः चरमः प्रकर्षः अस्मिन् महाकाव्ये प्राप्यते । कलापक्षस्य प्राधान्यं भारवेः माघस्य च कवित्वे अपि वर्तते, किन्तु भावपक्षः कलापक्षेण सह न तत्र तथा समाक्रान्तः यथा श्रीहर्षस्य कवित्वे । एतस्मादेव भारतीया आलोचका अघोषयन्—

'तावद्भा भारवे र्भाति यावन्माघस्य नोदयः ।
उदिते नैषधे काव्ये क्व माघः क्व च भारविः ।'

नैषधीय-चरितस्य कथाया मूलस्रोतः महाभारतस्य 'नलोपाख्यानम्' अस्ति । अतिसंक्षिप्तमपि कथा-वस्तु काल्पनिक-परिवर्तनावलम्बेन द्वाविंशतिसर्गात्मक-काव्य रूपेण विपुलं विस्तारं विगाहते । अस्य कवेरिदं वैशिष्ट्यमस्ति यत्तत्र अद्भुतानां कल्पनानां सातिशयं चमत्कारो विद्यते । किमपि वस्तु स्यात् तस्य वर्णने श्रीहर्षो विविधा अद्भुताः कल्पना उदभावयत् । वस्तुतो विषयेऽत्र एतस्य उपमा दुर्लभा विद्यते । दमयन्ती-मुखसौन्दर्यं वर्णयन् स कल्पनामुद्भावयति—

'हृतसारमिवेन्दु—मण्डलं दमयन्ती-वदनाय वेधसा ।
कृतमध्यबिलं विलोक्यते धृतगम्भीर-खनी-खनीलिम ।'

दमयन्ती-देहे कुचद्वयस्य उपयोगिताया विषये कविः कल्पनां करोति—

'अपि तद्वपुषि प्रसर्पतो गमिते कान्तिझरैरगाधताम् ।
स्मर-यौवनयोः खलु द्वयोः प्लवकुम्भौ भवतः कुचावुभौ ।'

अयं कविः उत्प्रेक्षातिशयोक्तिप्रभृतीनां विभिन्नानामलङ्काराणां विन्यासने निपुणः । परमस्य श्लेषस्य समायोजने गभीरः स्नेहः प्रतिभाति । 'पञ्चनली-प्रकरणं' श्लेषालङ्कारस्य विस्मयकरं चित्रमस्ति । सर्वेऽपि श्लोकाः द्वयर्थास्त्र्यर्था वा सन्ति । पाणिग्रहण-समये श्लेषमयी कल्पना कस्य न हृदयमाह्लादयति ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वरस्य पाणिः परघातकौतुकी
वधूकरः पङ्कज-कान्तितस्करः ।
सुराज्ञि तौ तत्र विदर्भमण्डले
ततो निबद्धौ किमु कर्कशैः कुशैः ?

'चेतो नलं कामयते मदीयम्' अत्र अर्थत्रयं सम्भाव्यते:—मम मनः नलं कामयते । मम चेतः लंकां न गच्छति । मम हृदयं अग्निम् इच्छति ।

'का नाम बाला द्विजराज-पाणिग्रहाभिलाषं कथयेदभिज्ञा ।' अत्र भैमी श्लेषचातुर्येण स्वपाणिग्रहणसमीहां उद्भावयन्ती तस्य [नलस्य] दुष्प्राप्यत्वं सूचयति ।

शब्दालङ्काराणामपि मधुरा झङ्कृतिः पदे पदे श्रूयते । ललितपदावल्या निदर्शनं प्रायः समग्रमपि नैषधीयचरितम् अस्ति । दिङ्मात्रमत्र प्रेक्षणीयम्—

'नलिनं मलिनं विवृण्वती
पृषती मस्पृशती तदीक्षणे ।
अपि खंजन-मंजनांचिते,

'मूहूर्तमात्रं भवनिन्दया दयासखाः सखायः स्रवदश्रवो मम ।' कवि-प्रयुक्तां पदावली मधिकृत्यैव 'नैषधे पदलालित्यम्' इति गीयते ।

'धन्यासि वैदर्भि गुणैरुदारैः' एषा भणितिः प्रतीतिमापादयति यदसौ कविः वैदर्भीरीतिमुररीचकार ।

कवेः श्रीहर्षस्य पण्डित्यमपि समुत्कृष्टमासीत् । स विभिन्नेषु शास्त्रेषु भृशं विचक्षणः । नैषधीयचरितं विपश्चितां कृते औषधस्वरूपमस्ति । कविः स्वयमेव भाषते- 'बुधाः सुधामपि न तथा समाद्रियन्ते यथा नैषधीयकथाम् ।' एकत्र स निजमहाकाव्यं 'वार्धक-रोग-नाशकं रसायन मौषधम्' कथयति । श्री हर्षः महादार्शनिकः महावैय्याकरण श्चेति । विविध-विपरीत-गुणानां-समन्वयाद् निखिलानन्यान् कवीन् अतिशेते ।

"क्रियेत चेत् साधुविभक्तिचिन्ता व्यक्तिस्तदा सा प्रथमभिधेया । सा स्वौजसां साधयितुं विलासैः...."

इत्यत्र 'अपदं न प्रयुञ्जीत' इति तथ्यं प्राकटयत् ।

'हृस्ते तवास्ते द्वयमेकशेषः'

इति वचनं तस्य वैय्याकरणत्वं प्रख्यापयति ।

'नास्ति जन्यजनक-व्यपदेशः

इति सांख्याभिमतं सत्कार्यवादं उद्घोषयति
हंसः स्वशरीरस्य शुभ्रतां वाचश्च मधुरतां' प्रापेति वर्णनाय

'अन्नानुरूपां तनुरूपवृद्धिं
कार्यं निदानाद्धि गुणानधीते ।

इति 'कारणगुणपूर्वकः कार्यगुणः' इति नैय्यायिकसिद्धान्तं ज्ञापयति ।

'प्रापुस्तमेकं निरुपारव्यरूपं ब्रह्मैव चेतांसि यतव्रतानाम्' अत्र वेदान्तसिद्धान्तस्य मार्मिकं निरूपणमस्ति । सप्तदशे सर्गे विस्तरशः चार्वाकसिद्धान्तोद्भावनं प्रेक्ष्यते ।

बहुषु स्थलेषु पाण्डित्य-प्रदर्शनात् हेतोः श्रीहर्षस्य काव्यं क्लिष्टतां भजते । परं स स्वयमेव ज्ञानपूर्वकं क्लिष्टतामिमां समाहरत् । 'पण्डितम्मन्यमाना दुःशीला जना अस्य काव्यस्यार्थं हठेन ज्ञातुं चापल्यं न कुर्युः, अतः प्रज्ञापुरःसरं क्वचित् दुरूहा ग्रन्थयः ग्रथिताः । परं ये जनाः श्रद्धापूर्वकं गुरुं प्रसादयन्तः ग्रन्थीन् समादधति त एव रसोर्मिमज्जन-सुखं प्राप्तुं समर्थाः ।'

एतदेव समीक्ष्य नैषधं विदुषां वस्तु-जातम् । फलतः तस्य विषये समालोचकाः 'नैषधं विद्वदौषधम्' इत्यादिरूपान् उद्गारान् प्रवचन्ति ।

महाकविरसौ कल्पनागौरवात् औचित्यविचारचातुर्याद् लघुकथाविपुलतापादनात् सहृदयाभिरूप-मनोमोदनात् महाकवीनां बृहत्त्रय्यां श्रेष्ठोऽस्ति । 'उदिते नैषधे काव्ये क्व माघः क्व च भारविः ।' इति उक्तिः सत्याप्यते

□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

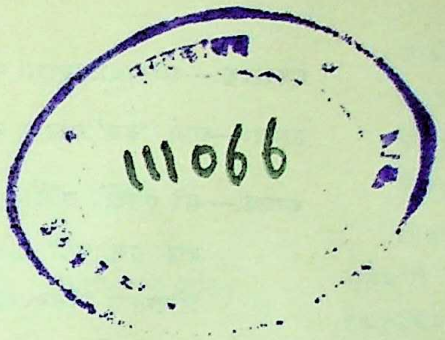

कालोऽस्ति नायं शयनस्य मान्याः !

□ आकाश-वाण्याः सङ्कलितम्

अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा
हिमालयो नाम नगाधिराजः ।
स एव सम्बोधयतीह वीराः !
कालोऽस्ति नायं शयनस्य मान्याः !

अथ प्रभापूर्णा मनन्तकीर्तिं
सदार्य-वर्यैं रुपसेवितं वै
स्वदेश मार्याः ! परिरक्षतेमं
कालोऽस्ति नायं शयनस्य मान्याः !

आङ्ग्ला गता भारतभूमि-भागात्
परन्तु भाषा न गता तदीया ।
खेदो महाँस्तापयतीह चेतः
कालोऽस्ति नायं शयनस्य मान्याः !

ब्रूते विपन्ना सुरभारती सा
कथं वराकैः परिरक्षिता स्याम् ?
बी. ए. परीक्षामधिकृत्य पूर्णा—
विद्यै रविद्यै रधिवेलिताहम् ।

पाश्चात्त्य-संस्कार-विधौ प्रवीणा
ये शब्द-संस्कार-विचारहीनाः
तैः पाठ्यमाना तु विडम्बिता स्याम्
कालोऽस्ति नायं शयितुं वयस्याः !

दृष्ट्वा दशामद्य महादरिद्रां
गोर्वाण-वाणी—समुपासकानाम् ।
वक्तुं बलात् प्रोद्यतते मनोऽद्य
कालोऽस्ति नायं शयनस्य मान्याः !

पतिव्रता स्त्री विरला विभाति
व्यापार-वृत्तौ छलनं प्रवृत्तम्
गता विनाशं वटवः सुयन्त्रिताः
कालोऽस्ति नायं शयितुं वयस्याः !

इदं शरीरं नहि भोग भुग्भ्यो
भोगान् लभन्ते पशुक्षिणोऽपि
मोक्षेच्छवः सन्तु विहाय भोगान्
कालोऽस्ति नायं शयितुं वयस्याः ॥

□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रस-मञ्जरी

□ सरिता भारद्वाज (एम. ए. उत्तरार्ध)

अध्यापकः—वत्स यादव ! संपाठः पठ्यताम्

यादवः—[पठति]

सर्वधर्मान् परित्यज्य
मामेकं शरणं व्रज ।
अहं त्वा सर्व-पापेभ्यो
मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥

अध्यापकः—अस्यार्थोऽवबुद्धो न वा ?

यादवः—आर्य, 'व्रज' शब्दस्य कोऽर्थः ?

माधवः—अरे एतदपि न जानासि ?

वज व्रज गतौ इति समाम्नायते । अत एव लोडन्तस्य मध्यमपुरुषैकवचनस्य व्रज शब्दस्यार्थः 'गच्छ' इति ।

अध्यापकः—किमिति गच्छे त्यनुक्त्वा व्रजेति भगवतोक्तम् ?

माधवः—आर्य, न खलु विभावयामि । कृपया कथ्यताम् ।

अध्यापकः—व्रज–शब्देन गोपीजन-वल्लभस्य श्रीकृष्णस्य व्रज-विहारः सूच्यते । अत एव व्रजविहारिणं नन्दनन्दनं गोपीवल्लभं मुरलीधरं मां भज इति विवक्षितम् । अत एवान्यान् शब्दान् परित्यज्य 'व्रज' इति प्रयुक्तं व्रजविहारिणा ।

सुबोधः—आर्य ! अत्र गच्छ-शब्दस्य प्रयोगः सर्वथा न सम्भवति छन्दोभङ्गप्रसङ्गात् । यत्र छन्दसा न विरोध आचर्यते तत्र 'गच्छ' इत्येव प्रयुज्यते भगवता । तथाहि 'मामेकं शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत ।' इत्यत्र 'गच्छ' इत्येवोपात्तं न 'व्रज' इति तत्कथं भवद्भि विवृतं तात्पर्यं व्रज-शब्दस्य सम्भवेत् ?

अध्यापकः—अरे वृषभ, अरे रासभ, अरे शरभ, भगवतः पुरस्तात् को वा छन्दोभङ्गः ? यस्य च्छन्दसा जगदिदं विवर्तते स छन्दोभङ्गभिया न जातूद्विज्यते, न वा छन्दोभङ्गदोषेण लिप्यते ?

□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारती कालिदासस्य

□ किशनलाल एम. ए. उत्तरार्ध (संस्कृत)

कस्य वा सहृदयस्य न विदितः शाकुन्तलगतः प्रथमश्लोकः—

'या सृष्टिः स्रष्टुराद्या वहति विधिहुतं या हविर्या च होत्री ।
ये द्वे कालं विधत्तः श्रुतिविषयगुणा या स्थिता व्याप्य विश्वम् ।
यामाहुः सर्वबीजप्रकृतिरिति यया प्राणिनः प्राणवन्तः
प्रत्यक्षाभिः प्रपन्नस्तनुभिरवतु वस्ताभिरष्टाभिरीशः ।।'

अत्र स्रष्टुराद्या सृष्टिरित्यनेन भगवतो जलरूपा तनु र्बोध्यते इत्यत्र समेषामैकमत्यम् । नव्येन केनचन व्याख्यात्रोच्यते—उपनिषदां पर्यालोचनेनाकाश एव ब्रह्मणः प्रथमा सृष्टिरिति प्रतीयते । अत एव स्रष्टुराद्या सृष्टिरित्यत्र स्रष्टुरपि पूर्ववर्तिनी स्रष्टि रित्यर्थः कल्पयितव्य इति । "या सलिलरूपा तनुः स्रष्टुः प्रजापतेः ब्रह्मणः आद्या आदौ भवा अर्थतः ब्रह्मणः प्रागेव वर्तमानासीत्, अद्भ्य एव ब्रह्माण्डस्य ब्रह्मणश्च जातत्वात् । तथा च मनुः—

'तदण्डमभवद्धैमं सहस्रांशुसमप्रभम्
तस्मिन् जज्ञे स्वयं ब्रह्मा सर्वलोकपितामहः ।" इति ।

एतत्सर्वमविचारितरमणीयमिति प्रतिभाति । सर्वपथीनाः खलु कवयः तैर्यत्किमपि मतमवलम्ब्य काव्यं विरच्यते । 'अप एव ससर्जादौ' इति मनुवचने अप्शब्दस्य सृज्धातोश्च सद्भावो विस्पष्टमेव तस्य कालिदासस्योक्तेराकरत्वं प्रमापयति । अन्यत्रापि सलिलस्यैव प्रधानतः संकीर्तनमुपलभ्यते । ऋग्वेदेऽपि श्रूयते—तम आसीत्तमसा गूढमग्रेऽप्रकेतं सलिलं सर्वमा इदमिति । अथर्ववेदेऽपि दृश्यते—आपो अग्रे विश्वमायन् गर्भं दधाना अमृता ऋतज्ञाः (४-२-६) इति । एतन्मूलकमेव मनुवचनम्—

आसीदिदं तमोभूत मप्रज्ञातमलक्षणम् ।
अप्रतर्क्यं मविज्ञेयं प्रसुप्तमिव सर्वतः ।।
ततः स्वयम्भू र्भगवानव्यक्तो व्यञ्जयन्निदम् ।
महाभूतादि वृत्तौजाः प्रादुरासीत्तमोनुदः ।।

सोऽभिध्याय शरीरात्स्वात्सिसृक्षुर्विविधाः प्रजाः अप एव ससर्जादौ तासु बीजमवासृजत् [१,५,६,८] अथर्ववेदेऽप्याम्नातम्—आपो वत्सं जनयन्ती र्गर्भं मग्रे समैरयन् [४-२-८] इति ।

अत्र भाष्यकृद्भिरुक्तम्—ईश्वरेण प्रथमसृष्टा आप इत्यादि ।

अत्राद्याशब्देन श्रेष्ठत्वमपि प्रतिपादयितुमिष्यते । वारिणश्च श्रैष्ठ्यं सूरीणां तन्त्रकृताञ्चाभीष्टम् । तथा च नैषधे श्रीहर्षः—

'आपो वहन्तीह हि लोकयात्रां
यथा न भूतानि तथावरा णि ।'

यास्काचार्योऽपि निरुक्तवान्—'वारि कस्मात् वृणोतेः, व्रीणातेर्वा तत्पवित्रतया लोकैर्व्रियते । संविभक्तोऽपि श्रेष्ठो भवतीति वृङ् संभक्तौ, संविभजते भूतानि वारीति ।' एकत्र काव्यमीमांसायां राजशेखरोऽपि वारिपुंर मणी शब्दानां व्याकृति-व्याहारावसरे गदितवान् 'न केवलं पुमान् पुनाति रमण्यपि रमयन्ती पुनाति पतिं पुत्रानर्थांश्च । वारि चापि तथा । 'आपः पवित्रं प्रथमं पृथिव्यामपां परं पावनमत्र मन्त्राः ।

वनानि वारयति पुनाति तेषां प्राशस्त्यमापादयति स्वपदसं-चारेणेति वनवारीति संज्ञापि राघारमणस्य अन्वर्थतामभिधत्ते ।

यवनदार्शनिकेनापि केनचिदुक्तम्—
'अरिस्टों में हद्र'—वाः श्रेष्ठं सर्वभूतेषु ।

अत एव साम्प्रदायिकं व्याख्यानमेव सुरुचिकरम् ।

□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

76235
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

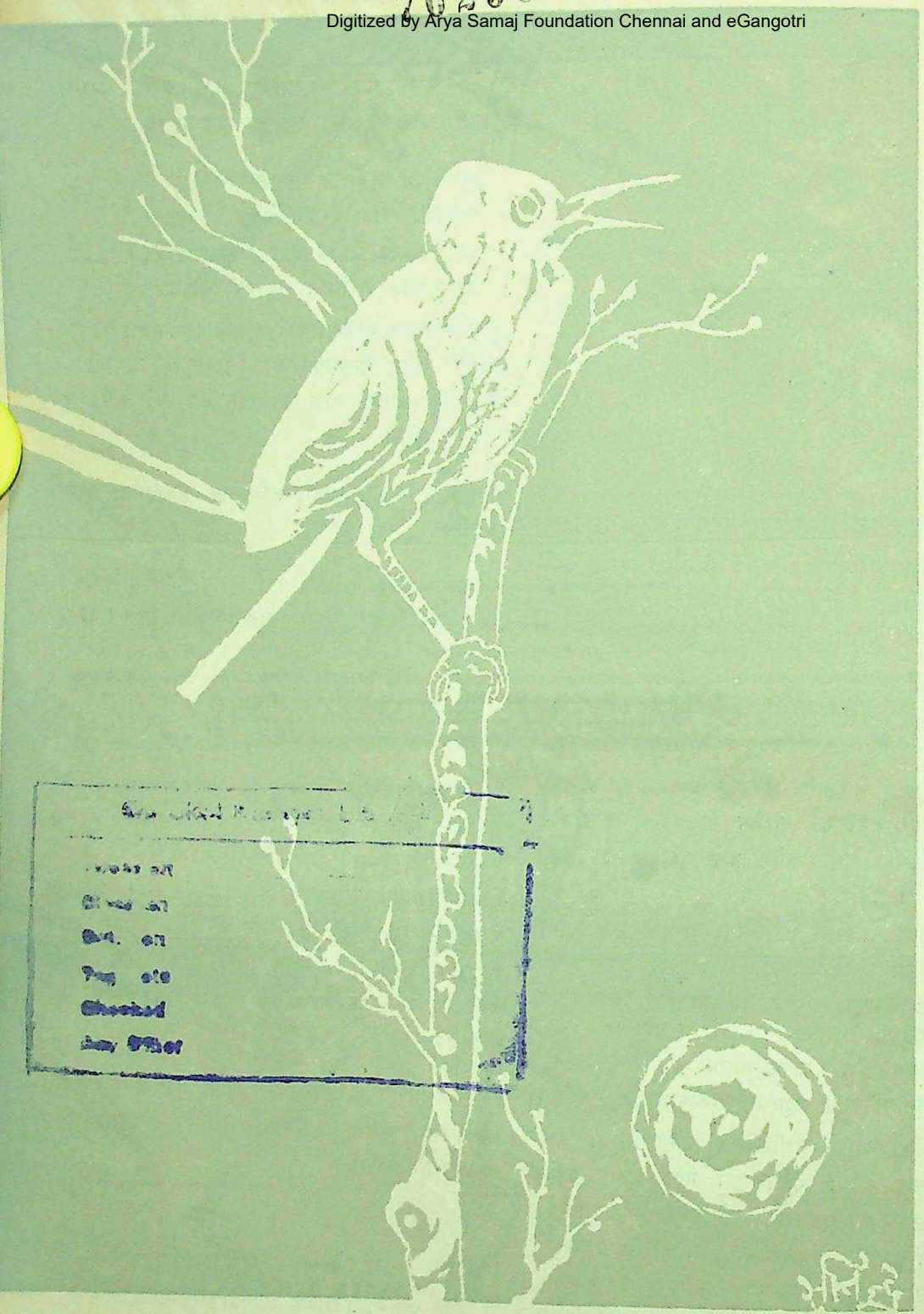

प्रभात

प्रमोद कुलश्रेष्ठ एम. ए. (पूर्वार्द्ध) चित्रकला

सामने वाले पृष्ठ पर : 'चक्र' : रविन्द्र चित्र [illegible] चित्रकला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रजि० नं० 7333/63

मैं क्या हूं ?

पुराना प्रश्न है—मैं क्या हूं ?—यह प्रश्न धर्म ने किया है, तर्क ने किया है, और विज्ञान ने भी किया है। उपनिषद् में आत्मा को 'प्रतिबोविदितम्' कहा है; कोई बोध हो, उसमें बोध वाले का बोध साथ लगा रहता है। मैं देखता हूं—इसमें देखने के साथ 'मैं' का भाव भी है। यह वृक्ष है—मैं न होऊं तो वृक्ष के होने की साक्षी क्या ? सब साक्षियों में अपनी साक्षी का सहभाव है। प्रत्येक चेष्टा अपनी चेष्टा होती है। प्रत्येक प्रत्यय (Cognition) अपना प्रत्यय (Cognition) होता है। इसी अपना वा आप को संस्कृत में 'आत्मा' कहते हैं।

—चमूपति

111066

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

3/63

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

1999-2000

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri